अविपुंज

2022

पन्द्रहवां अंक

भा.कृ.अनु.प.

केन्द्रीय भेड़ एवं ऊन अनुसंधान संस्थान

अविकानगर - 304 501 (राजस्थान)

RAMA RAJYA
MODI RAJYA
2021
December 12

अविपुंज

हिंदी पत्रिका

पन्द्रहवां अंक

2022

भा.कृ.अनु.प–केन्द्रीय भेड़ एवं ऊन अनुसंधान संस्थान
अविकानगर (वाया–जयपुर) राजस्थान–304501

संरक्षक एवं प्रकाशक

डॉ. अरूण कुमार तोमर
निदेशक
भा.कृ.अ.प., केन्द्रीय भेड़ एवं ऊन अनुसंधान संस्थान, अविकानगर

परामर्श मंडल

डॉ. एस. सी. शर्मा, प्रधान वैज्ञानिक
श्री इन्द्र भूषण कुमार, मुख्य प्रशासनिक अधिकारी

मुख्य संपादक

डॉ. अजय कुमार, प्रधान वैज्ञानिक

सह–संपादक

डॉ. राजीव कुमार, वरिष्ठ वैज्ञानिक
डॉ. लीला राम गुर्जर, वरिष्ठ वैज्ञानिक
डॉ. अमर सिंह मीना, वरिष्ठ वैज्ञानिक
डॉ. सत्यवीर सिंह डांगी, वैज्ञानिक
डॉ. दुष्यन्त कुमार शर्मा, वैज्ञानिक
श्री जगदीश प्रसाद मीना, प्रभारी राजभाषा

संपर्क सूत्र
प्रभारी, राजभाषा प्रकोष्ठ

–: केवल विभागीय उपयोग हेतु :–

नोट : पत्रिका में प्रकाशित रचनाओं में व्यक्त विचार लेखकों के निजी हैं, संस्थान अथवा संपादक मंडल का उनसे सहमत होना आवश्यक नहीं है।

निदेशक की कलम से ...

हमारे देश में किसान आर्थिक गतिविधियों की रीड़ है खेती व पशुपालन उसके दो समांतर व्यवसाय है और दोनों ही उपक्रम के सहयोग से वह अपने परिवार व देश का उदर पोषित करते हुए अपना जीविकोपार्जन करता है। पशु पालन में भेड़ एक महत्वपूर्ण पशुधन प्रजाति है लघुरोमन्थी भेड़ को पाँच सितारा पशु (मांस, ऊन, दूध, त्वचा और खाद प्रदान करने के) साथ–साथ इसे ए.टी.एम. के रूप में भी जाना जाता है। क्योंकि भेड़–पालक अपनी घरेलू आवश्यकताओं को आपातकालीन समय में भेड़ को जब चाहे तब बेच कर पूरा कर सकता है। 20वीं पशुधन जनगण ाना के अनुसार 2018 में कुल भेड़ आबादी 74 मिलियन थी। वर्ष 2021–22 में कुल मांस उत्पादन (9.29 मिलियन टन) में भेड़ का योगदान 960 मिलियन किलोग्राम (10.33%) और 33.0 मिलियन किलोग्राम ऊन था। 2050 तक मानव आबादी की बढ़ती मांग को पूरा करने के लिए देश में लगभग 1408 मिलियन किलोग्राम मटन (मांस) की आवश्यकता होगी।

देश के अधिकतम शुष्क एवं अर्ध–शुष्क क्षेत्रों में पशुपालन में विशेष रूप से भेड़ पालन आजीविका का प्रमुख स्त्रोत है। यह हम अच्छी तरह से जानते हैं कि भेड़ पालन का व्यवसाय भूमिहीन लघु एवं सीमांत किसानों तक ही सीमित है जो कि मुख्य रूप से अल्पशिक्षित हैं। इस वर्ग को पशु पालन के क्षेत्र में किए जा रहें नित नए अनुसंधान एवं विकसित तकनीकियों को पशु वैज्ञानिकों के द्वारा लिखे गए लोकप्रिय आलेखों के माध्यम से अवगत कराना भी हमारा परम कर्तव्य बनता है। यह कार्य हिंदी पत्रिका ''अविपुंज'' के माध्यम से बखुबी किया जा सकता है।

मुझे पूर्ण विश्वास है कि संस्थान द्वारा प्रकाशित ''अविपुंज'' का यह 15 वाँ अंक इस दिशा में अपनी महत्वपूर्ण भूमिका निभायेगा।

मैं इस अथक प्रयास के लिए अविपुंज हिंदी पत्रिका के सभी लेखकों एवं संपादक मंडल के सभी सदस्यों को हार्दिक बधाई देता हूँ।

शुभकामनाओं सहित.....

(डॉ. अरूण कुमार तोमर)

संपादकीय

आज यह भी भविष्यवाणी की जा रही है कि वैश्वीकरण के इस दौर में विश्व की दस भाषाएं ही जीवित रहेंगी, जिनमें हिंदी भी एक होगी। वैश्वीकरण एवं बाजारवाद के संदर्भ में हिंदी का महत्व इसलिए बढ़ेगा क्योंकि भविष्य में भारत व्यावसायिक, व्यापारिक एवं वैज्ञानिक दृष्टि से एक विकसित देश होगा। वैश्वीकरण के इस दौर में आज हिंदी विश्व के अधिकतर देशों में पढ़ी लिखी, बोली और समझी जाती है। वस्तुतः प्रत्येक विश्व भाषा के प्रमुख कार्य होते हैं–बोलचाल एवं जनसंपर्क, साहित्य सर्जन, शिक्षा एवं जनसंचार माध्यम, प्रशासनिक कामकाज, व्यावसायिक, वैज्ञानिक एवं तकनीकी ज्ञान की वैश्विक स्तर पर चेतना जगाना/हिंदी आज इस कार्य को बखुबी चरितार्थ करते हुए नजर आ रही है।

एक भाषा के रूप में हिंदी न सिर्फ भारत की पहचान है, बल्कि यह हमारे जीवन मूल्यों, संस्कृति एवं संस्कारों की सच्ची संवाहक, संप्रेषण और परिचायक भी है। बहुत सरल, सहज और सुगम भाषा होने के साथ–साथ हिंदी विश्व की संभवतः सबसे अधिक वैज्ञानिक भाषा भी है, जिसे दुनियाभर में समझने, बोलने और चाहने वाले लोग बहुत बड़ी संख्या में मौजूद हैं।

संस्थान में राजभाषा हिंदी के निरंतर विकास के लिए खासतौर से राजभाषा हिंदी प्रकोष्ठ का गठन किया गया है। राजभाषा हिंदी प्रकोष्ठ इस दिशा में लगातार प्रयासरत रहता है कि संस्थान में अधिक से अधिक कार्य हिंदी में होता रहे। इस कड़ी में राजभाषा प्रकोष्ठ द्वारा प्रत्येक वर्ष 14 सितम्बर को हिंदी दिवस, सप्ताह, पखवाड़ा समारोह का आयोजन किया जाता है, जिसमें संस्थान के वैज्ञानिकों/अधिकारियों एवं कर्मचारियों के लिए विभिन्न हिंदी प्रतियोगिताएं आयोजित की जाती हैं। इसके अतिरिक्त प्रत्येक तिमाही में हिंदी कार्यशाला एवं हिंदी बैठकों का आयोजन करता है एवं भारत सरकार की राजभाषा नीति के अनुसार संस्थान में सौ प्रतिशत राजभाषा हिंदी में कार्यों को कार्यान्वित करने का प्रयास करता है। अविपुंज में शामिल सभी शोध पत्र एवं लोकप्रिय आलेखों में संस्थान एवं कृषि विज्ञान केन्द्र के उन सभी वैज्ञानिकों, तकनीकी अधिकारियों एवं कर्मचारियों का विशेष योगदान उल्लेखनीय है जिनके सहयोग से इस 15 वें अंक का प्रकाशन संभव हुआ है। हम इनके प्रति हार्दिक आभार व्यक्त करते हैं और उनसे आग्रह करते हैं कि वे अपनी शोध संबंधी जानकारी को सरल व सहज हिंदी भाषा में व्यक्त करने का अपना यह प्रयास जारी रखेंगे। संपादक मंडल के लिए विद्वान पाठकों के सुझाव एवं प्रतिक्रियाएं, प्रेरणास्त्रोत व मार्गदर्शन का कार्य करेगीं, ऐसी आशा है।

पत्रिका में प्रकाशित लेख एवं रचनाएं लेखकों के स्वयं के विचार हैं। इस संबंध में प्रकाशक एवं संपादक मंडल किसी भी प्रकार से जिम्मेदार नहीं है। इसमें किसी भी प्रकार का विवाद होने पर लेखक से सीधा संपर्क करेंगे।

(डॉ. अजय कुमार)

विषय – सूची

क्र.सं.	आलेख एवं लेखक का नाम	पृष्ठ सं.
1	राष्ट्रीय पशुधन मिशन में अविशान भेड़पालन ईकाई की भूमिका राजीव कुमार, अमरसिंह मीना, रमेश चन्द्र शर्मा, पी.के. मल्लिक एवं अरूण कुमार	1
2	जीरो बजट प्राकृतिक खेती के माध्यम से हरा चारा उत्पादन आर. एस. गोदारा, अरुण कुमार तोमर, अरविन्द सोनी, एस. एस. डांगी एवं आर. एल. मीना	4
3	राजस्थान के कृषकों की आय दुगुनी करने के उपाय प्रशान्त कुमार मल्लिक, एस.एस. मिश्रा, राजीव कुमार एवं आर. सी. शर्मा	8
4	अर्ध शुष्क क्षेत्रों में उन्नत भेड़ उत्पादन के लिए सामान्य खाद्य घटक एवं उनकी खाद्य नीति सरोबना सरकार, सुरेन्द्र कुमार सांख्यान, रणधीर सिह एवं महेश चन्द मीना	12
5	लधुरोमंथी पशुओं के आहार में खनिज तत्वों का महत्व महेश चन्द मीना, रणधीर सिंह भट्ट, एवं अरूण कुमार तोमर	17
6	रोगाणुरोधी प्रतिरोध (Antimicrobial resistance)– एक वैश्विक चिंता सृष्टि सोनी, जी. जी. सोनावणे, फैज अहमद खान, सी. पी. स्वर्णकार एवं दुष्यंत कुमार शर्मा	21
7	खाद्य उत्पादों की गुणवत्ता युक्त पैकेजिंग प्रणाली अरविन्द सोनी	26
8	ऊन समिश्रित वस्त्र निर्माण हेतु कृषि अवशेष गन्ने की खोई से रेशों का निष्कर्षण प्रतिष्ठा वर्मा, अजय कुमार, नीलम एम. रोज, विनोद कदम एवं सरोज यादव	30
9	बकरी प्रजाति के विशिष्ठ रेशें सीको जोस, अजय कुमार एवं एल एमय्यपन	34
10	पशुओ में पोषक तत्वों का महत्त्व एवं कार्य पवन कुमार माहोरए एल.आर. गुर्जर एवं रंगलाल मीणा	39
11	असिंचित ज्वार–बाजरे में सुखाशमन के लिए उपयोगी शस्य क्रियाएं रंग लाल मीना, बनवारी लाल, सरोबना सरकार, लीलाराम गुर्जर, सुरेश चन्द्र शर्मा एवं अरूण कुमार तोमर	43
12	भेड़ बकरी और स्टाल फीडिंग पवन कुमार माहौर	51
13	पौष्टीक हरा चारा : मक्खन घास रामेश्वर प्रसाद चतुर्वेदी एवं डॉ सुरेश चंद्र शर्मा	53
14	हाइड्रोपोनिक्स : वर्ष भर पशुओं के लिये हरे चारे विकल्प डॉ सुरेश चंद्र शर्मा, तरूण कुमार जैन एवं डॉ रंगलाल मीणा	57

क्र.सं.	आलेख एवं लेखक का नाम	पृष्ठ सं.
15	अजोला : एक परिपूर्ण पूरक पशु आहार तरूण कुमार जैन, डॉ सुरेश चंद्र शर्मा और रामेश्वर प्रसाद चतुर्वेदी	62
16	मूगंफली की फसल में अधिक पैदावार लेने के लिए रोग एवं नियंत्रण के उपाय जे. पी. बैरवा, एस. सी. शर्मा एवं अरूण कुमार तोमर	68
17	गद्दी जनजाति की सामाजिक एवं व्यवसायिक गतिविधियाँ रजनी चौधरी और अब्दुल रहीम	70
18	बकरी पालन : आर्थिक उन्नति की राह डॉ. अतुल शंकर अरोड़ा	75
19	किसानों एवं पशुपालकों के लिए सहकारी समितियों का महत्व एवं उनकी कार्यप्रणाली एल.आर. गुर्जर एवं रंगलाल मीणा	78
20	हिंदी वैश्विक भाषा बनने की ओर अग्रसर जे0 पी0 मीना	83
21	संस्थान में राजभाषा कार्यान्वयन संबंधी गतिविधियाँ जे0 पी0 मीना	86

राष्ट्रीय पशुधन मिशन में अविशान भेड़पालन ईकाई की भूमिका

राजीव कुमार, अमरसिंह मीना, रमेश चन्द्र शर्मा, पी.के. मल्लिक एवं अरूण कुमार

भारत सरकार कृषि एवं पशुंपालन के क्षेत्र में आधुनिक तकनीकों का समावेश करके रोजगार के नये अवसर देश की युवा आबादी को उपलब्ध कराना चाहती है। हमारे स्वर्गीय प्रधानमंत्री लाल बहादुर शास्त्री जी का नारा "जय जवान–जय किसान" देश में कोरोना माहामारी एवं वर्तमान मे रूस–युक्रेन युद्ध के समय बहुत ज्यादा प्रासंगिक हुआ है। विश्व में बढ़ते ग्लोबल प्रतिस्पर्द्धा बाजार में सैनिकों और किसानों के कंधों पर देश की रक्षा एवं भोजन उपलब्ध करने का जिम्मा है। बदलते जलवायु परिरिथतियों, मंहगाई, शीतयुद्ध, उभरती नयी माहामारी एवं प्राकृतिक आपदाओं में मुकाबला करने के लिए किसी भी देश की तरक्की की गारंटी सैनिकों एवं किसानों पर निर्भर करती है। वर्तमान भारत में बढ़ते शहरीकरण के बाद भी देश के ज्यादातर लोग गाँवों में निवास करते हैं और कृषि एवं पशुपालन के क्षेत्र में 58 प्रतिशत से ज्यादा भारतीय प्रत्यक्ष तौर पर आजीविका के लिए निर्भर हैं। उपज को बेहतर बनाने और किसानों का काम सरल–सुगम बनाने वाली तकनीकों को एग्रोटेक कहा जाता है। देश में खेती एवं पशुपालन के क्षेत्र में आधुनिक प्रौद्योगिकी के इस्तेमाल से प्रत्येक वर्ष नये–नये एग्रीटेक का जन्म हो रहा है। बीते एक दशक में भारत में एग्रीटेक में कई गुना वृद्धि हुई है। उदाहरण स्वरूप पशुपालन या कैटल फार्मिंग में भारत सरकार ने पशुपालन व्यवसाय को एग्रीटेक में बदलकर देश की आबादी को रोजगार उपलब्ध कराने के लिए अनेक योजनाओं की शुरूआत की है जिसमें राष्ट्रीय पशुधन मिशन (एनएलएम) योजना से ग्रामीण भारतीय आबादी का बहुत ज्यादा ध्यान आकर्शित हुआ है। राष्ट्रीय पशुधन मिशन योजना का उद्देश्य पशुपालन से जुड़े उद्योगों का विकास, गाँवों में ही रोजगार पैदा करना, पशु उत्पादकता को बढ़ाना और मांस, दूध एवं अण्डे की पैदावार में बढ़ोतरी करना शामिल हैं जिसका उद्देश्य देश की घरेलू मांग पूर्ति के बाद पशुपालन उत्पादों के निर्यात को बढ़ावा देना शामिल हैं।

राष्ट्रीय पशुधन मिशन योजना के उद्देश्य :–

1 पशुपालन व्यवसाय को एग्रोटेक के माध्यम से उद्योगों के रूप में विकसित करना।

2 नस्ल सुधार कार्यक्रम से प्रति पशु उत्पादकता को बढ़ाना।

3 मांस, अण्डा, भेड़–बकरी का दूध, ऊन व अन्य पशुजनित प्राकृतिक रेशों और चारे का उत्पादन बढ़ाना।

4 पशुधन बीमा स्कीम को बढ़ावा देकर जोखिम प्रबन्धन के उपायों को बढ़ाना।

5 पशुपालन हेतू गुणवता सुधार के लिए प्रशिक्षण देना।

राष्ट्रीय पशुधन मिशन योजना के तहत पशुधन जैसे भेड़ एवं बकरी की नस्ल विकास कार्यक्रम संचालित किये जा रहे हैं। इसके अन्तर्गत पशुपालन में उद्यमिता विकास और नस्ल सुधार हेतू देश के विभिन्न राज्यों की सरकारों को तेजी से काम करने की आवश्यकता है। अविकानगर संस्थान भी राष्ट्रीय पशुधन मिशन योजना का लाभ किसानों तक पहुचाने के लिए भेड़ एव बकरी के पालन पर उन्नत प्रशिक्षण दे रहा है। इसके अन्तर्गत संस्थान ने वित्तीय वर्ष 2022–23 के फरवरी–मार्च माह में देश के विभिन्न राज्यों/क्षेत्रों के किसानों को प्रशिक्षण देने के क्रम में दो प्रशिक्षण कार्यक्रमों का आयोजन किया गया, और 100 से ज्यादा आवेदक अभी प्रशिक्षण हेतू संस्थान में प्रतीक्षारत है। घटते चरागाह एवं चराई भूमि के कारण अभी संस्थान लोगों को भेड़ व बकरी का पालन स्टॉल फीडिंग पद्धति से करवाने

हेतू लोगों को प्रशिक्षण के माध्यम से दक्ष कर रहा है। संस्थान की पोषण, स्वास्थ्य, प्रजनन, हरे/सूखे चारे का प्रबंधन और पशु प्रजनन आदि से संबन्धित सारी जानकारी प्रशिक्षण के माध्यम से देश के हर कोने के लोगों को उपलब्ध करा रहा है। इसी प्रकार NLM स्कीम के उद्देश्य अनुसार प्रति पशु उत्पादकता बढ़ाने हेतू संस्थान द्वारा विकसित अविशान भेड़ देश के दस से भी ज्यादा राज्यों के लोगों को उपलब्ध करवा चुका है। अविशान एक बहुप्रज भेड़ है, जिससे प्रति ब्यांत में एक से ज्यादा मेमने लिये जा सकते हैं। संस्थान में वर्तमान समय में अविशान भेड़ की मॉग को देखते हुए यह निर्णय लिया हैं कि भारत देश के विभिन्न राज्यों में सरकारी संस्थाओं एवं प्रगतिशील किसानों की पहचान करके अविशान भेड़ की (5+1) या (10+2) की ईकाई अविशान रेवड़ बनाने हेतू दी जावेगी। जिससे मल्टीप्लायर रेवड़ का विकास हो सके। जो भविष्य में संस्थान के वैज्ञानिक भेड़ पालन व्यवसाय को अपने क्षेत्र के लोगों में प्रसार कर सके । इस दिशा में संस्थान ने बहुत सी अविशान भेड़ पालन ईकाईयाँ देश की संस्थाओं और प्रगतिशील किसानों को हर वर्ष दिये जा रहे हैं। जिसकी संस्था व किसान के द्वार पर प्रथम ब्यांत में प्रति पशु उत्पादकता बहुत ही अच्छी हासिल हुई है। ऐसी कुछ ईकाई का विवरण इस लेख में किया जा रहा है।

अविशान भेड़ पालन की संस्था/किसान के द्वारा उत्पादकता :–

भेड़ प्रजनन केन्द्र, फतहेपुर को अविकानगर संस्थान से 8 मार्च 2022 को 10 मादा एवं एक प्रजनक/मेढें (10 फीमेल +1 मेल) की अविशान भेड़ ईकाई शेखावटी क्षेत्र में मल्टीप्लायर के रूप में दिया गया। दस मादा अविशान भेड़ से पहले ही ब्यांत में प्रत्येक 7 मादा भेड़ से दो मेमने (ट्विन लम्ब), प्रत्येक 2 मादा भेड़ से तीन मेमने (ट्रिपलेट लम्ब) और एक मादा भेड़ से एक मेमना प्राप्त हुआ। इसी प्रकार 10 अविशान मेमने देने वाली भेड़ो से प्रथम ब्यांत में फतेहपुर केन्द्र पर कुल 21 मेमने प्राप्त हुए। इस प्रकार राष्ट्रीय पशुधन मिशन स्कीम के उदेश्य "प्रति पशु ज्यादा उत्पादन" अविशान भेड़ से फतेहपुर में प्राप्त हुआ। अर्थात् फतेहपुर में 5 अक्टूम्बर, 2022 को दी गई अविशान भेड़ ईकाई का प्रदर्शन 90 प्रतिशत प्रोलीफिकेसी एवं 2.1 लीटर साइज (अविशान भेड़ की मेमने देने की दर) प्राप्त हुई। जो भविष्य के भेड़पालन व्यवसाय के लिए नई उम्मीद लेकर आई है। संस्थान द्धारा राजस्थान व भारत के अन्य राज्यों की सरकारी संस्थाओं को अविशान भेड़ पालन ईकाई (5+1 या 10+2) दी जा रही है। जिससे संबंधित क्षेत्र की माँग को स्थानीय स्तर पर ही पूरा किया जा सके। फरवरी, 2023 में भी अविकानगर संस्थान ने पंजाब की वेटनरी विश्वविद्यालय, लुधियाना को भी मल्टीप्लायर केन्द्र के रूप में 9 फीमेल व 2 अविशान मेढें की एक यूनिट दी गयी है।

प्रगतिशील किसान श्रीमान गंगाराम सेफट ग्राम कालख, पंचायत समिति जोबनेर, जिला– जयपुर (राजस्थान) को भी अविकानगर संस्थान ने 21 जनवरी, 2022 को 3–4 माह के 8 बीनर फीमेल व 2 बीनर मेल दिये गये। जिनका जनवरी 2023 में प्रत्येक पॉच मादा भेड़ से दो मेमने व एक मादा भेड़ से एक मेमना प्रथम ब्यांत में प्राप्त हुआ। इस प्रकार अविशान की ईकाई का 83 प्रतिशत के करीब प्रोलिफिकेसी व 1.83 के करीब लीटर साइज, श्रीमान गंगाराम सेफट के फार्म पर प्राप्त हुआ। इसी तरह प्रगतिशील किसान श्रीमान सुरेन्द्र अवाना ग्राम भैराणा बिचून, तहसिल मौजमाबाद जिला– जयपुर (राजस्थान) को भी अविकानगर संस्थान से 1 जुलाई, 2021 को 5 प्रजनक मादा भेड़ 5 वीनर 3–4 माह की मादा भेड़ और एक प्रजनक मेल की अविशान ईकाई दी गई थी। जिनसे अब तक सभी ब्यांत से 23 से ज्यादा मेमने प्राप्त हुये हैं। प्रगतिशील किसान श्रीमान अवानाजी अविशान का 100 भेड़ों का रेवड़ बनना चाहते हैं। जिनकी अभी फरवरी 2023 में नस्ल सुधार हेतू अविशान का एक प्रजनक मेल दुबारा नई सायर लाइन का दिया गया है। इसी तरह प्रगतिशील अनुसूचित जाति महिला किसान श्रीमति रंजना बिवाल, जमवारामगढ़ जिला –जयपुर (राजस्थान) को

जनवरी 2023 को अविकानगर संस्थान ने 14 अविशान मादा भेड़ व एक प्रजनक मेल दिया गया। जिसमें से श्रीमति रंजना बिवाल के फार्म पर 12 मादा अविशान भेड़ से प्रथम ब्यांत में 26 जीवित मेमने प्राप्त हुये हैं।

इस तरह संस्थान की बहुप्रज अविशान भेड़ ने भारत की विभिन्न राज्यों की संस्थाओं व प्रगतिशील किसानों के फार्मों पर अप्रत्यासित परिणाम दिये हैं जो संस्थान की प्रति पशु ज्यादा उत्पादन की सोच को किसान के द्वार पर सार्थक कर रही हैं। अभी तक अविकानगर संस्थान ने किसानों व संस्थाओं के निवेदन पर 900 से ज्यादा अविशान भेड़ 10 से भी ज्यादा राज्यों को उपलब्ध करवाये हैं। संस्थान किसान की माँग एव दक्षिणी भारत के राज्यों में अविशान भेड़ के जर्मप्लाज्म को पूर्ति करने की भरसक प्रयास कर रहा है। तथा जगह–जगह अविशान भेड़ के मल्टीप्लायर रेवड़ का विकास करने हेतू संस्थाओं व प्रगतिशील किसानों को पहचान कर भेड़पालन ईकाई लगवाई जा रही हैं।

निष्कर्ष

पशुपालन के क्षेत्र में इनोवेटिव तौर–तरीकों का समावेश करके और बडे पैमाने पर ग्रामीण परिवेश में रोजगार के नए विकल्प रचकर एग्रीटेक देश की इकानॉमी में खासा योगदान दे रही है। जैसे–जैसे इसका दायरा बढ़ेगा, यह रिसर्च और डेवलपमेंट से लेकर सेल्स ओर मार्केटिग तक अनेकों क्षेत्रों में उतम गुणवता के रोजगार रचेगी। अविकानगर संस्थान भी भारत सरकार के राष्ट्रीय पशुधन मिशन स्कीम में अपने पशुओं भेड़ों–बकरी एवं खरगोश पालन के माध्यम से अपना योगदान दे रहा है। भारतीय भड़ों की नस्लों, बहुप्रज अविशान भेड़, सिरोही बकरी व बॉयलर/ऊन के लिए खरगोश की अनेकों ईकाई की स्थापना संस्थान हर वर्ष प्रगतिशील फार्मर के फार्म पर कर रहा है। तथा भारतीय राज्यों के किसानों को वर्तमान ग्रामीण परिवेश में वैज्ञानिक तरीके से उन्नत भेड़–बकरी व खरगोश पालन पर प्रशिक्षण आयोजित कर उनका कौशल विकास कर रहा हैं। संस्थान की बहुप्रज अविशान भेड़ राष्ट्रीय पशुधन मिशन स्कीम के अनुसार प्रति पशु ज्यादा उत्पादन दे रही है। संस्थान लगातार देश के भेड़–पालक किसानों तक अपनी तकनीकों को भारत सरकार के विभिन्न योजनाओं (अनुसूचित जनजाति, अनुसूचित जाति व फार्मर फर्स्ट आदि) तथा अपने क्षेत्रीय केन्द्र के माध्यम से उपलब्ध करा रहा है। जो निश्चित ही आने वाले समय में एक अच्छे एग्रीटेक का उदय करेगा तथा पशुधन से किसानों की आय वृद्धि का साधन बनेगा ।

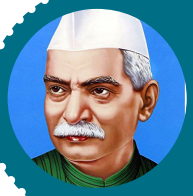

जिस देश को अपनी भाषा, और साहित्य के गौरव का अनुभव नहीं है, वह उन्नत नहीं हो सकता:

डॉ. राजेंद्र प्रसाद

जीरो बजट प्राकृतिक खेती के माध्यम से हरा चारा उत्पादन

आर. एस. गोदारा, अरुण कुमार तोमर, अरविन्द सोनी, एस. एस. डांगी तथा आर. एल. मीना

गहन कृषि पद्धतियों पर आधारित आधुनिक समय की कृषि और पशुपालन को शुरू में उत्पादन बढ़ाने और बढ़ती चारे और खाद्य मांगों को पूरा करने का सबसे अच्छा तरीका माना जाता था। हरित क्रांति ने उच्च उपज देने वाली किस्मों, रासायनिक उर्वरकों और कीटनाशकों के उपयोग को बढ़ावा दिया है जिससे मिट्टी का स्वास्थ्य और लाभकारी रोगाणुओं की आबादी, बुरी तरह प्रभावित हुई उर्वरकों के अविवेकपूर्ण उपयोग ने मिट्टी की गुणवत्ता को कम कर दिया है और मिट्टी की माइक्रोबियल आबादी को कम कर दिया। कीटनाशकों, शाकनाशियों, वृद्धि नियामकों आदि के व्यापक छिड़काव के बहुत सारे दुष्प्रभाव हैं। मिट्टी और पौधों के स्वास्थ्य के बिगड़ने के अलावा, पशु और मनुष्य भी प्रभावित होते हैं, जिससे स्वास्थ्य संबंधी गंभीर समस्याएं होती हैं।

हरा चारा, पशुधन उत्पादन में एक प्रमुख भूमिका निभाता है, इसलिए पशुओं के वृद्धि, उत्पादन और प्रजनन के लिए और पशुओं के स्वास्थ्य को बनाए रखने के लिए अच्छी गुणवत्ता वाले चारे को खिलाना आवश्यक है। गुणवत्तापूर्ण चारा उत्पादन की प्रक्रिया में, प्राकृतिक खेती आधारित चारा उत्पादन में जबरदस्त क्षमता है और इसे लोकप्रिय बनाने के उपायों को बढ़ावा देना होगा।

''प्राकृतिक खेती'' शब्द की अवधारणा मसानोबू फुकुओका (1913–2008) द्वारा की गई थी, जिसे ''कुछ न करें खेती'' के रूप में जाना जाता है क्योंकि उनका मानना था कि किसान सूत्रधार है और वास्तविक कार्य प्रकृति द्वारा किया जा सकता है। यह 5 सिद्धांतों पर आधारित थारू कोई जुताई नहीं, कोई उर्वरक नहीं, कोई कीटनाशक या शाकनाशी नहीं, कोई निराई नहीं और कोई छंटाई नहीं। यह प्रणाली खेत की प्राकृतिक जैव विविधता के साथ काम करती है, जीवित जीवों की जटिलता को प्रोत्साहित करती है जो प्रत्येक विशेष पारिस्थितिक तंत्र को खाद्य पौधों के साथ बढ़ने के लिए आकार देती है।

1990 के दषक में, भारत के श्री सुभाश पालेकर ने फुकुओका की प्राकृतिक खेती को शून्य बजट प्राकृतिक खेती (ZBNF) के रूप में संशोधित किया। शब्द ''शून्य बजट''का अर्थ है ''कोई क्रेडिट या कोई खर्च नहीं'', यानी बिना किसी क्रेडिट के या कृषि इनपुट पर कोई पैसा खर्च न करना। उन्होंने ऑन–फार्म संसाधनों से प्राप्त कम इनपुट उपयोग तकनीकों पर ध्यान केंद्रित किया और जो मिट्टी के स्वास्थ्य के लिए फायदेमंद हैं।

शून्य बजट प्राकृतिक खेती के स्तंभ

1. बीजामृत :

बीजामृत एक प्राचीन, टिकाऊ कृषि तकनीक है। इसका उपयोग बीज, रोपण या किसी रोपण सामग्री के लिए किया जाता है। यह युवा जड़ों को फंगस से बचाने में कारगर है। बीजामृत एक किण्वित माइक्रोबियल घोल है, जिसमें पौधों के लिए लाभकारी रोगाणुओं का भार होता है, और इसका उपयोग बीज उपचार के रूप में किया जाता है। यह उम्मीद की जाती है कि फायदेमंद सूक्ष्म जीव अंकुरित बीजों की जड़ों और पत्तियों को उपनिवेशित करेंगे और पौधों के स्वस्थ विकास में मदद करेंगे।

इनपुट की जरूरत : 5 किलो गाय का गोबर, 5 लीटर गोमूत्र, 50 ग्राम चूना, 1 किलो मेड़ मिट्टी, 20 लीटर पानी **(100 किलो बीज के लिए)**

बीजामृत तैयार करना :

चरण 1: एक कपड़े में 5 किलो गाय का गोबर लें और इसे टेप से बांध दें। कपड़े को 20 लीटर पानी में 12 घंटे तक लटका दें।

चरण 2: साथ ही एक लीटर पानी लेकर उसमें 50 ग्राम चूना मिलाकर रात भर के लिए स्थिर रख दें।

चरण 3: अगली सुबह, लगातार पोटली को पानी में तीन बार निचोड़ें, ताकि गाय के गोबर का सारा सार पानी में मिल जाए।

चरण 4: घोल में तैयार चूने का पानी (एक लीटर½ मिलाये।

चरण 5: पानी के घोल में मुट्ठी भर मिट्टी, लगभग 1 किलो मिट्टी डालें और अच्छी तरह से हिलाएं।

चरण 6: घोल और चूने के पानी में 5 लीटर देसी गोमूत्र डालें और इसे अच्छी तरह से हिलाएं।

बीज उपचार के रूप में प्रयोग : किसी भी चारा फसल के बीजों में बीजामृत डालें; उन्हें लेपित करें, हाथ से मिलाकर; उन्हें अच्छी तरह सुखाकर बुवाई के लिए उपयोग करें। फलीदार बीजों के लिए, जिनमें पतले बीज जो स्वतः लेपित हो सकते हैं, उन्हें बस जल्दी से डुबोएं और उन्हें सूखने दें।

2. जीवामृत :

जीवामृत मिट्टी में सूक्ष्मजीवों की गतिविधि को बढ़ावा देकर बायोस्टिमुलेंट के रूप में कार्य करता है और जब पर्णसमूह पर स्प्रे किया जाता है तो फाइलोस्फेरिक सूक्ष्मजीवों की गतिविधि भी होती है। यह माइक्रोबियल गतिविधि के लिए एक प्राइमर की तरह काम करता है, और देशी केंचुओं की आबादी को भी बढ़ाता है।

इनपुट की जरूरत: 10 किलो ताजा गाय का गोबर, 5–10 लीटर गोमूत्र, 50 ग्राम चूना, 2 किलो गुड़ , 2 किलो दाल का आटा, 1 किलो अदूषित मिट्टी और 200 लीटर पानी।

जीवामृत तैयार करना: सामग्री को 200 लीटर पानी में मिलाकर अच्छी तरह से हिलाना चाहिए। इसके बाद मिश्रण को छाया में 48 घंटे के लिए किण्वन के लिए छोड़ देना चाहिए। इसे लकड़ी के डंडे से दो बार हिलाना चाहिए, एक बार सुबह और एक बार शाम को। यह प्रक्रिया 5–7 दिनों तक जारी रखनी है। तैयार घोल को फसलों पर लगाना चाहिए।

जीवामृत का प्रयोग : इस मिश्रण को हर पखवाड़े में लगाना चाहिए। इसे या तो सीधे फसलों पर छिड़काव करना चाहिए या सिंचाई के पानी में मिलाकर देना चाहिए। फलदार पौधों के मामले में, इसे अलग–अलग पौधों पर लगाया जाना चाहिए। मिश्रण को 15 दिनों तक स्टोर किया जा सकता है।

3. आच्छादन : आच्छादन या मल्चिंग फसल के अवशेषों या कवर फसलों के साथ ऊपरी मिट्टी को ढकने की प्रक्रिया है। मल्चिंग सामग्री सड़ जाती है और ह्यूमस पैदा करती है जो शीर्ष मिट्टी का संरक्षण करती है, मिट्टी की जल धारण क्षमता को बढ़ाती है, वाष्पीकरण हानि को कम करती है, मिट्टी के पोषक तत्वों की स्थिति को समृद्ध करने और खरपतवार के विकास को नियंत्रित करने के अलावा मिट्टी के जीवों को प्रोत्साहित करती है। दो प्रकार के मल्च होते हैं। i) फसल अवशेष मल्च: इसमें कोई भी सूखे वनस्पति, खेत के ठूंठ, जैसे सूखे बायोमॉस अपशिष्ट आदि शामिल हैं। इसका उपयोग मिट्टी को कड़ी धूप, ठंड, बारिश आदि से बचाने के लिए किया जाता है। अवशेषों की मल्चिंग पक्षियों, कीड़ों और जानवरों से बीजों को भी बचाती है. पप) लाइव मल्चरू मुख्य फसल की पंक्तियों में छोटी अवधि वाली फसलों के बहु–फसल/अंतर–फसल पैटर्न विकसित करके लाइव मल्चिंग का अभ्यास किया जाता है। यह सुझाव दिया जाता है कि सभी आवश्यक पोषक तत्व प्रदान करने के लिए पैटर्न एक ही क्षेत्र में एकबीजपत्री और द्विबीजपत्री का होना चाहिए। मोनोकॉट्स, जैसे गेहूं और चावल, पोटाश, फॉस्फेट और सल्फर जैसे पोषक तत्वों की आपूर्ति करते हैं, जबकि डाइकोट्स जैसे दालें नाइट्रोजन–फिक्सिंग पौधे हैं। इस तरह के अभ्यास एक विशेष प्रकार के पौधों के पोषक तत्वों की मांग को कम करते हैं।

4. वापसा : पौधों की वृद्धि और विकास के लिए मिट्टी में अच्छे वातायन की आवश्यकता होती है। वापसा वैकल्पिक खांचो में दोपहर के समय सिंचाई करने की विधि है। जीवामृत और मल्चिंग के प्रयोग से मिट्टी में हवा का संचार सुनिश्चित होता है, जिससे ह्यूमस की मात्रा, पानी की उपलब्धता, जल धारण क्षमता और मिट्टी की संरचना में वृद्धि होती है जो फसल के विकास के लिए आवश्यक है।

जीरो बजट प्राकृतिक खेती से चारा उत्पादन का महत्व :

1. **प्रकृति का संरक्षण –** यह रासायनिक स्प्रे से बचता है और जैव–सूत्रों का उपयोग करता है जो मिट्टी में माइक्रोबियल सामग्री और जल धारण क्षमता में सुधार करता है। यह मिट्टी के प्राकृतिक सूक्ष्म जीवों के विकास को बढ़ावा देता है जो मिट्टी की गुणवत्ता में सुधार करता है और इसलिए चारा फसलों के शानदार विकास को प्रोत्साहित करता है।

2. **सामाजिक आजीविका में सुधार –** उत्पादन की लागत शून्य है क्योंकि किसान कृषि संसाधनों का उपयोग करते हैं और बाहर से इनपुट खरीदने से बचते हैं, इसके अलावा उर्वरकों और कीटनाशकों पर कोई खर्च नहीं होता है। इस प्रकार, खेती की कम लागत, उच्च पैदावार, अंतर–फसलों से आय में वृद्धि और थोड़ा अधिक बिक्री मूल्य अर्थव्यवस्था में सुधार करता है।

3. **स्वास्थ्य जोखिम प्रबंधन –** ये रासायनिक रूप से उपचारित खाद्य पदार्थों के लिए पशुओं के संपर्क को कम करता है और इसलिए रसायनों के उपयोग से जुड़े स्वास्थ्य संबंधी खतरों को कम करता है। यह ऐसे जानवरों से प्राप्त दूध, अंडे, मांस आदि की गुणवत्ता में भी सुधार करता है जो प्राकृतिक रूप से उत्पादित चारे को खाते हैं।

4. **कार्बन प्रच्छादन –** एक टन अवशेषों को जलाने से 400 किलोग्राम कार्बन का उत्पादन होता है, यदि अवशेषों को बनाए रखा जाता है या मिट्टी में शामिल किया जाता है तो यह मिट्टी को कार्बन की आपूर्ति करेगा और अधिक उपज देने में मदद करेगा।

5. **जल की कम खपत** – विभिन्न फसलों के साथ प्रतिकिया करके यह एक–दूसरे की मदद करते हैं और वाष्पीकरण के माध्यम से अनावश्यक जल के नुकसान को रोकने के लिये मिट्टी को कवर करते हैं।

6. **पशुधन स्थिरता** – कृषि प्रणाली में पशुधन का एकीकरण प्राकृतिक खेती में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाता है और पारिस्थितिकी तंत्र के पुनर्चक्रण में मदद करता है। जीवामृत और बीजामृत जैसे इको–फ्रेंडली बायो–इनपुट गाय के गोबर और मूत्र तथा अन्य प्राकृतिक उत्पादों से तैयार किये जाते हैं।

निष्कर्ष : शून्य बजट प्राकृतिक खेती आधारित हरा चारा उत्पादन न केवल पर्यावरणीय स्थिरता सुनिश्चित करता है बल्कि पशुओं और मनुष्यों के स्वास्थ्य को भी सुनिश्चित करता है। इसमें कम निवेश की आवश्यकता होती है जिससे लागत कम होती है और मुनाफा बढ़ता है।

भारतीय सभ्यता की अविरल धारा प्रमुख रूप से हिंदी भाषा से ही जीवंत तथा सुरक्षित रह पाई है:

अमित शाह (गृह मंत्री)

राजस्थान के कृषकों की आय दुगुनी करने के उपाय

प्रशांत कुमार मल्लिक, एस.एस. मिश्रा, राजीव कुमार, आर. सी. शर्मा

फसल उत्पादन एवं पशुपालन के लिए राजस्थान की कृषि–जलवायु अनेक प्रकार की समस्याओं का सामना करती है यद्धपि कृषि क्षेत्र में यहाँ अनेक संभावनाएं भी है। अभी का दौर कृषि एवं उनसे जुड़े व्यवसायों की महत्ता को ध्यान में रखते हुए रणनीतियां बनाकर उन्हें कार्यान्वित करने का है ताकि कृषकों की आय दुगुनी हो सके। अनेक गणनाओं से ज्ञात हुआ है कि राजस्थान के वार्षिक वृद्धि दर में पशुधन से होने वाली आय का हिस्सा (18%) सर्वोच्च है, दूसरे स्थान पर मछलीपालन (11%) उसके बाद फसल उत्पादन (4.7%) एवं वन से प्राप्त उत्पादन (3.8%) है। इन वार्षिक वृद्धि दर में योगदान देने वाले व्यवसायों में थोड़ी तकनीकी सुधार लाकर, उत्पादन लागत को घटाकर, कृषि एवं फसल प्रणाली में विविधिकरण करके, उत्पादन को बढ़ाकर, उत्पादों का मूल्य संवर्धन करके, अधिक उत्पादन होने पर सही बाजार मूल्य निर्धारित करके कृषि एवं उनके अनुसांगिक व्यवसायों से कई गुणा लाभ अर्जित करने की संभावनाएं हैं। विविध रणनीतियां इस तरह है –

1. दक्ष जल प्रबंधन तकनीकों से जल की उत्पादकता एवं फसल गहनता को बढ़ाना – भारत के कुल भूभाग का 10 प्रतिशत हिस्सा रखने वाला राजस्थान सिर्फ 1.0 प्रतिशत जल स्रोतों का उपयोग करता है। इसके बावजूद सिंचित क्षेत्र का 10 प्रतिशत ही सूक्ष्म सिंचाई तकनीक का उपयोग करता है जिसे क्रमवार तरीके से बढ़ाकर उतने ही पानी के उपयोग से फसल सघनता को बढ़ाया जा सकता है। जैसा कि अनेक अनुसंधानों से ज्ञात है कि ड्रिप सिंचाई पद्धति से 80 प्रतिशत जल की बचत होती है। नर्मदा सिंचाई परियोजना की तरह ही ड्रिप सिंचाई पद्धति राजस्थान में भी दोहराने की सख्त जरुरत है जहाँ कि सिर्फ ड्रिप या स्प्रिंकलर विधि से ही सिंचाई करने की अनुशंसा की गयी है। ज्यादा पानी की खपत करने वाले फसल जैसे धान, मूंगफली, अन्डी इत्यादि की जगह कम पानी वाले फसल जैसे गेहूं, चना, सरसों की खेती को बढ़ावा देना। वर्षा जल संचयन के लिए फसल उगाये जाने वाले खेतों एवं उसके आस–पास तालाब, डोभा इत्यादि बनाकर जल संरक्षण को बढ़ावा देना ताकि फसल सघनता बढ़ाई जा सके। अर्ध–शहरी इलाकों के घरों से निकले बेकार पानी को साफ करके उसका सदुपयोग निकट के खेतों में किया जाना भी अच्छा रहेगा।

स्प्रिंकलर सिंचाई विधि

ड्रिप सिंचाई पद्धति

2. पशुधन आधारित समन्वित कृषि प्रणाली (इंटेगरेटेड फार्मिंग सिस्टम) – वर्षाश्रित क्षेत्रों में सिर्फ खेती से प्रति हेक्टेयर लगभग 16,000 रुपयों की शुद्ध आय प्राप्त होती है जबकि पशुधन आधारित समन्वित कृषि प्रणाली से यह आय 35,000 रुपयों से भी ज्यादा हो सकती है साथ–साथ वर्षभर रोजगार का भी सृजन होता है। समन्वित कृषि प्रणाली के अनेक मॉडल की संस्तुति की गई है जिसमें पशुधन, चारा फसल की खेती, उद्धानिकी फसलें, घेरा पर पौध रोपण एवं विभिन्न क्षेत्र विशेष के लिए कृषि फसलें समावेशित हों। इससे ज्यादा लाभ लेने के लिए किसानों के बीच कृषक उत्पादक संगठन या स्वयं सहायता समूह बनाकर उधमिता विकास करवाना बहुत जरूरी है।

पशुफार्म

फार्म पौण्ड

3. फसल उत्पादकता को बढ़ाकर – राजस्थान में कृषकों के क्षेत्र पर तकनीकों की जानकारी के साथ एवं उनके वगैर उत्पादन में 17 से 41 % का अन्तर पाया गया है जो कि तकनीकी ज्ञान के महत्त्व को दर्षाता है अतः किसानों की तकनीकी ज्ञान को बढ़ने की जरूरत है। खेती में व्यवहार किये जाने वाले बीजों में दलहनी फसलों के बीज बदलने की दर 8–15 % है, यही बाजरा एवं मक्का में 50–60 % है जिसे और भी बढ़ाने की आवश्यकता है। सूखा संभावित क्षेत्रों में शीघ्र तैयार होने वाली प्रजातियों को बढ़ावा देना उद्यानिकी फसलों के गुणवत्ता युक्त पौध उपलब्ध कराना भी कृषकों की आय बढ़ाने में बड़ी भूमिका अदा कर सकता है।

4. ज्यादा मूल्य वाले फसलों एवं उत्पादों के साथ विविधिकरण – कृषि में विविधिकरण आय बढ़ाने में हमेशा ही मौका प्रदान करता है। ज्यादा मूल्य वाले फसलों/सब्जियों/फलों की खेती भी उसके अंतर्गत आती है। अर्ध–शहरी क्षेत्रों में जहाँ खेतों से बाजार की दूरी सुगमता से तय की जा सकती है वहाँ संरक्षित खेती बहुत तेजी से उभर रही है।

5. पशुधन की उत्पादकता को बढ़ाकर – पशुधन के आहार के लिए 30 – 40 % सूखे चारे की कमी हो रही है इसलिए पर्याप्त चारे की उपलब्धता सुनिश्चित करने के लिए बंजर और मृतप्राय चारागाहों को पुनर्जीवित करने की नितांत आवश्यकता है। पशुधन की उत्पादकता बढ़ाने में क्षेत्र विशेष में उपलब्ध दाने से विविध पोषक मिक्सचर की बट्टीका इत्यादि बनाने की जरूरत है। स्थानीय पशु प्रजातियों को ज्यादा ध्यान देकर उन्नत बनाना तथा

प्रखंड स्तर पर कृत्रिम गर्भाधान केन्द स्थापित करना भी बहुत ही जरूरी है। कम या नगण्य उत्पादक पशुओं की जनसँख्या को नियंत्रित करने के लिए नर पशुओं को पैदा होने से रोकना (वीर्य से ही छांटना) तब कृत्रिम गर्भाधान कराना भी एक बहुत ही अच्छी तकनीक है।

6. उत्पादन व्यय को कम करके – कृषि से ज्यादा शुद्ध आय अर्जित करने के लिए उत्पादन लागत को कम करना भी जरूरी है। मृदा के उर्वरता एवं फसल के जरूरत के हिसाब से समन्वित पोषक तत्व प्रबंधन करके उत्पादन लागत को कम किया जा सकता है। जैसा कि हम जानते हैं कृषि में यंत्रीकरण के द्वारा कृषि कार्य समय पर निष्पादित होता है और मजदूरों पर होने वाले व्यय में भी कमी आती है। इस सन्दर्भ में कस्टम हायरिंग सेंटर जहाँ किसानों को बहुत कम दरों में किराये पर कृषियंत्र उपलब्ध कराये जाते हैं, की बहुत बड़ी भूमिका है। ग्रामीण क्षेत्रों में कस्टम हायरिंग सेंटर खोलना होगा।

7. राजस्थान के अद्वितीय एवं विशिष्ट फसलों को बढ़ावा देना – राजस्थान के अद्वितीय एवं विशिष्ट फसलों के लिए जाना जाता है। बाजरा 40.0 लाख हेक्टेयर भूमि पर उगाया जाता है जबकि मक्के की खेती 9.0 लाख हेक्टेयर क्षेत्र पर होती है। विगत 40 वर्षों से इन दोनों फसलों की उत्पादकता वृद्धि दर सबसे ज्यादा है। सूखा सहन करने वाले पौष्टिकता से भरपूर एवं जलवायु परिवर्तन से अप्रभावित, दोनों विशिष्ट फसलों के लिए सरकार के द्वारा किसानों को कोई प्रोत्साहन नहीं मिलने की वजह से इनका क्षेत्र में गिरावट दिख रहा है। राजस्थान के उन इलाकों में जहाँ बाजरा एवं मक्का पारम्परिक भोजन का अभिन्न अंग है वहां जन वितरण प्रणाली के अंतर्गत गेहूँ को बांटना, इन दोनों फसलों के महत्त्व को कम करता है। सरकार के द्वारा इन दो फसलों की खरीद होनी चाहिए। जन वितरण प्रणाली के अंतर्गत इनको बांटना चाहिए। ठीक उसी प्रकार राजस्थान बीज मसाला फसलों (जीरा, सौंफ, मंगरैला, अजवायन, धनियाँ एवं इसबगोल) के खान के रूप में जाना जाता है लेकिन इनके प्रसंस्करण के लिए बहुत ही कम संख्या में यूनिट हैं। साथ ही बाजार भी बहुत कम हैं जिसके कारण इन्हें प्रसंस्करण एवं बिक्री के लिए पड़ोसी राज्यों में ले जाना पड़ता है जिससे वाहन खर्च बढ़ जाता है। राजस्थान में जहाँ इन मसाला फसलों की खेती होती है वहाँ ज्यादा प्रसंस्करण यूनिट स्थापित करने की आवश्यकता है साथ ही मंडियों की संख्या भी बढ़ाई जाये।

8. किसानों को नई–नई तकनीकों से अवगत कराना – युवाओं के लिए अनेक प्रकार के तकनीकी ज्ञान जैसे कि डेयरी, कृषि, मसाला बीजों के प्रसंस्करण, कृषि यंत्रों के मरम्मत एवं रख–रखाव, संरक्षित सब्जी उत्पादन इत्यादी विषयों पर प्रशिक्षण देना होगा ताकि उत्पादन को बढ़ाया जा सके और उनको भी अतिरिक्त आय की प्राप्ति हो। हस्तकला, कुटीर एवं लघु उद्योग के प्रशिक्षण भी आय बढ़ाने के अन्य साधन हो सकते हैं।

9. किसानों को बेहतर बाजार एवं ढांचे उपलब्ध कराना – किसानों की आमदनी बढाने एवं सुनिश्चित करने में फलों, सब्जियों, मसाला फसलों, दलहनी, तेलहनी, औषधीय फसलों की अनुबंध पर खेती (कॉन्ट्रैक्ट फार्मिंग) करना अच्छा होगा। इन उत्पादों के विक्रय के लिए खरीददार उपलब्ध कराना उनको प्रोत्साहन देने जैसा है जिससे बिचौलियों से मुक्ति भी मिलेगी और उत्पादकों को ज्यादा लाभ भी। राजस्थान सरकार ने फलों और सब्जियों के बिक्री के लिए कृषि बाजार समितियों को अधिसूचित किया है जहाँ उत्पादक किसान मुक्त बिक्री कर सकते हो जो कि एक बहुत अच्छी पहल होगी। राज्य के अन्य मंडियों को इ– नाम (e-NAM) से जोड़ना

भी बहुत जरूरी है। जीरा, सौंफ, मंगरैला, अजवांयन, पोस्ता एवं इसबगोल के लिए निर्यात आधारित कृषि हब स्थापित करने की आवश्यकता है।

10. **भण्डारण की सुविधाओं एवं मूल्य संवर्धन की तकनीकों को सुदृढ़ करना –** उचित एवं सुरक्षित भण्डारण के आभाव में किसानों की कड़ी मेहनत से उगाये गए उत्पादों का एक बड़ा हिस्सा कीड़ों, बिमारियों और अन्य कारकों द्वारा नष्ट कर दिया जाता है जिससे प्रतिवर्ष किसानों के साथ–साथ राष्ट्रीय संपत्ति की भी हानि होती है। इसे कम करने के लिए पर्याप्त संख्या में सुरक्षित भंडारगृहों का निर्माण करना एवं सब्जियों तथा फलों के नष्ट होने से बचाने के लिए शीत गृहों का निर्माण करना होगा। सहकारिता समितिओं, कृषक उत्पादक सगठनों, स्वयं सहायता समूहों के माध्यम से स्थानीय उत्पादों के प्रसंस्करण एवं मूल्य संवर्धन को बढ़ावा देना ताकि ज्यादा बाजार मूल्य प्राप्त हो।

उपरोक्त प्रौद्योगिकियां आईसीएआर– केंद्रीय भेड़ और ऊन अनुसंधान संस्थान, अविकानगर की विभिन्न चल रही परियोजनाओं जैसे फार्मर फर्स्ट परियोजनाएँ, मेगा शीप सीड़ परियोजना, बकरी पर एआईसीआरपी परियोजना एवं तकनीकी स्थानान्तरण विभाग के माध्यम से कृषक समुदायों में पहुचाई जा रही हैं।

देवनागरी ध्वनिशास्त्र की दृष्टि से अत्यंत वैज्ञानिक लिपि है।

रविशंकर शुक्ल

अर्ध शुष्क क्षेत्रों में उन्नत भेड़ उत्पादन के लिए सामान्य खादय घटक एवं उनकी खाद्य नीति

सरोबना सरकार, सुरेन्द्र कुमार सांख्यान, रणधीर सिंह एवं महेश चन्द मीना

भेड़ उत्पादन शुष्क और अर्ध–शुष्क क्षेत्रों में रहने वाले किसानों की आय का मुख्य स्रोत है। इन क्षेत्रों में पायी जाने वाली भेड़ें आमतौर पर पोषण की कमी के कारण गंभीर पोषक तत्वों की कमी का सामना करती हैं जो रोग और स्वास्थ संबंधी समस्याओं को भी बढ़ावा देती हैं, परिणाम स्वरूप उत्पादन और प्रजनन को प्रभावित करती हैं। इन क्षेत्रों में कम वर्षा के कारण चारे की उत्पादन में कमी की संभावना होती है जिससे की शुष्क मौसम के दौरान, चारा की पैदावार और गुणवत्ता में गिरावट आ जाती है।

भेड़ो के लिए चारे का प्रकार

अनाज और घास का चारा : घास दुनिया का सबसे सर्वव्यापी पौधा है। घास अपर्याप्त वर्षा क्षेत्रों में एक अविश्वसनीय उत्तरजीवी है और वास्तव में कभी नष्ट ना होने वाला पौधा है क्योंकि ये पौधे ऊपर से खाएं, आग से जलाएं, बाढ़ के पानी में डूब जाने और सघन खेती के बाद भी जड़ें पौधे को पुनर्जीवित कर देती है। अनाज का चारा और घास की गुणवत्ता उसके वृद्धि विकास से निर्धारित होती है और फूल आने के बाद उनकी गुणवत्ता कम होने लगती है। मक्का, ज्वार,बाजरा और जई जैसे अनाज के चारे से पशुधन को ऊर्जा प्राप्त होती है। वृद्धि, पुनर्जनन क्षमता, उपज और गुणवत्ता के मामले में ये अनुकूलन क्षमता और परिवर्तनशीलता वाले पौधे होते हैं।

सेंक्रस चारा

पाला चारा

फलीदार चारा : उच्च प्रोटीन और मिट्टी से अपनी नाइट्रोजन आवश्यकताओं के लिए आंशिक स्वतंत्रता के कारण फलीदार चारा लंबे समय तक अपनी गुणवत्ता बनाये रखते हैं।

पेड़ और झाड़ियों से चाराः पशु आहार में पेड़ की पत्तियों का उपयोग पुरातन काल से किया जाता रहा है। चूंकि शुष्क मौसम के दौरान घास में प्रोटीन प्रमुख सीमित पोषक तत्व होते हैं, इसलिए पेड़ के पत्ते जो शुष्क मौसम में

अच्छी तरह से उच्च प्रोटीन सामग्री को बनाए रखने के लिए जाने जाते हैं, वे जुगाली करने वाले पशुओं के लिए एक महत्वपूर्ण स्रोत बन जाते हैं। लेग्यूमिनस (फलीदार)चारे के पेड़ के पत्ते विशेष महत्व के होते हैं क्योंकि उनमें आमतौर पर अन्य फलीदार चारा के प्रजातियों की तुलना में अधिक प्रोटीन होता है। हालांकि, पेड़ों और अन्य चारे का गुण न केवल इसकी प्रोटीन मात्रा द्वारा निर्धारित की जाती है, बल्कि इसकी पाचन शक्ति, अस्थिरता और अन्य के साहचर्य प्रभावों द्वारा भी निर्धारित की जाती है। शुष्क मौसम में खिलाने के लिए, चारे की वो प्रजातियों जो चारा वॉयोमास उपलब्धता निर्धारित करती है उसका विशेष महत्व होता है।

जोझरू फलीदार घास

अपरंपरागत चारा : चारे के इन महत्वपूर्ण समूहों के अलावा, मानसून में उगने वाले, खरपतवारों और पौधों की तरह लगाये जाने वाले कैक्टस और एजोला, अपनी शुरुआती पेट भरने की क्षमता, कम अवधि और पोषण मूल्य के कारण, फीड पूरक स्रोत के रूप में उपयोग किए जा सकता हैं।

भेड़ों का पोषण प्रबंधन :

1. नवजात मेमनों में पोषण प्रबंधन : जन्म के बाद, मेमनों को कोलोस्ट्रम के बेहतर अवशोषण के लिए जन्म के 2–3 घंटे के भीतर माँ का दूध पिलाना चाहिए। कोलोस्ट्रम इम्युनोग्लोबुलिन में समृद्ध होता है अतः जन्म के 2–3 घंटे के अन्दर यह मेमने की आंत से आसानी से अवशोषित हो जाता है। मेमनों को पहले 3–5 दिनों के दौरान अपने माँ के साथ एक बाड़े में रखा जाना चाहिए ताकि वे पर्याप्त मात्रा में कोलोस्ट्रम पी सकें । तत्पश्चात दूध को दो बार में प्रतिदिन 300–400 ग्राम की दर से पिलाना चाहिए। मेमनों के लिए क्रीप राशन (दाना मिश्रण) मक्का 40 भाग , मूंगफली की खली 30 भाग , गेहूं का चोकर 10 भाग , डी–ऑइल चावल का चोकर 13 भाग , गुड़ 5 भाग , खनिज मिश्रण 2 भाग और नमक 1 भाग मिलाकर बनाया जा सकता है । विटामिन ए, बी2 और डी3 20 ग्राम प्रति क्विंटल की दर से दाना

नवजात मेमनें

मिश्रण (क्रीप फीड) में मिलाने चाहिए। क्रीप फीड प्रोटीन–ऊर्जा में समृद्ध (17–18: डी.सी.पी और 73–75: टी.डी.एन) और अत्यधिक स्वादिष्ट दूध पिलाने (2–3 सप्ताह) के बाद से 300–500 ग्राम की फलीदार चारा खिलाना शुरू कर देना चाहिए। अच्छे विकास प्राप्त करने के लिए मेमनों को पूरक आहार के रूप में 150–200 ग्राम की दर से क्रीप फीड तैयार कर खिलाना चाहिए।

2. विनर मेमनों में पोषण : इन मेमनों का राशन या पोषण उसकी उम्र और शरीर के वजन दोनों पर निर्भर करता है। हालांकि, क्रीप मिश्रण की लागत की तुलना में फिनिशर राशन का भी व्यावसायिक पशुपालन में महत्वपूर्ण असर पड़ता है। अच्छी तरह से खिलाए गए मेमनों में आनुवंशिक क्षमता के कारण औसतन दैनिक वजन में 200–250 ग्राम की वृद्धि हो सकती है। मेमनों के अच्छे विकास के लिए संतुलित मात्रा में पर्याप्त ऊर्जा और प्रोटीन प्रदान किया जाना चाहिए। बेहतर विकास के लिए नियमित चराई प्रबंधन के साथ–साथ दाना मिश्रण शरीर के वजन के अनुसार मेमनों के लिए बेहतर होता है। मेमने को बेहतर चारागाह में चरने के उपरान्त शाम के समय 300 ग्राम की दर से दाना मिश्रण देना चाहिए।

मेमनों की स्टाल फिडिंग

स्टाल फेड मेमनों को सम्पूर्ण आहार दिया जाना चाहिए। जिसमें दाना मिश्रण और चारा का अनुपात 50:50 या 60:40 होता है ताकि उनमे छह महीने की उम्र में 30–33 किलोग्राम शरीर का वजन प्राप्त किया जा सके।

3. 1–2 वर्ष के भेड़ (हॉगट) : मादा हॉगट का शरीर के वजन को प्राप्त करना तथा प्रजनन के लिए परिपक्व होने के लिए पोषण प्रबंधन बहुत महत्वपूर्ण है। होगेट को बेहतर चरागाह पर रखा जाना चाहिए और प्रतिदिन 300 ग्राम की दर से दाना मिश्रण भी देना आवश्यक होता है। चराई भूमि से चारा आपूर्ति के आधार पर पूरक आहार दाना मिश्रण को समायोजित किया जाना चाहिए। होगेट को 1 वर्ष की आयु में 28–30 किलोग्राम शरीर का वजन प्राप्त कर लेना चाहिए। नर होगेट जिनको आगे जाकर प्रजनन के लिए उपयोग किया जाना है उनको चराई के साथ–साथ प्रतिदिन 300 ग्राम की दर से दाना मिश्रण भी दिया जाना चाहिए।

4. प्रजनन के लिए मादा : प्रजनन क्षमता काफी हद तक उचित पोषण पर निर्भर करती है। बड़े शरीर वाले मादा अधिक मेमनों का उत्पादन करते हैं। आमतौर पर, अत्यधिक वजन वाले मादा में गर्भाधान दर कम होती है और भ्रूण की मृत्यु दर अधिक होती है। इसके अलावा, कमजोर शरीर की स्थिति कुशल प्रजनन और प्रजनन प्रदर्शन के लिए अनुकूल नहीं है। असंतुलित आहार जिसमे फॉस्फोरस और विटामिन ए की मात्रा सही नहीं हो उनमे कमजोर मेमनों का प्रतिशत बढ़ सकता है।

प्रजनन मादा में फ्लशिंग : फ्लशिंग राशन प्रजनन काल के ठीक पहले और प्रजनन के दौरान मादा के शरीर की स्थिति में सुधार कर सकता है।आमतौर पर, इस विद्धि से डिम्बाक्षरण दर में वृद्धि होती है। प्रजनन के मौसम से 3–4

सप्ताह पहले दैनिक 250–300 ग्राम की दर से अतिरिक्त मिश्रण के रूप में अतिरिक्त राशन का प्रावधान एक समय में भेड़ों को मद चक्र में लाता है और प्रफुल्लता और गर्भाधान दर में भी सुधार करता है। शुष्क क्षेत्रों में पेड़ (खेजड़ी, बबूल, बेर) की फली, पत्ते प्रोटीन से भरपूर होते हैं और गर्मियों के महीनों में भेड़ और बकरियों में मद चक्र में लाने के लिए व्यापक रूप से उपयोग किया जाता रहा है।

गर्भवती भेड : गर्भावस्था के अंतिम तीन माह के दौरान भेड़ को गर्भ में भ्रूण के तेजी से विकास के लिए, साथ ही साथ मादा के शरीर के पोषण के लिए अतिरिक्त फीड की आवश्यकता होती है। गर्भावस्था के प्रारंभिक माह में मादा की पोषक आवश्यकताएं सामान्य रखरखाव की तुलना में थोड़ी अधिक होती हैं। अच्छी पोषण की स्थिति में मादा प्रजनन अवधि के अंत में सामान्य उत्पादन में बाधा डाले बिना अपना कुछ वजन कम कर सकती है। यदि घटते वजन को प्रजनन से पहले पूरी तरह से ठीक किया जाये, तो शुरुआत के 60 से 90 दिनों के गर्भ के दौरान वजन में कोई लाभ ना होने पर भी बाद के उत्पादन पर नकारात्मक प्रभाव नहीं पड़ता है। इस समय लगभग 70 प्रतिशत भ्रूण की वृद्धि होती है। इस अवधि में पोषक में कमी के परिणाम स्वरूप जन्म के समय कम वजन के मेमने, जन्म के बाद मेमने में अधिक मृत्यु दर, दूध के उत्पादन में कमी और संभवतः गर्भावस्था के रोग (केटोसिस) इत्यादि में वृद्धि हो सकती है। गर्भावस्था के आखिरी दिनों में, मादा को गर्भ में पहले की तुलना में लगभग 50 प्रतिशत अधिक फीड की आवश्यकता होती है। यदि गर्भ के इस दौरान प्रोटीन सीमित हो तो मेमने की जन्म दर कम होती है और साथ में ऊन उत्पादन भी कम रहता है। गर्भावस्था के अंतिम दिनों में मादा में एक से अधिक भ्रूण होने की वजह से पर्याप्त फीड का सेवन करने में कठिनाई होती है। यदि गर्भवती मादा को उच्च चारा युक्त राशन खिलाया जाए, तो इस स्थिति में दैनिक ऊर्जा आवश्यकताओं की आपूर्ति के लिए पर्याप्त नहीं होता है। गर्भावस्था के इस दौरान में उच्च चारा वाला राशन का सेवन कराने पर, आमतौर पर पूरक अनाज खिलाना उचित होता है। इसके लिए मक्का (30), मूंगफली का केक (20), गेहूं का चोकर (20), डी–ऑइल राइस ब्रान (23), गुड़ (5), खनिज मिश्रण (1) और सामान्य नमक (1) भागों से युक्त एक मिश्रण तैयार किया जाता है। आमतौर पर 300 ग्राम दाना मिश्रण को 8–10 घंटे तक बेहतर चरागाह में चराई के साथ पूरक के तौर पर उपयोग किया जाता है।

दूध देने वाली भेड़ें : देशी भेड़ की दूध उत्पादन क्षमता प्रतिदिन 500–800 ग्राम होती है, फिर भी यह उत्पादन सिर्फ चराई करने पर नहीं रह पाती है। दूध उत्पादन बढ़ाने के लिए पूरक आहार जैसे पेड़ के पत्ते या दाना मिश्रण दिया जाता है। संगठित फार्म में, चराई के साथ प्रतिदिन 300 ग्राम दाना मिश्रण देना चाहिए। दूध देने वाली भेड़ और गर्भवती भेड़ के लिए दाना मिश्रण की भौतिक संरचना एक समान ही रहती है।

प्रजनन के लिए भेड़ : ब्रीडिंग में इस्तेमाल लाये जाने वाले भेड़ को बेहतर चरागाह पर चराई कराया जाना चाहिए, परन्तु वीर्य की गुणवत्ता और कामेच्छा में सुधार के लिए प्रजनन के मौसम के दौरान 300 ग्राम दाना मिश्रण प्रदान किया जाना चाहिए।अच्छी गुणवत्ता वाले हरे चारे जैसे मक्का, लोबिया, जई, दूब घास, ल्यूसर्न, बरसीम आदि प्रजनन मेढ़ों की सभी आवश्यकताओं को पूरा करते हैं। चरागाह भूमि से चारा की उपलब्धता के अनुसार पूरक दाने की मात्रा को समायोजित किया जाना चाहिए।

छँटी हुई मादा : भेंड़ आमतौर पर 6 वर्ष से अधिक आयु के होने पर कम–उत्पादक हो जाती है और उसे "कल्ड" कहा जाता है। ऐसे पशु जिन्होंने अपनी इष्टतम उत्पादन क्षमता को पार कर लिया है, इसलिए उन्हें उन किसानों द्वारा ध्यान नहीं दिया जाता है जिसके कारण इनके शरीर की स्थिति खराब होती जाती है। विभिन्न पोषक प्रणालियों के बीच, चौलेंज फीडिंग व् उच्च ऊर्जा आहार खिलाने से पुनर्संरचनात्मक परिवर्तन पशुओं के सेवन, चयापचय और शरीर की स्थिति सुधारने में मदद करता है। स्टार्च आधारित आहार अल्पावधि तक खिलाने से गैर उत्पादक मादा के शरीर की स्थिति को बेहतर बनाया जा सकता है। शरीर और मांस की स्थिति में सुधार के लिए उच्च ऊर्जा वाले आहार (शरीर भार का 2.5 प्रतिशत) 90 दिनों की अवधि के लिए खिलाया जा सकता है। इसके अलावा, छँटे हुए भेड़ों में यूरिया मिश्रित फीड ब्लॉक खिलाना नाइट्रोजन का एक सस्ता स्रोत है और "रूमेण प्रोटेक्टेड फैट" बेहतर पोषक तत्वों के उपयोग, मांस उत्पादन और विपणन में सहायक है। अल्प अवधि की फीडिंग रणनीति (45–90 दिन) जिसमे न्यूनतम फीड में लागत और अधिकतम आउटपुट (वजन में वृद्धि) हो, को अपनाकर इस प्रकार की कम उत्पादक (कल्ड) पशुओं से अच्छी आय प्राप्त की जा सकती है।

छँटी हुए मादा

हिंदी राष्ट्रीयता के मूल को सींचते है और उसे दृढ़ करती है।

पुरूषोत्तम दास टंडन

लघुरोमंथी पशुओं के आहार में खनिज तत्वों का महत्व

महेश चन्द मीना, रणधीर सिंह भट्ट एवं अरूण कुमार तोमर

पशु आहार में अन्य पोषक तत्वों यानि प्रोटीन, कार्बोहाइड्रेट्रस, वसा, एवं विटामिन्स के साथ –साथ खनिज तत्वों का विशेष महत्व है। ऐसा देखा गया है, कि आहार में पाई जाने वाली इनकी मात्रा मुख्य रुप से उच्च दुग्ध उत्पादन या विकास के लिए अपर्याप्त होते हैं। कई खनिज तत्वों की कमी केवल अपर्याप्त आहार की एक लंबी अवधि के बाद ही उजागर हो पाती है। खनिज तत्वों की कमी के लक्षण प्रदर्शित होने में समय लगता है। खनिज तत्व जानवरों के प्रजनन कार्यों को प्रथम रूप प्रभावित करती हैं, जिसके परिणामस्वरुप पशु का गर्मी में नहीं आना, प्रजनन दोहराना, कम गर्भाधान दर आदि समस्याऐं मिलती हैं, इसलिए सही खनिज का अनुपूरण कुशल प्रजनन, उच्च दुग्ध उत्पादन और पशुओं के स्वास्थ्य के लिए महत्वपूर्ण है। पशुओं की खनिज जरुरत उम्र, दुग्ध उत्पादन और विकास दर पर निर्भर करती है। किसान यदि बाजार में उपलब्ध बना हुआ दाना अपने पशुओं को हरे चारे के साथ खिला रहे हैं तब अतिरिक्त खनिज के पूरक इतनी जरुरत नहीं होती हैं। लेकिन सामान्य तौर पर बहुत कम किसान अपने पालतू जानवरों को उनकी आवश्यकताओं के अनुसार खिलाते हैं। अधिकांश किसान शुष्क चारे के साथ–साथ घर में बना हुआ रातिब आहार खिलाते हैं। जो अधिकांश खनिजों का पूरकता अनिवार्य करने में सक्षम नहीं होता हैं। एक नियम के अनुसार किसानों को प्रतिदिन 5–7 लीटर दुग्ध उत्पादन के लिए अपने पशुओं को खनिज मिश्रण की 50–75 ग्राम पूरक मात्रा देनी चाहिए।

शुष्क चारे में चराई

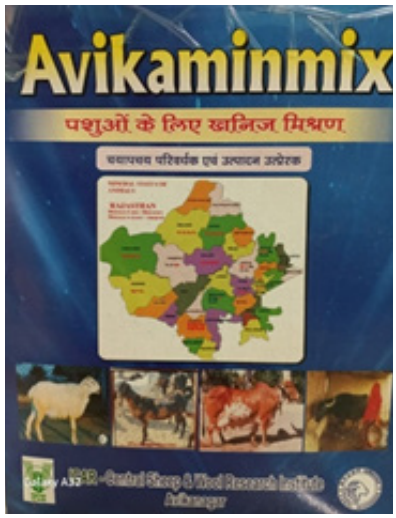

खनिज अनुपूरक

पूरक खनिज क्या हैं ?

जानवरों के लिए आवश्यक खनिज तत्व दो प्रकार के होते हैं :

मैक्रो खनिज : यह खनिज पशु आहार में अपेक्षाकृत अधिक मात्रा में मिलाये जाते है (सूखा चारा से 100 मि.ग्रा. प्रति किलो से अधिक) तथा इनकी कमी पशुओं में उत्पादन, प्रजनन और स्वास्थ्य को प्रभावित करते हैं। प्रमुख खनिज मुख्य रुप से कैल्शियम, फॉस्फोरस, मैग्नीशियम, पोटेशियम, सोडियम और सल्फर हैं।

माइक्रो खनिज : इन खनिजों की जरूरत अपेक्षाकृत कम मात्रा में होती हैं (100 मिग्रा./कि.ग्रा. से कम) तथा यह खनिज तांबा, कोबाल्ट, लोहा, आयोडीन, सेलेनियम, जिकं और मैंगनीज आदि हैं।

नमक आवश्यक है पशुओं के लिए : गाय, भैंस दानें एवं चारे मे प्रति दिन 25–30 ग्राम नमक लेती हैं। रसदार चारें जैसे हरा घास /सिलेज है तब परिपक्व चारे के मुकाबले अधिक नमक की उपलब्धता रहती है। नमक, तंत्रिका और मांसपेशी प्रणालियों के समुचित कार्य के लिए आवश्वक है। नमक की कमी भूख और शरीर के नुकसान का कारण बनती है।

पशुओं को पूरक खनिज की जरुरत : पशुओं को निम्नलिखित स्थितियों में विशेष रूप से पूरक खनिजों की जरूरत होती है। जब पशुओं में कोई भी प्रजनन समस्या हो । जब पशुओं का त्वचा खुरदरा दिखे। प्रजनन के पहले और तत्काल बाद जब पशुओं में परजीवी संक्रमण होने पर आंखों की म्यूकस झिल्ली का रंग पीला आदि लक्षणों को देखकर पता किया जा सकता है।

खनिजों की कमी के सामान्य लक्षण : लंगड़ापन और जोड़ों की कठोरता, त्वचा का अधिक मोटा होना, एवं रूखा होना, दूध उत्पादन में गिरावट, वजन में कमी, खाने की मात्रा में कमी और लकड़ी हड्डी का चबाना, दूध, बुखार, पैरों का लकवा, कम उर्वरता, अनियमित मद, गर्भपात, नाल का रूक जाना और गर्भाधान की समस्या।

खनिज अनुपूरक : बाजारों में उपलब्ध खनिज मिश्रण सभी खनिज लवणों को मिलाकर बनाया जाता है। चाहे भोजन में इस की प्रचुरता हो या कमी। गायों को खनिज की पूरकता का यह दृष्टिकोण बहुत महंगा पड़ता है क्योंकि इस तरह से खनिजों के बीच परस्पर क्रिया और असंतुलन के लिए और अधिक अवसर मिल जाते हैं। क्षेत्र विशेष के खनिज मिश्रण मि*ट्टी और विशेष क्षेत्रों में चारा और पशुओं की खनिज प्रोफाइल के आधार पर तैयार किया जाता है। इन खनिज मिश्रणों में विशेष रूप से उन क्षेत्रों में सबसे कम उपलब्ध खनिज लवणों को शामिल किया जाता है। बाजार में उपलब्ध पारंपरिक खनिज मिश्रण की तुलना में ये खनिज मिश्रण लागत प्रभावी होते हैं। आज कल* हमारा संस्थान विभिन्न क्षेत्रों के लिए क्षेत्र विशेष खनिज मिश्रण का उत्पादन कर रहे हैं। भेड़ एवं बकरी को 5–10 ग्राम प्रतिदिन एवं गाय–भैसों को 60–80 ग्राम प्रतिदिन खिलाने से मूक गर्मी आदि जैसी प्रजनन इलाज एवं गर्भाधान की दर और प्रजनन क्षमता में सुधार अपेक्षित है। इसके साथ–साथ दूधारू पशुओं को विशेष खनिज मिश्रण खिलाने से प्रति दिन 0.5–1.0 लीटर दूध उत्पादन में सुधार हो सकता है और दूध में एस़. एन.एफ भी बढ़ सकता है।

पशुओं के आहार में विभिन्न खनिजों की आवश्यक मात्रा : जानवरों में कैल्शियम, फॉस्फोरस, मैग्नीशियम, तांबा, जस्ता, मैगनीज एवं लोहा आदि को बहुम कम मात्रा (मि.ग्रा.) में वृद्धिशील ,दुधारू गाय/भैंस एवं भेड़ और बकरी आदि को खिलाई पिलाई करनी चाहिए।

खनिज अनुपूरक के कुछ महत्वपूर्ण तथ्य : भारत जैसे उष्णकटिबंधीय देशों में जानवरों को ज्यादातर भूसे और कृषि फसल के अवशेष खिलाये जाते हैं इसलिए पशुओं को खनिज पूरकता आवश्यक है। इसके अलावा पुआल जिसमें सिलिका की मात्रा अधिक होती है, पाचन के दौरान अन्य खनिजों के उपयोग में हस्तक्षेप करता है। जब जानवरों को पुआल आधारित आहार खिलाया जाता है तो उन्हें हफ्ते में कम से कम एक बार पर्याप्त हरा चारा प्रदान किया जाना

चाहिए। फलियां, पेड़ के पत्ते और सूखा घास खनिजों का अच्छा स्रोत हैं। किसान जानवरों को अक्सर गेहूं की भूसी, चावल की भूसी, चावल की पॉलिश आदि जैसे अनाज के अन्य उत्पादों को दाने के रूप खिलते हैं जिन में फॉस्फोरस की उच्च मात्रा होती हैं। इससे आहार में कैल्शियम और फॉस्फोरस अनुपात बिगड़ जाता है। इसलिये कैल्शियम और फॉस्फोरस अनुपात ऐसे आहार के लिए संतुलित किया जाना चाहिए। उच्च उत्पादक डेयरी गायों और भैंसों में कैल्शियम और फॉस्फोरस की अधिक आवश्यकता दूध में कैल्शियम (0.13 प्रतिशत) और फॉस्फोरस (0.11 प्रतिशत) की उपयुक्त मात्रा के लिए आवश्यक हैं।

खनिज समृद्ध आहार में और चारा से खनिज पूरकता : पशु आहार में खनिज की पूरकता स्थानीय स्तर पर उपलब्ध खनिज सम्पन्न आहार और चारे से की जा सकती है। यह पशुओं को आवश्यक खनिज प्रदान करने और खनिज पूरकता का सबसे अधिक आर्थिक और व्यावहारिक दृष्टिकोण है।

उत्तम आहार–जैसे सुबबूल, कटहल, सेस्बेनिया, पीपल के पत्ते कैल्शियम, तांबा, लोहा और जिंक का अच्छा स्रोत होते हैं।

फलीदार चारे –बरसीम, लोबिया, ल्यूसर्न, स्टाइलो आदि कैल्शियम, मैग्नीशियम, तांबा, जस्ता, लोहा और मैंगनीज के अच्छा स्रोत होते हैं।

गैर फलीदार चारे – मक्का, नेपियर, पैरा, स्थानीय घास मैग्नीशियम, तांबा, जस्ता और लोहे के अच्छे स्रोत होते हैं:

खलियां – जैसें सरसों खली, तिल खली, कपास खली, मूंगफली खली, रेपसीड खली, सूरजमुखी खली, अरण्डी खली, आदि फॉस्फोरस, मैग्नीशियम, सल्फर, तांबा और जस्ता खनिजों के अच्छे स्रोत होते हैं :

अन्य उत्पाद – गेहूं का चोकर, चावल की भूसी, चाने की भूसी आदि फॉस्फोरस, मैग्नीशियम, जिंक और मैंगनीज खनिजों के अच्छे स्रोत होते हैं :

चीलेटिड खनिज – चीलेटिड खनिज (कॉपर मेथिओनिन, जिंक मेथिओनिन, आइरन मेथिओनिन, कॉपर लाइसिन, जिंक लाइसिन, आदि) की जैव उपलब्धता अधिक होती है और अन्य खनिजों के साथ कोई हस्तक्षेप नहीं होने के कारण खनिज पूरक के सबसे अच्छा स्रोत हैं। लेकिन खनिज के ये स्रोत बहुत महंगे हैं। चीलेटिड खनिज निम्न विशेष परिस्थितियों में पूरक के रूप में देनें चाहिए। उच्च दुग्ध उत्पादन के दौरान (10 लीटर/दिन से अधिक), प्रजनन के पहले और बाद में तथा अधिकतम् उत्पादन तक जारी रख सकते हैं। तनाव के दौरान जैसे टीकाकरण, गर्म जलवायु और परजीवी संक्रमण, आदि जानवरों को किसी भी बीमारी से जल्द ठीक होने के लिए या तेजी से प्रजनन के लिये चीलेटिड खनिज, अकार्बनिक स्रोतों से 50 प्रतिशत तक पूरक किये जा सकते हैं। ईष्टतम उत्पादन प्राप्त करने के लिए जानवरों में सबसे प्रभावी पूरकता 50 प्रतिशत अकार्बनिक और 50 प्रतिशत चीलेटिड खनिज लवण है। किसान आमतौर पर पशु के प्रजनन की स्थिति की अनदेखी करते हैं जिससे पशुओं के उत्पादन पर दीर्घकालिक प्रभाव होते हैं। खनिज पूरकता पशुओं में प्रजनन क्षमता में सुधार करती है। उचित खनिज पूरकता पर पशु नियमित रूप से गर्मी/मद में आते हैं, प्रभावी रुप से गर्भ धारण और नियमित अंतराल पर बछड़े को जन्म देते हैं। नमक, आहार के स्वाद में सुधार करता है और इसलिए खनिज को जानवरों को पूरित करना चाहिए किसान खनिजपूरकता पर पैसे की छोटी राशि के निवेश से और अधिक आर्थिक लाभ प्राप्त कर सकते हैं। अध्ययनों में

पाया गया है कि 40 ग्राम खनिज मिश्रण पूरकता से गायों के दूध उत्पादन में 300–500 मि.ली. वृद्धि होती है जो प्रति दिन 15–25 रुपये प्रति पशु अतिरिक्त आय में परिणित होगी। इसके अलावा प्रत्येक वर्ष के नियमित अंतराल पर गायों से बछड़ों की प्राप्ति किसानों को अच्छा लाभ दिलाती है।

निष्कर्ष – चराई के अतिरिक्त, खनिज मिश्रण की गोलियाँ एवं रातिब मिश्रण खिलानें पर भेड़–बकरियाँ जल्दी परिपक्ता को धारण करती है और शारीरिक भार में वृद्धि एवं मद व्यक्त करती है। खनिज तत्व के अन्य औषधीय गुणों को देखते हुये इसकी गोलियाँ पूरक के रूप में खिलाने पर पशुओं को जल्दी परिपक्ता लाने के साथ–साथ उनको स्वस्थ्य रखने मे उपयोगी साबित हो सकता है।

हिंदी हमारे राष्ट्र की अभिव्यक्ति का
सरलतम स्त्रोत है।

सुमित्रानंदन पंत

रोगाणुरोधी प्रतिरोध–एक वैश्विक चिंता

(Antibiotic resistance)

सृष्टि सोनी, जी. जी. सोनावणे, फैज अहमद खान, सी. पी. स्वर्णकार, दुष्यंत कुमार शर्मा

क्या होता है रोगाणुरोधी प्रतिरोध/एंटीबायोटिक रेसिस्टेन्स (एएमआर)?

"रोगाणुरोधी प्रतिरोध (AMR) सूक्ष्मजीवों के द्वारा रोगाणुरोधी दवाओं को इसके खिलाफ काम करने से रोकने की क्षमता को कहते है"। एंटीबायोटिक रेसिस्टेन्स तब उत्पन्न होता है, जब रोग फैलाने वाले सूक्ष्मजीव जैसे बैक्टीरिया, कवक, और परजीवी रोगाणुरोधी दवाओं के लगातार संपर्क में आने के कारण यह जीवाणु अपने आप को इन दवाओं के अनुरूप ढाल लेते हैं तथा यह जीवाणु धीरे–धीरे इन दवाओं के प्रति प्रतिरोध क्षमता विकसित कर लेते हैं। इन बदलावों के चलते एंटीबायोटिक/रोगाणुरोधी दवाएं उन पर असर नहीं करती हैं। जब ऐसा होता है तो मनुष्य एवं जानवरों के शरीर में लगा संक्रमण जल्द ठीक नहीं होता। ऐसे सूक्ष्मजीवों को वैज्ञानिक भाषा में "सुपरबग्स" कहते हैं.। सुपरबग्स वो मल्टीड्रग–रेसिस्टेंट (एमडीआर/ Multi & Drug Resistant)जीवाणु होते हैं जो तीन या अधिक वर्गों की एंटीमाइक्रोबियल दवाऐं उन पर असर नहीं करती हैं । विश्व स्वास्थ्य संगठन (World Health Organisation) ने घोषणा की है कि एएमआर मानवता के सामने शीर्ष 10 वैश्विक सार्वजनिक स्वास्थ्य खतरों में से एक है।

रोगाणुरोधी दवाओं के विकास का इतिहास

मानव रोगों के इतिहास पर पीछे मुड़कर देखें तो संक्रामक रोगों का बहुत बड़ा अनुपात है। 19वीं शताब्दी के अंत में यह जाना गया कि सूक्ष्मजीव इसके लिए जिम्मेदार हैं और यह जीवाणु प्राचीन काल से ही मानवता को ग्रसित कर रहे थे। इसके उपाय में कीमोथेरेपी, एक मुख्य चिकित्सीय रणनीति के रूप में विकसित किया गया था। दुनिया का पहला रोगाणुरोधी एजेंट "साल्वरसन" था, यह सिफलिस बीमारी के उपचार के लिए 1910 में एर्लिच द्वारा बनाया गया था। 1935 में, सल्फोनामाइड्स ड्रग्स को डोमगक और अन्य शोधकर्ताओं द्वारा विकसित किए गए थे। 1928 में फ्लेमिंग ने पेनिसिलिन की खोज की। फ्लेमिंग ने यह पाया कि स्टैफिलोकोकस ऑरियस (Staphylococcus aureus)की वृद्धि, एक दूषित नीले मोल्ड (पेनिसिलियम/Penicillium, एक कवक) के आसपास के क्षेत्र में रूक गया था। इस एंटीबायोटिक का नाम "पेनिसिलिन" रखा गया क्यूँकि यह पेनिसिलियम नमक कवक से उत्पन्न हुआ था। इस एंटीबायोटिक को 1940 के दशक में इसको सुरक्षा और प्रभावकारिता में उत्कृष्ट पाया गया। इससे द्वितीय विश्व युद्ध के सैनिकों का उपचार हुआ एवं रोगाणुरोधी कीमोथेरेपी के युग का उदय हुआ। यह दशक रोगाणुरोधी दवाओं की खोज का ''स्वर्ण युग'' कहा गया है। यह ''स्वर्ण युग'' 1940 के दशक के मध्य से 1960 के दशक तक 20 वर्षों तक चला।

इसके पश्चात अलग–अलग प्रकार की रोगाणुरोधी दवाओं का विकास किया गया । मेथिसिलिन नामक रोगाणु रोधी दवा का विकास 1959 में किया गया था। इसके पश्चात सिफेलोस्पोरीन दवाओं का उपयोग 1960 के दशक में हुआ था।

एंटीबायोटिक प्रतिरोध की समस्या जिसे पहली बार 1950 के दशक में पहचाना गया था। वैज्ञानिकों ने पाया कि पेनिसिलिन दवा जो पहले स्टेफिलोकोक्कस ऑरियस (Staphylococcus aureus) जीवाणु में असर करती थी, वह अब इसके प्रति कोई रोधक क्षमता नहीं रखती थी । इसका कारण बीटा लेक्टमेज नामक एंजाइम को पाया गया, जिसके रहने पर रोगाणुरोधी प्रतिरोध क्षमता पायी गयी ।

रोगाणुरोधी एजेंटों के विकास की प्रवृत्ति एवं दवा प्रतिरोधी बैक्टीरिया का उदय

क्र.सं.	एंटीबायोटिक	विकास का समय	प्रतिरोध देखा (वर्ष)
1.	सल्फोनामाइड्स	1930	W1940
2.	पेनिसिलिन	1943	1946
3.	स्ट्रेपटोमाइसिन	1943	1959
4.	क्लोरमफेनीकोल	1947	1959
5.	टेट्रासाइक्लिन	1948	1953
6.	एरिथ्रोमाइसिन	1952	1988
7.	वेनकोमाइसिन	1956	1988
8.	मेथिसिलीन	1960	1961
9.	एम्पिसिलिन	1961	1973
10.	सिफालोस्पिरिन	1960	1960 के अंत

एंटीबायोटिक प्रतिरोध के स्रोत

1. एंटीबायोटिक दवाओं के आउट पेशेंट पर्चेः– एंटीबायोटिक का बिना किसी चिकित्सक की सलाह पर उपलब्ध होने से उसका अति प्रयोग होता हैं और इससे एंटीबायोटिक रेजिस्टेंस उत्पन्न होता।

2. एंटीबायोटिक दवाओं के इनपेशेंट प्रिस्क्रिप्शनः– मरीजों को दवाओं की सीधी बिक्री में फार्मासिस्टों की भागीदारी से रोगाणुरोधी प्रतिरोध की समस्या बढ़ जाती है। एंटीबायोटिक का चिकित्सक की सलाह पर उपलब्ध होने से उसका सामान्य नियंतरण अस्पताल , नर्सिंग होम एवं लंबी अवधि की देखभाल सुविधाएं मुश्किल हो जाता हैं।

3. खेतों में पशुओं के चारे में एंटीबायोटिक दवाओं का उपयोगः– चारे में एंटीबायोटिक दवाओं का उपयोग करने से एंटीबायोटिक पशुओं के शरीर में परिसंचरण सामान्य सीमा से अधिक कर देता हैं और इससे एंटीबायोटिक रेजिस्टेंस का विकास होता हैं।

4. सामुदायिक सेटिंग्सः– सामुदायिक सेटिंग्स में निकट व्यक्तिगत संपर्क के साथ, भीड़ भरे घर, चाइल्ड कैअर सुविधाएं एवं स्कूल में एंटीबायोटिक रेसिस्टेंट के संक्रमण को फैलाने में सहायक होते हैं।

5. एंटीबायोटिक दवाओं की अनुपयुक्ता का निर्धारणः– एंटीबायोटिक दवाओं की अनुपयुक्ता निर्धारण वर्ष के उपरान्त इनका उपयोग करने पर ये अनउपयोगी होते हैं व पशु में संक्रमण को आसान करते हैं ।

6. एंटीबायोटिक दवाओं की अनियमित बिक्रीः– इससे उसका अति प्रयोग होता हैं और इससे एंटीबायोटिक रेजिस्टेंस उत्पन्न होता है।

7. एंटीबायोटिक दवाओं के कोर्स को पूरा करने में विफलताः– इससे एंटीबायोटिक की रोगाणुरोधी क्षमता कम हो

जाती है और जीवाणु के प्रति असफल हो जाते हैं ।

8. एंटीबायोटिक खुराक का उपयोग पशु विकास बढ़ाने वाले के रूप में:– इससे एंटीबायोटिक रेसिस्टेंट जीवाणु का फूड चैन द्वारा संक्रमण बढ़ जाता हैं।
9. एंटीबायोटिक का सामान्य खुराक से कम उपयोग करना:– इससे एंटीबायोटिक की रोगाणुरोधी क्षमता कम हो जाती हैं और जीवाणु के प्रति असफल हो जाते हैं ।
10. जेनेटिक कारक :– एक ही या विभिन्न प्रजातियों के उपभेदों के बीच एंटीबायोटिक–प्रतिरोध जीन का क्षैतिज स्थानांतरण से गैर–एंटीबायोटिक प्रतिरोधी जीव का परिवर्तन एंटीबायोटिक रेजिस्टेंस जीव में हो जाता हैं ।
11. स्व–दवा और खराब अनुपालन :– स्व–दवा और खराब अनुपालन उपभोक्ताओं के बीच रोगाणुरोधी प्रतिरोध के लिए जिम्मेदार अन्य कारक हैं।
12. एंटीबायोटिक दवाओं के ज्ञान का अभाव :– उपभोक्ताओं और जनता में एंटीबायोटिक दवाओं के उचित उपयोग के बारे में ज्ञान का अभाव है।
13. कमजोर निगरानी और नियामक प्रणाली :–कमजोर निगरानी और नियामक प्रणाली भी रोगाणुरोधी प्रतिरोध का एक महत्वपूर्ण निर्धारक है ।

AMR के प्रसार का कारण:

- रोगाणुरोधी दवा का दुरुपयोग और कृषि में अनुचित उपयोग।
- दवा निर्माण स्थलों के आसपास संदूषण शामिल हैं, जहाँ अनुपचारित अपशिष्ट से अधिक मात्रा में सक्रिय रोगाणुरोधी वातावरण में मुक्त हो जाते हैं।

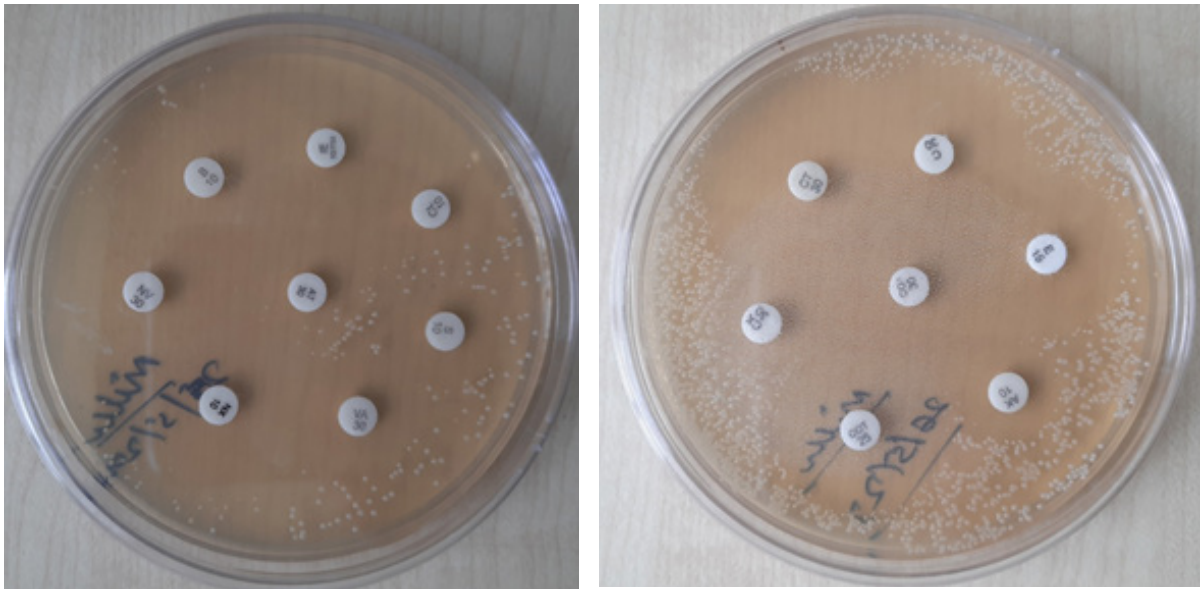

विभिन्न एंटीबायोटिक के प्रति जीवाणु का रोगाणुरोधी प्रतिरोध क्षमता

भारत में AMR

भारत में, बहुत से लोग ऐसे संक्रमणों से बीमार हो रहे हैं जिनका इलाज दवा से मुश्किल है। ऐसा इसलिए है क्योंकि बहुत से लोग एंटीबायोटिक्स खरीद रहे हैं और उनका बहुत अधिक उपयोग कर रहे हैं। एनडीएम–1 नामक एक प्रकार का गुणसूत्र है जो दुनिया भर में तेजी से फैल रहा है और इसका इलाज मुश्किल है। यह दक्षिण एशिया में शुरू हुआ लेकिन अब अन्य स्थानों को भी प्रभावित करता है। भारत में कई बच्चे ऐसे संक्रमणों से मर रहे हैं जिन्हें सामान्य दवा से ठीक नहीं किया जा सकता है। भारत में वास्तव में बहुत से छोटे बच्चे बीमार हो जाते हैं और उन कीटाणुओं से मर जाते हैं जिन्हें आमतौर पर डॉक्टरों द्वारा दी जाने वाली पहली दवा से नहीं मारा जा सकता है। यह संक्रमण हर साल 56,000 से अधिक बच्चों को होता है।

रोगाणुरोधी प्रतिरोध एक वैश्विक चिंता क्यों है?

दवा–प्रतिरोधी रोगजनकों के उद्भव और प्रसार ने नए प्रतिरोध तंत्रों का अधिग्रहण किया है, जिससे रोगाणुरोधी प्रतिरोध होता है, जो सामान्य संक्रमणों का इलाज करने की हमारी क्षमता को खतरे में डालता है। विशेष रूप से चिंताजनक बहु– और पैन–प्रतिरोधी बैक्टीरिया / Multi or Pan&resistant bacteria (जिसे ''सुपरबग'' भी कहा जाता है) का तेजी से वैश्विक प्रसार हो रहा है, जो ऐसे संक्रमण का कारण बनता है जो मौजूदा रोगाणुरोधी दवाओं के साथ इलाज योग्य नहीं हैं।

रोगाणुरोधी प्रतिरोध के उद्भव और प्रसार को क्या गति देता है?

एंटीबायोटिक प्रतिरोध का मुख्य कारण एंटीबायोटिक उपयोग है। जब हम एंटीबायोटिक्स का उपयोग करते हैं, तो कुछ बैक्टीरिया मर जाते हैं लेकिन प्रतिरोधी (resistant) जीवाणु जीवित रह सकते हैं और यहां तक कि वे वृद्धि भी कर सकते हैं। एंटीबायोटिक दवाओं का अत्यधिक उपयोग से प्रतिरोधी जीवाणु को और अधिक सामान्य बना देता है।

जितना अधिक हम एंटीबायोटिक दवाओं का उपयोग करते हैं, उतनी ही अधिक संभावना बैक्टीरिया को उनके लिए प्रतिरोधी बनने की होती है। इसका मतलब यह है कि भविष्य में जब हमें उनकी जरूरत होगी तो एंटीबायोटिक्स काम नहीं करेंगी। इसके फालस्वरूप, एंटीबायोटिक्स और अन्य रोगाणुरोधी दवाएं अप्रभावी हो जाती हैं और संक्रमण का इलाज करना मुश्किल या असंभव हो जाता है।यदि हम एंटीबायोटिक का उपयोग कम करते हैं, तो एंटीबायोटिक, जीवाणु को मारने में फिर से प्रभावी हो सकते हैं।

साफ पानी, स्वच्छता की कमी, अपर्याप्त संक्रमण रोकथाम और नियंत्रण रोगाणुओं के प्रसार को बढ़ावा देता है, जिनमें से कुछ रोगाणुरोधी उपचार के लिए प्रतिरोधी हो सकते हैं।

चुनौतियां

1. डेटा का निगरानी और उसका सुदृढ़ीकरण करना
2. एंटीबायोटिक नुस्खे प्रथाओं में सुधार करना
3. बिना पर्ची का एंटीबायोटिक दवाओं बिक्री विनियमित करना

4. खराब स्वच्छता, स्थानिक संक्रमण, कुपोषण में सुधार लाना

5. सीमित सार्वजनिक जागरूकता और सरकार की प्रतिबद्धता में सुधार करना

6. समन्वय की कमी और प्रयास का विखंडन में सुधार करना

समन्वित कार्यवाही की आवश्यकता है

रोगाणुरोधी प्रतिरोध/एएमआर एक जटिल समस्या है जिसके लिए एकजुट बहुक्षेत्रीय दृष्टिकोण की आवश्यकता है। वन हेल्थ दृष्टिकोण मानव, स्थलीय और जलीय जंतु और पौधों के स्वास्थ्य, भोजन और चारा उत्पादन और पर्यावरण में लगे कई क्षेत्रों और हितधारकों को एक साथ लाता है ताकि वे कार्यक्रमों, नीतियों, कानून और अनुसंधान के डिजाइन और कार्यान्वयन में संचार और काम कर सकें। परिचालन अनुसंधान में और नई रोगाणुरोधी दवाओं, टीकों, और नैदानिक उपकरणों के अनुसंधान और विकास में अधिक नवाचार और निवेश की आवश्यकता है, विशेष रूप से महत्वपूर्ण ग्राम–नकारात्मक बैक्टीरिया जैसे कार्बापेनेम–प्रतिरोधी एंटरोबैक्टीरियासी और एसिनेटोबैक्टर बॉमनी को लक्षित करने वाले। एंटीमाइक्रोबियल रेजिस्टेंस मल्टी पार्टनर ट्रस्ट फंड (AMR MPTF), ग्लोबल एंटीबायोटिक रिसर्च एंड डेवलपमेंट पार्टनरशिप (GARDP), AMR एक्शन फंड और अन्य फंड्स और पहलों के लॉन्च से फंडिंग की बड़ी कमी दूर हो सकती है। विभिन्न सरकारें स्वीडन, जर्मनी, यूएसए और यूनाइटेड किंगडम सहित प्रतिपूर्ति मॉडल का संचालन कर रही हैं। स्थायी समाधान खोजने के लिए और पहल की जरूरत है।

हिंदी भाषा एक ऐसी सार्वजनिक भाषा है, जिसे बिना भेद-भाव प्रत्येक भारतीय ग्रहण कर सकता है:

मदन मोहन मालवीय

खाद्य उत्पादों की गुणवत्ता युक्त पैकेजिंग प्रणाली

अरविन्द सोनी

पैकेजिंग परिवहन, भंडारण और अंतिम उपयोग के लिए खाद्य उत्पादों की गुणवत्ता को बनाए रखने की मुख्य प्रक्रियाओं में से एक है। यह गुणवत्ता में गिरावट को धीमा करता है और वितरण और विपणन को अधिक कुशल बनाता है। पैकेजिंग के चार बुनियादी कार्य हैं। सुरक्षा, संचार, सुविधा और रोकथाम। पैकेज बाहरी वातावरण से उत्पादों की रक्षा करते हैं साथ ही लिखित सामग्री, ब्रांड लोगो और ग्राफिक्स के माध्यम से ग्राहक को सूचना प्रदान करते है। खाद्य आपूर्ति श्रृंखला में उपभोग से पहले सुरक्षित वितरण और पैकेज्ड खाद्य पदार्थों का संरक्षण मुख्य लक्ष्य हैं। हालांकि, जैविक, रासायनिक और भौतिक गिरावट के कारण वितरण और भंडारण के दौरान खाद्य गुणवत्ता विशेषताओं का नुकसान होता है। बुद्धिमान पैकेजिंग प्रणाली पैक किए गए भोजन या भोजन के आसपास के वातावरण की स्थिति की निगरानी करते हैं। व्यापक अर्थ में, बुद्धिमान पैकेजिंग को विज्ञान और प्रौद्योगिकी के रूप में परिभाषित किया जाता है जो आंतरिक और बाहरी वातावरण में परिवर्तनों की निगरानी करके और पैकेज्ड खाद्य उत्पाद की स्थितियों को संप्रेषित करके निर्णय लेने की सुविधा के लिए पैकेजिंग सिस्टम के संचार कार्य का उपयोग करता है। सक्रिय पैकेजिंग सिस्टम से अलग, बुद्धिमान पैकेजिंग खाद्य पदार्थों के शेल्फ जीवन को बढ़ाने के लिए सीधे कार्य नहीं करती है। बल्कि, बुद्धि मान पैकेजिंग का उद्देश्य खाद्य आपूर्ति श्रृंखला के हितधारकों (जैसे, निर्माताओं, खुदरा विक्रेताओं और उपभोक्ताओं) को भोजन की गुणवत्ता से संबंधित जानकारी देना है। उदाहरण के लिए, एक बुद्धिमान पैकेजिंग सिस्टम दिखा सकता है कि खाद्य उत्पाद कब तक ताजा है या इसकी शेल्फ लाइफ समाप्त हो गई है या नहीं । यह थर्मोक्रोमिक स्याही या संकेतक का उपयोग करके भोजन का तापमान दिखा सकता है, और यह समय–तापमान संकेतकों का उपयोग करके भोजन के तापमान के इतिहास को प्रदर्शित कर सकता है। इसके अतिरिक्त, सक्रिय पैकेजिंग सिस्टम की प्रभावशीलता की जांच के लिए बुद्धिमान पैकेजिंग का उपयोग किया जा सकता है। स्मार्ट पैकेजिंग, यानी कुल पैकेजिंग अवधारणा जो सक्रिय और बुद्धिमान प्रौद्योगिकी से उत्पन्न होने वाले लाभों को जोड़ती है।

खाद्य पैकेजिंग में बुद्धिमान पैकेजिंग प्रणाली

संकेतक

संकेतक उपभोक्ता को किसी दृष्य परिवर्तनों द्वारा ऐसी जानकारी देते हैं जो किसी पदार्थ की उपस्थिति या अनुपस्थिति, दो या दो से अधिक पदार्थों के बीच प्रतिक्रिया की सीमा से जुड़ी होती है। उदाहरण के लिए, विभिन्न रंग तीव्रता या संकेतक ज्यामिति के साथ डाई का प्रसार। संकेतकों की बड़ी किस्मों के बावजूद, उन सभी को तीन श्रेणियों में उचित रूप से शामिल किया जा सकता है जैसे कि समय–तापमान संकेतक, ताजगी संकेतक और गैस संकेतक। ये सभी उत्पाद की गुणवत्ता और मूल्य–सुधार प्रणाली की मुख्य श्रेणी में आते हैं, जो निस्संदेह खाद्य पैकेजिंग अनुप्रयोगों के लिए सबसे व्यापक रूप से उपयोग किए जाते हैं।

तापमान संकेतक

तापमान संकेतक दिखाते हैं कि उत्पादों को एक संदर्भ (महत्वपूर्ण) तापमान से ऊपर गर्म किया गया है या ठंडा किया गया है। समय तापमान संकेतक (टीटीआई), जिसे कभी–कभी इंटीग्रेटर्स भी कहा जाता है, खाद्य आपूर्ति श्रृंखला, यानी समय के साथ तापमान परिवर्तन में किसी भी हानिकारक परिवर्तन की निगरानी करने के उद्देष्य से संकेतक की

पहली पीढ़ी है। भौतिक और रासायनिक क्षरण की गति को प्रभावित करने में, समय और तापमान दोनों की महत्वपूर्ण भूमिका के कारण, समय के साथ पैक किए गए भोजन के तापमान इतिहास के बारे में जानकारी प्राप्त करने के लिए टीटीआई ने बढ़ती रुचि प्राप्त की है। टीटीआई को उपयोगकर्ता के अनुकूल और आसानी से उपयोग करने योग्य उपकरणों के रूप में पहचाना जाता है, जिनकी जानकारी उपभोक्ताओं द्वारा सीधे संबंधित होने के रूप में आसानी से समझी जाती है। आमतौर पर, वे छोटे, स्वयं–चिपकने वाले लेबल होते हैं जो एकल पैकेज या बड़ी पैकेजिंग व्यवस्था (जैसे, कंटेनर) से जुड़े होते हैं।

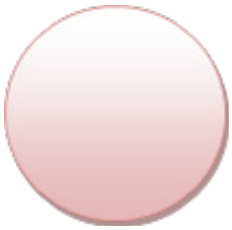

ताजा

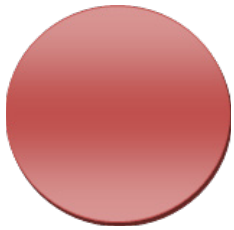

ताजा व उपयोग लायक

ताजा की गारंटी नहीं

ताजगी संकेतक

ताजगी संकेतक पूरे भंडारण और परिवहन में खाद्य उत्पादों की गुणवत्ता की निगरानी को सक्षम बनाता है। ताजगी का क्षय हानिकारक परिस्थितियों के संपर्क में आने और अधिक शेल्फ जीवन दोनों के कारण हो सकता है। ताजगी संकेतक माइक्रोबियल विकास या रासायनिक परिवर्तनों के संबंध में उत्पाद की गुणवत्ता के बारे में प्रत्यक्ष जानकारी प्रदान करते हैं। उदाहरण के लिए, ताजगी संकेतक कुल वाष्पशील मूल नाइट्रोजन सामग्री (TVBN) पर आधारित होते हैं, अर्थात, वाष्पशील अमाइन, जो भोजन के खराब होने के रूप में बनते हैं । मांस उत्पादों की गुणवत्ता निर्धारित करने के लिए हाइड्रोजन सल्फाइड संकेतकों का उपयोग किया जा सकता है। अन्य ताजगी संकेतक अन्य माइक्रोबियल मेटाबोलाइट्स, जैसे इथेनॉल, डायसेटाइल और कार्बन डाइऑक्साइड के प्रति संवेदनशीलता पर आधारित होते हैं। ताजगी संकेतकों के वाणिज्यिक अनुप्रयोगों में टॉक्सिनगार्डी बाई टॉक्सिन अलर्ट इंक. शामिल हैं।

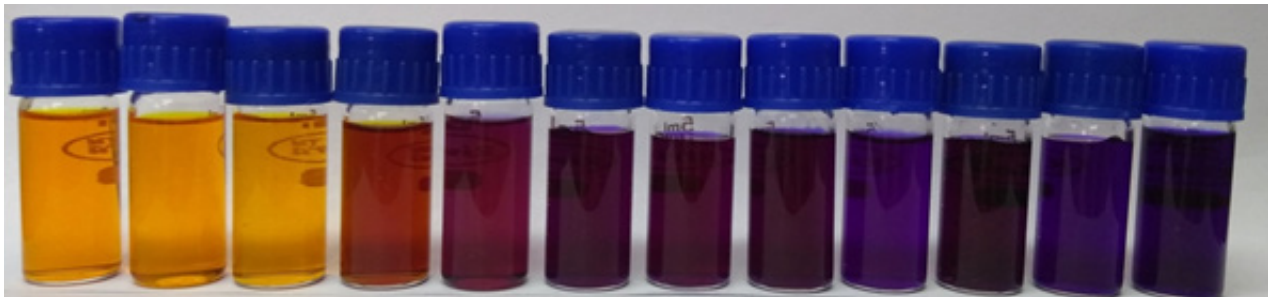

गैस संकेतक

गैस सांद्रण संकेतक, लेबल के रूप में, पैकेज के अंदर रखे जाते हैं, ताकि पैकेजिंग सामग्री में पारगमन की घटना के कारण आंतरिक वातावरण में परिवर्तन की निगरानी की जा सके। गैस संकेतकों का उपयोग या तो सक्रिय पैकेजिंग घटकों (जैसे, O_2 और CO_2) की प्रभावकारिता का आंकलन करने के लिए या रिसाव की घटना का पता लगाने

के लिए किया जाता है। चूंकि संकेतक पैकेज के अंदर रखे जाते हैं, इसलिए डिजाइन के दौरान कुछ आवश्यकताओं को पूरा किया जाना चाहिए।

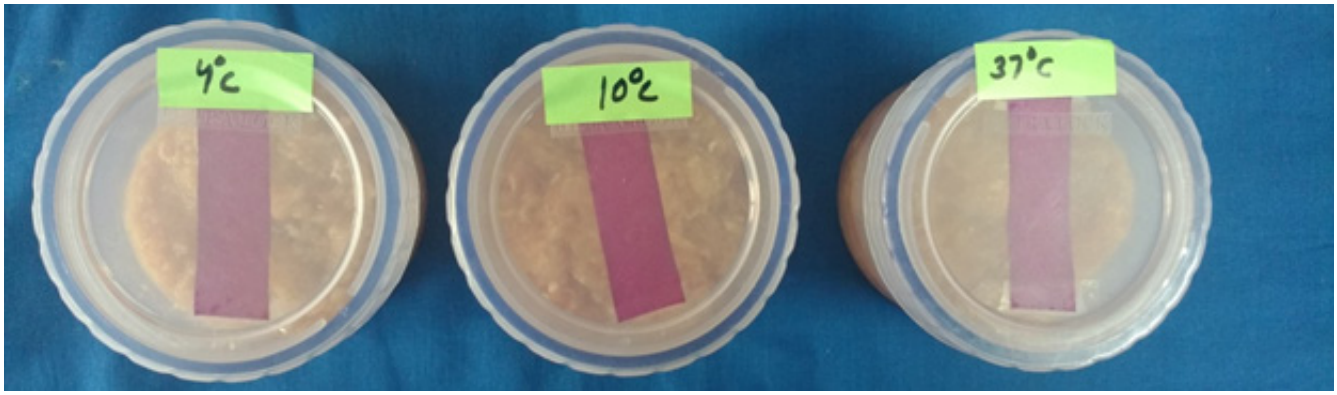

डेटा वाहक

डेटा वाहक खाद्य आपूर्ति श्रृंखला के भीतर सूचना प्रवाह को खाद्य गुणवत्ता और सुरक्षा के लाभ के लिए अधिक कुशल बनाते हैं। डेटा वाहक भोजन की गुणवत्ता की स्थिति के बारे में किसी भी प्रकार की जानकारी प्रदान नहीं करते हैं, बल्कि स्वचालितकरण, पता लगाने की क्षमता, चोरी की रोकथाम, या नकली सुरक्षा के लिए अभिप्रेत हैं। इसके अलावा, डेटा वाहक को अक्सर तृतीयक पैकेजिंग (जैसे, मल्टी–बॉक्स कंटेनर, शिपिंग क्रेट, पैलेट, बड़े पेपरबोर्ड पैकेज) पर रखा जाता है। खाद्य पैकेजिंग उद्योग में सबसे महत्वपूर्ण डेटा वाहक उपकरण बारकोड लेबल और आरएफआईडी टैग हैं, जो सुविधा बढ़ाने वाली बुद्धिमान प्रणालियों की मुख्य श्रेणी से संबंधित हैं ।

सेंसर

भविष्य के बुद्धिमान पैकेजिंग सिस्टम के लिए सेंसर को सबसे आशाजनक और नवीन तकनीक माना जाता है। एक सेंसर एक प्रणाली है जिसमें नियंत्रण और प्रसंस्करण इलेक्ट्रॉनिक्स, एक इंटरकनेक्शन नेटवर्क और सॉफ्टवेयर है। एक भौतिक या रासायनिक संपत्ति का पता लगाने या मापने के लिए एक संकेत देकर, जिस पर डिवाइस प्रतिक्रिया करता है, एक सेंसर का उपयोग ऊर्जा या पदार्थ का पता लगाने, पता लगाने या मापने के लिए किया जाता है। व्यवहार में, एक सेंसर एक मात्रात्मक आउटपुट बनाने के लिए रासायनिक या भौतिक मात्रा का जवाब देता है जो माप के समानुपाती होता है। अधिकांश सेंसर चार प्रमुख घटकों से बने होते हैं।

विधायी विचार

ऐतिहासिक और तकनीकी कारकों के अलावा, खाद्य पैकेजिंग उद्योग में बुद्धिमान प्रणालियों के व्यावसायिक अनुप्रयोग को कुछ महत्वपूर्ण विचारों का सामना करना पड़ा है। उपभोक्ताओं की धारणाएं और विधायी पहलू, विशेष रूप से, प्रमुख कारक हैं। खाद्य पैकेजिंग में बुद्धिमान उपकरणों के बाजार में प्रवेश में बाधा डालने वाले मुख्य मुद्दों में से एक है उपभोक्ताओं द्वारा पैकेज से अलग गैर–खाद्य वस्तुओं की स्वीकृति। सैशे, इंसर्ट, स्पॉट और डॉट्स को कभी–कभी अनावश्यक माना जाता है, यानी इंटेलिजेंट सिस्टम का लाभ अभी भी स्पष्ट नहीं है। अन्य परिस्थितियों में, उपभोक्ता चिंतित हैं कि अभिनव पैकेज उन्हें उत्पाद की गुणवत्ता के बारे में गुमराह कर सकते हैं। हाल के वर्षों में, खुदरा विक्रेताओं ने दो मुख्य कारणों से बुद्धिमान प्रणालियों के उपयोग पर पुनः विचार किया गया है।

- बुद्धिमान उपकरणों (जैसे, संकेतक) द्वारा प्रदान किए गए अलर्ट और संदेश उपभोक्ताओं को केवल नई प्रदर्शित वस्तुओं को खरीदने के लिए प्रेरित कर सकते हैं, जिससे बिना बिके खाद्य पदार्थों की मात्रा बढ़ जाती है ।

- कुछ डिवाइस (जैसे, जजपे) तापमान के दुरुपयोग को प्रदर्शित कर सकता है जो भोजन के खुदरा विक्रेताओं की अलमारियों तक पहुंचने से पहले हुआ था। हालांकि, आपूर्ति श्रृंखला में विफल कदम (और इस तरह उस दुरुपयोग की जिम्मेदारी) की स्पष्ट रूप से पहचान करना मुश्किल हो सकता है।

वैश्विक बाजार

पैकेजिंग एक आवश्यक घटक बाजार है जो लगभग हर उद्योग को प्रभावित करता है। प्रत्येक उत्पाद, यहां तक कि जैविक रूप से उगाए गए खाद्य पदार्थों को परिवहन, हैंडलिंग, भंडारण और उपयोग के दौरान सुरक्षा के लिए अपने अस्तित्व के दौरान किसी प्रकार की पैकेजिंग की आवश्यकता होती है। यह सभी खाद्य और पेय पदार्थों के 99.8% में तब्दील हो जाता है जो एक समय में किसी प्रकार की पैकेजिंग में संलग्न होते हैं। इस कारण से, खाद्य और पेय उद्योग लगातार नई तकनीकों के साथ विकसित हो रहा है जो उत्पादों की गुणवत्ता को बढ़ाता है, शेल्फ–लाइफ को बढ़ाता है, और अपशिष्ट और खराब होने को कम करके उत्पाद की लाभप्रदता को सकारात्मक रूप से प्रभावित करता है पिछले एक दशक में, सक्रिय और बुद्धिमान पैकेजिंग ने महत्वपूर्ण वृद्धि और परिवर्तन का अनुभव किया है क्योंकि नए उत्पादों और प्रौद्योगिकियों ने खाद्य और पेय पैकेजिंग के पारंपरिक की यथास्थिति को चुनौती दी है। पहली बार 1970 के दशक के मध्य में जापान के बाजार में सक्रिय और बुद्धिमान पैकेजिंग सामग्री और लेख पेश किए गए, केवल 1990 के दशक के मध्य में यूरोप और संयुक्त राज्य अमेरिका में उद्योग का ध्यान आकर्शित किया। बुद्धिमान पैकेजिंग के उज्ज्वल भविष्य के कई कारण हैं।

ताजगी और सुरक्षा का महत्व बढ़ेगा।

- उपभोक्ताओं की मांग बढ़ेगी।
- वैश्वीकरण और विपणन क्षेत्र का विस्तार लॉजिस्टिक श्रृंखलाओं को लंबा बनाता है, जिससे पता लगाने की क्षमता पर अधिक मांग होती है
- संपूर्ण खाद्य आपूर्ति श्रृंखला में उद्योग और खुदरा बिक्री के लिए आंतरिक नियंत्रण की सुविधा।

निष्कर्ष

वर्तमान में विभिन्न उभरती हुई प्रौद्योगिकियों की जांच की जा रही है और सभी खाद्य आपूर्ति श्रृंखला में विभिन्न अभिनेताओं की जरूरतों और आवश्यकताओं को पूरा करने वाले नए बुद्धिमान खाद्य पैकेजिंग सिस्टम में एकीकृत होने के परिप्रेक्ष्य की पेशकश करते हैं। इस बात के बावजूद कि इन उभरती प्रौद्योगिकियों पर शोध अपरिपक्व है और अभी भी बहुत सी बाधाओं को दूर करने की आवश्यकता है, यह उम्मीद की जाती है कि अगली पीढ़ी की बुद्धिमान पैकेजिंग खाद्य उत्पादों के प्रवाह, सुरक्षा और गुणवत्ता की बेहतर निगरानी की अनुमति देगी । इससे निस्संदेह खाद्य आपूर्ति श्रृंखलाओं का बेहतर नियंत्रण होगा (चाहे स्मार्ट पैकेजिंग सिस्टम और निर्णय समर्थन प्रणाली द्वारा समर्थित है या नहीं), और उनके समग्र प्रदर्शन और सुरक्षा में और सुधार होगा।

देवनागरी ध्वनिशास्त्र की दृष्टि से
अत्यंत वैज्ञानिक लिपि है:

रविशंकर शुक्ल

ऊन समिश्रित वस्त्र निर्माण हेतु कृषि अवशेष गन्ने की खोई से रेशों का निष्कर्षण

प्रतिष्ठा वर्मा, अजय कुमार, नीलम एम. रोज, विनोद कदम और सरोज यादव

सारांश

गन्ना खोई, गन्ने की फसल का, एक प्रमुख सेल्यूलोज रेशेदार कृषि अवशेष है, जोकि रस निकालने के बाद बच जाता है । कृषि अवशेष उपयोग के क्रम में इससे रेशों के निष्कर्षण व वस्त्र निर्माण में उपयोग के क्रम में यह शोध लक्षित किया गया है। इस शोध में गन्ना खोई के ऊपरी भाग (रिंड) को पिथ (आंतरिक गूदा भाग) से अलग किया गया क्योंकि इसमें पिथ (आंतरिक गूदा भाग) की तुलना में अधिक रेशें होते हैं। रेशों को निकालने के लिये, गन्ना खोई के ऊपरी भाग (रिंड) को 1.5% क्षार (सोडियम हाइड्रॉक्साइड - NaOH) मिश्रण के साथ 100^{oC} तापमान पर 90 मिनट के लिये उबाला गया। इसके बाद निकले हुये रेशों की ताकत और औसत व्यास मापी गयी। जो कि क्रमशः ताकत–21.43gm/tex और औसत व्यास–147.26µm प्राप्त हुई। शोध के परिणाम से पता चला कि गन्ना खोई से निकाला गया रेशा मोटा है। इसे ऊन के साथ मिलाकर धागे के निर्माण के लिये उपर्युक्त बनाने के लिये रेशों के औसत व्यास को कम करने की और इसके बारे में अधिक जानकारी प्राप्त करने की आवश्यकता है। कम व्यास का रेशा, गन्ना खोई के ऊपरी भाग (रिंड) को अधिक मात्रा के क्षार (सोडियम हाइड्रॉक्साइड - NaOH) मिश्रण में भिगोने से (प्रीसोकिंग) एवं बीटिंग (रेशों को कूटने) से या दोनों प्रक्रिया के संयोजन से प्राप्त किया जा सकता है। भविष्य में, गन्ना खोई के रेशों को ऊन के साथ मिलाकर बनाया गया धागा, घरेलू वस्त्रों और परिधानों के निर्माण में उपयोगी होंगे।

परिचय

गन्ना विश्व स्तर पर उगाई जाने वाली एक व्यवसायिक फसल है, इसका उत्पादन भारत में भी बहुत अधिक मात्रा में होता है और इससे चीनी और गुड़ बनाया जाता है। गन्ना खोई गन्ने से रस निकालने के बाद बचा हुआ सेल्यूलोसिक रेशेदार कृषि अवशेष है। यह कृषि अवशेष या तो ईधन के रूप में जलाया जाता है या कचरे में फेंक दिया जाता है क्योंकि यह कृषि अवशेष हालांकि प्राकृतिक है पर अपनी कठोरता के कारण विघटन में अधिक समय लेता है। अतः इसका निस्तारण एक समस्या है। इसलिये, वर्तमान शोध में इस कचरे को उपयोगी बनाने के क्रम में इससे रेशों के निष्कर्षण का प्रयास किया गया। इस शोध का प्रमुख उद्देश्य गन्ना खोई के रेशों को ऊन के साथ मिलाकर धागा बनाने की एवं वस्त्र निर्माण की सभांवनाओ का पता करना है।

उपयोगिक वस्तुयें एवं कार्यविधि

वर्तमान शोध के लिये कच्चे मालस्वरूप भारत के उत्तर प्रदेश राज्य से गन्ना खोई एकत्रित की गई। गन्ना खोई को नरम करने के लिये पांच दिनों के लिये प्लास्टिक टैंक के अंदर पानी में भिगोया गया। पांच दिनों के बाद चाकू की मद्द से गन्ना खोई के ऊपरी भाग (रिंड) को पिथ से अलग किया गया। वास्तविक रेशों को प्राप्त करने के लिये गन्ना खोई के गांठ वाले हिस्से को काट दिया गया। इसके बाद गन्ना खोई के ऊपरी भाग (रिंड) से नमी हटाने के लिये धूप में सुखाया गया और आगे की रसायनिक विधि में रेशें निकालने के लिये नमी मुक्त डब्बे में संग्रहित किया गया। इस शोध में निष्कर्षण हेतु रसायनिक उपचरण के क्रम में गन्ना खोई के ऊपरी भाग (रिंड) को 90 मिनट

के लिये 100^{oC} तापमान पर, 1.5% क्षार (सोडियम हाइड्रॉक्साइड . NaOH) मिश्रण में उबाला गया। इसके बाद, रेशों को पानी में धुलने के बाद क्षार मुक्त बनाने के लिये 10: एसिटिक एसिड मिश्रण में डालकर फिर से पानी से धुला गया। रेशों के निकलने के बाद, उनके भौतिक और रसायनिक मात्रा के मापदण्ड मापे गये। गन्ना खोई से रेशें निकालने की विधि निम्नलिखित फ्लो चार्ट में दी गयी है:

परिणाम

शोध के परिणाम से पता चला है कि 1.5% क्षार (सोडियम हाइड्रॉक्साइड - NaOH) मिश्रण में उबालने पर लिगनिन भाग के विघटन के फलस्वरूप रेशे रिंड से अलग हो जाते हैं। रेशों के व्यास का मापन साफटवेयर युक्त डिजिटल माइक्रोस्कोप के माध्यम से किया गया। रेशों का औसत व्यास 147-26µm रहा। रेशों की बंडल ताकत 21. 43हउध्जमग है, जोकि समकक्ष ऊन की बंडल ताकत 13-14gm/tex से काफी अधिक है। इसमें नमी की मात्रा (8.23%) और नमी पुनः प्राप्त (8.96%) है जो कि अन्य सेल्यूलोसिक रेशों के समान है। प्राप्त रेशे कठोर और कम लचीले हैं, जोकि इंगित करते हैं कि रेशों को बांध कर रखने वाले रसायनिक अपव्यय लिगनिन व हेमिसेल्यूलोस की मात्रा अभी

भी अधिक है। अतः वर्तमान स्थिति में ये ऊन के साथ समिश्रित कर कपड़े हेतु धागा बनाने के लिये उपर्युक्त नही हैं, इन्हें उपयोग लायक बनाने के लिये लचीला और मुलायमित युक्ति करने की आवश्यकता है । जिसके लिये निष्कर्षण के समय रिंड भाग को अधिक सांद्रता युक्त क्षार (सोडियम हाइड्रॉक्साइड - NaOH) से उपचरित किया जा सकता है।

1

1.गन्ना खोई का ऊपरी भाग (रिंड)

2

2.गन्ना खोई से निकले हुए रेशे

3

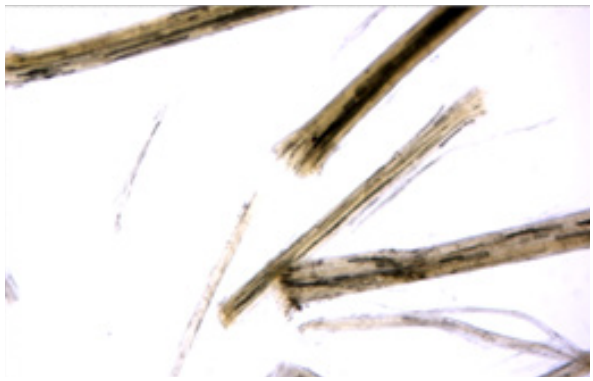

3.गन्ना खोई के रेशों का सुक्ष्मदर्शिक चित्र

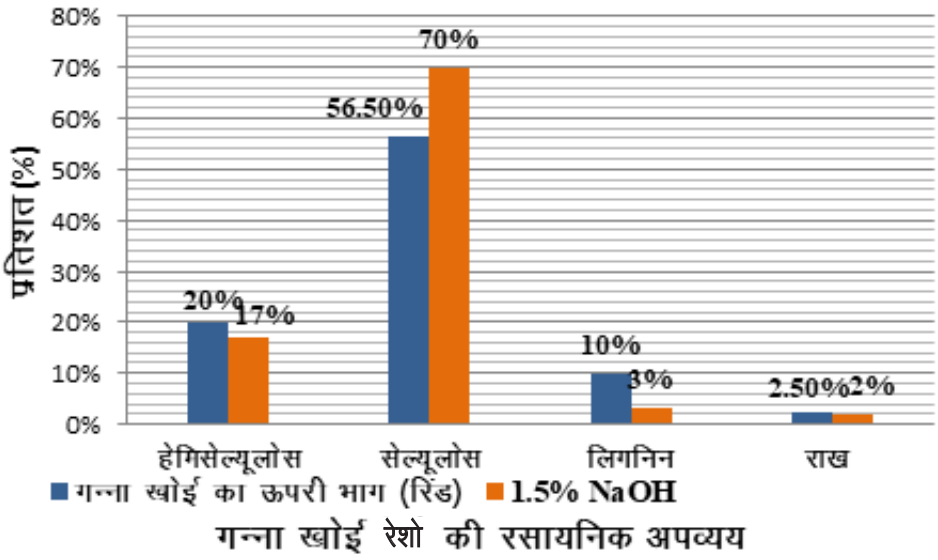

गन्ना खोई रेशे की भौतिक विशेषताएं	
औसत व्यास (Fibre Diameter)	147.26 µm
बंडल ताकत (Bundle Strength)	21.43 g/tex
नमी की मात्रा (Moisture Content)	8.23%
नमी पुनः प्राप्त (Moisture Regain)	8.96%

निष्कर्ष

शोध के निष्कर्षो के अनुसार, गन्ना खोई से निकाला गया रेशा मोटा और कठोर है, इसलिये रेशे के व्यास कम करने और ऊन के साथ मिलाकर धागा बनाने के लिये उपर्युक्त बनाने के लिये, अधिक शोध की आवश्यकता है। जिसमें क्षार (सोडियम हाइड्रॉक्साइड - NaOH) की मात्रा बढ़ाने से एवं इस निष्कर्षण मिश्रण में भिगोने से (प्रीसोकिंग) एवं बीटिंग (रेशों को कूटने) से या दोनों प्रक्रिया के संयोजन से प्राप्त किया जा सकता है। भविष्य में, ये ऊन के साथ मिलाकर धागा बनाने, घरेलू वस्त्रों और परिधानों के निर्माण में उपयोगी होंगे।

भूमिका

लेखिका, इस शोध में प्रदान करायी गई सभी सुविधाओं एवं संसाधनो के लिये, भाकृअनुप–केन्द्रीय भेड़ और ऊन अनुसंधान संस्थान, अविकानगर, भारत के निदेशक की आभारी है। प्रतिष्ठा वर्मा, शोध में की गयी मद्द के लिये, सीसीएसएचएयू, हिसार और भाकृअनुप–केन्द्रीय भेड़ और ऊन अनुसंधान संस्थान, अविकानगर के सभी गुरूजनों एवं सलाहकारों की भी आभारी है। वह यूजीसी नेट जेआरएफ फेलोशिप के लिये यूजीसी की भी आभारी है।

हिंदी राष्ट्रीय
एकता का प्रतीक है:

सुमित्रानंदन पंत

बकरी प्रजाति के विशिष्ठ रेशें

सीको जोस, अजय कुमार एवं एल एमय्यपन

परिचय

ऊनी फैशन वस्त्रादि भेड़ के अलावा अन्य जानवरों से लिए गये महीन बालों के रेशों या उनके समिश्रण जिनमें बकरी, ऊंट और ऊंट परिवार के अन्य पशु शामिल से बनते हैं। इन रेशों की कम उपलब्धता एवं उच्च लागत के कारण इन्हें वस्त्रादि में नवीनता प्रभाव प्रदान करने के लिए अक्सर महीन ऊन के रेशों (20–30 माइक्रोमीटर) या अन्य वस्त्र रेशों, जैसे रेशम, विस्कोस रेयान, नायलॉन और कपास के साथ मिलाया जाता है। विशिष्ट रेशें शब्द इन महीन बालों के फाइबर के सबसे बड़े उपसमूह को संदर्भित करता है, जिन्हें आमतौर पर इन उत्पादित करने वाले पशु की उत्पत्ति के अनुसार वर्गीकृत किया जाता है। इनमें से बकरी श्रेणी की ऊन नस्लों कई बकरी नस्लों में पाए जाने वाली ऊन, एक महत्वपूर्ण वर्ग है और यह इस क्रम में अत्याधिक कीमती ऊन में से एक है। बकरी परिवार से प्राप्त ऊन की गुणवत्ता के आधार पर, उन्हें मोहायर, अंगोरा, कैशमेयर, पश्मीना, पाइगोरा, शंकर नस्ल की कैशगोरा और सामान्य बकरी के बालों के रूप में वर्गीकृत किया गया है। यह लेख बकरियों से प्राप्त विशिष्ठ रेशों का परिचय देता है।

1. **मोहायर रेशें –** मोहायर, विशिष्ट रेशों की ऊन में एक प्रमुख श्रेणी है, ये अंगोरा बकरियों के लम्बे चमकदार ऊनी रेशें है। यह रेशें अपनी चमक, चिकनाई और मजबूती के लिए प्रसिद्ध हैं, इसके बने वस्त्रादि दिखने में बहुत सुन्दर होते है। अंगोरा बकरियाँ मूलतः टर्की की प्रवासी है दुनिया की 60 प्रतिशत मोहेयर ऊन दक्षिण अफ्रीका में उत्पादित होती है, शेष 40 प्रतिशत ऊन का उत्पादन अमेरिका, तुर्की, अर्जेन्टीना, ऑस्ट्रेलिया और न्यूजीलैण्ड जैसे अन्य देशों में होता है। अंगोरा बकरी से प्राप्त मोहायर रेशों में उच्च तन्य (तनाव सहने की क्षमता) शक्ति होती है और ये रेशे अत्यधिक सफेद, रेशम के समान चमकदार होते हैं। ऊन के कर्ल द्वारा एक साथ रखे गए मोहायर रेशों के गुच्छे, साथ में तेल की हल्की चमक और एक अच्छा, लम्बा स्टेपल (गुच्छे की लम्बाई, गुच्छ बलय (क्रिम्प) व तैलीय चमक युक्त होना एक उत्कृष्ट मोहायर ऊन की विशेषताएं हैं। अंगोरा बकरियों से प्राप्त ऊन की औसत लम्बाई 12 से 15 सेमी तक होती है, इनसे ऊन का कतरन वर्ष में दो बार किया जाता है, जिसमें प्राप्त ऊन की औसत उपज 2.5–3.0 किग्रा. प्रति कतरन होती है **(हंटर 1993)**

2. **कैशमेयर रेशें –** कश्मीरी बकरी के अन्डरकोट में उपिस्थत बालों को कैशमेयर रेशे (कैप्रा हिर्कस लैनिगर) कहा जाता है। कश्मीरी बकरी को सबसे पहले मध्य और दक्षिण पश्चिम एशिया के हिमालयी क्षेत्रों में पालतू बनाया गया था, बाद में, यह विशेष रूप से चीन और मंगोलिया में फैल गई। चीन दुनिया के अधिकांश कैशमेयर रेशों (70 प्रतिशत) का उत्पादन करता है, इसके बाद मंगोलिया (70 प्रतिशत), ईरान, अफगानिस्तान ओर भारत आते हैं। उच्चतम गुणवता वाले कैशमेयर रेशो की औसत मोटाई (17 माइक्रोमीटर) माइक्रोन होती है। जो मुख्यत चीन में उत्पादित होता है, इसका उपयोग निटिड व बुने हुए कपडें बनाने के लिए किया जाता है। भारतीय कैशमेयर रेशों का उपयोग कई प्रकार के शॉल , स्टोल, स्कार्फ और स्वेटर बनाने के लिए किया जाता है, जबकी ईरानी और अफगान कश्मीरी कम गुणवता वाले होते हैं। विशिष्ट रेशो की श्रेणी में कैशमेयर रेशे, सिल्क के समान चम्ब,

सौंदर्य अपील, असाधारण कोमलता, दुलर्भता व सम्मोहक गुणो **(मैकग्रेगर और बटलर 2009; मैकग्रेगर 2003)** के कारण विलासिता युक्त रेशो के रुप में अद्वितीय प्रतिष्ठा प्राप्त है।

अंगोरा बकरी

कश्मीरी (कैशमेयर) बकरी

3. **पश्मीना रेशें** – पश्मीना रेशे जम्मू और कश्मीर प्रांत के लेह और लद्दाख क्षेत्र की घरेलू कश्मीरी बकरीयों से प्राप्त होते हैं। ये विशिष्ठ रेशें कश्मीरी बकरीयों से प्राप्त होने वाले ऊनी रेशो में सबसे अच्छी गुणवता युक्त रेशें होते हैं **(कोल एट अल।1987; ठाकुर एट अल। 2005)**। "पशमीना" नाम फारसी शब्द "पश्म" से आया है, जिसका अर्थ "नरम सोना", और इसे विशिष्ट रेशो के राजकुमार के रुप में भी जाना जाता है। अन्य रेशो की तुलना में इसकी मोटाई (9–14 माइक्रोमीटर), अधिक गरमाहट, कम वजन और अत्यधिक कोमलता के कारण इससे बने वस्त्रों की यूरोपीय फैशन वस्त्रों **(आचार्य और शर्मा 1980)** में बहुत मांग है। प्रत्येक बकरी के प्रति वर्ष केवल 250 ग्राम रेशे ही प्राप्त होता है जिसका वर्तमान विक्रय मूल्य 12500/– रुपये है। पश्मीना रेशें ऊन की श्रेणी में महीनतम है इसकी सरचंना में ऑर्थो और पैरा कॉर्टेक्स के लिए क्रमशः 50.4 और 49.6% की संरचना है। क्योंकि रेशों की उपत्वचा अन्य महीने ऊन के समान बाहर नही निकली होती है फलस्वरुप ये रेशें अत्याधिक चिकने व चमकदार होते हैं हालांकि ये रेशें महीन ऊन की तुलना में 10 प्रतिशत और मोहायर रेशों की तुलना में लगभग 40 प्रतिशत कमजोर होते हैं। इसके अतिरिक्त पश्मीना रेशों का क्यूटिकल महीन ऊन की तुलना में अधिक हाइड्रोफिलिक होता है **(फ्रैंक 2001)** के अनुसार पश्मीना रेशों में महीन ऊन के सापेक्ष अधिक ध्रुवीय अमीनो एसिड (सेरीन, थ्रेओनीन और टायरोसिन) का होना इसके अधिक हाइड्रोफिलिक (जलग्रही) होने का कारण है।

4. **पायगोरा रेशें** – पायगोरा विशिष्ट रेशों का उत्पादन मुख्यतः कनाडा के डेल्ला क्षेत्र में होता है यह पायगोरा नस्ल की बकरी से प्राप्त होता है जो कि सफेद अंगोरा बकरी व पाइरसी बकरी की एक संकर नस्ल है। पायगोरा बकरी द्वारा तीन विभिन्न प्रकार के ऊनी रेशें (A,B,C) प्राप्त होते हैं। जो अत्याधिक नरम, लम्बे व रेशमी गुण युक्त होते हैं। इन रेशों का प्रमुख उपयोग हस्त कताई द्वारा धागा बनाने में किया जाता है ऊन में महीन रेशें व गार्ड रेशों दोनो ही होते है, प्राप्त रेशों का A श्रेणी के रेशों से गार्ड रेशों को अलग कर हस्त निर्मित धागा तैयार करते हैं। B श्रेणी के रेशें क्योंकि A श्रेणी के रेशों से बेहतर (महीन) होते हैं अतः इनसे चमकयुक्त हस्तनिर्मित व वर्स्टेड धागे बनाया जाना सम्भव होता हैं। मशीन द्वारा डीहेयरिंग के बाद, C श्रेणी

के रेशें प्राप्त होते हैं जिनका उपयोग उत्तम कश्मीरी यार्न **(लिसा 2014, पायगोरा ब्रीडर्स एसोसिएशन 2013)** बनाने के लिए किया जाता है। पाइगोरा और सिल्क समिश्रण से निर्मित विशिष्ट पैटर्न व सहजता युक्त (Smoothness) स्कार्फ की अत्यधिक मांग है।

चांगथांगी (पश्मीना) बकरी

पायगोरा बकरी

5. **कैशगोरा रेशें –** कैशगोरा रेशों का उत्पादन न्यूजीलैण्ड में प्रमुखता से किया जाता है। कैशगोरा रेशें कैशगोरा बकरी से प्राप्त होते हैं, जो कि अंगोरा कैशमेयर बकरियों की एक संकर नस्ल है, कैशगोरा बकरी से वर्ष में दो बार ऊन कतरी जाती है। प्राप्त ऊनी रेशों की मोटाई व लम्बाई क्रमशः 18–23 माइक्रोमीटर व 30–90 मिलीमीटर होती है। कैशगोरा बकरी से प्राप्त ऊन के भौतिक गुण मोहेयर रेशों के समकक्ष होते हैं, कैशगोरा ऊन तीन श्रेणी में लिग्रे या (18.5 mm), लिग्रे एमेराउड (20 mm) और लिग्रे सैफिर (18.5 mm) उपलब्ध है। वर्ष 1990 में कैशगोरा ऊन का उत्पादन लगभग 200टन था जो एक दशक बाद घट कर 120 टन प्रति वर्ष रह गया था। कैशगोरा रेशों का औसत व्यास 19–20 µm होता है, ये रेशें अपनी चिकनी सतह के फलस्वरूप कैशमेयर ऊन की तरह प्रतीत होते हैं। क्योंकि कैशगोरा रेशों की तन्य शक्ति बेहतर होती है, व इनका अच्छी स्टेपल लम्बाई लिए होते हैं अतः इनसे गार्ड रेशों (Guard Hair) अलग करने के उपरान्त महीन ऊन के समान वर्स्टेड कताई प्रक्रिया द्वारा धागा बना कर उच्च गुणवत्तायुक्त वस्त्रादि का निर्माण किया जाता है कैशगोरा रेशों से बने धागें निटिंग के सापेक्ष बुनाई के लिए अधिक उपयुक्त होते हैं और इनसे विभिन्न बुने हुए वस्त्रादि जैसे – हल्के सूट, ऊनी जैकेट, स्कार्फ, स्टोल आदि बनाये जाते हैं। **(स्कूयूमनन, 1990य कोजटोवस्कि, 2012)**

6. **ओरिनबर्ग बकरी के रेशें –** ओरिनबर्ग बकरी मुख्यतः रूस के ओरिनबर्ग, चेल्यबिस्क व अत्युबिंरक जिले में पाई जाती है उस प्रक्षेत्र में ओरिनबर्ग बकरी के रेशें वस्त्रादि में उपयोग होने वाली ऊन की एक प्रमुख स्त्रोत है। ओरिनबर्ग बकरी से ऊन में लम्बे व अत्यधिक चमकीले गार्ड रेशें व महीन अन्तर रेशें (Under coat) प्राप्त होते हैं इन रेशों की औसत मोटाई (व्यास) 15 µm होता है व रेशों का औसत उत्पादन 180 से 400 ग्राम प्रति बकरी तक रहता है। ओरिनबर्ग बकरी से प्राप्त अन्तर रेशें महीन व एक समान व्यास के होते हैं व शाल निर्माण के लिए सर्वधा उपयुक्त होते हैं। पारम्परिक ओरिनबर्ग शालों का इतिहास लगभग 300 वर्षो से भी अधिक है तथा ओरिनबर्ग रेशें अपनी कोमल प्रकृति के लिए प्राख्यात है **(ओरखीओव, 2007)**। इन शालों के निर्माण के लिए महीन ओरिनबर्ग रेशों को

कतली पर हाथ द्वारा कात कर तैयार करते हैं। अत्याधिक माँग को देखते हुए ओरिनबर्ग रेशों व रेशम समिश्रित धागें का निर्माण किया जाता है जो कि कैशमेयर या मोहेयर रेशों के बने शाल के समान प्रतीत होते हैं। कम लागत में व्यावसायिक उत्पादन के क्रम में ओरिनबर्ग रेशों को रेयान, नायलोन व अन्य सिन्थेटिक रेशों के साथ समिश्रित कर धागे का निर्माण कर, शॉल व स्कार्फ बनाये जाते हैं। **(रसक्लोथिंग, 2015य टेरलेट्स्की, 2015)**

कैशगोरा बकरी

ओरिनबर्ग बकरी

7. सामान्य बकरी के बाल – बकरी के बालों का उत्पादन मुख्यतः एशियाई देशों में होता है, एक पूर्ण वृद्धि वाले जानवर (बकरा/बकरी) के बालों का व्यास (मोटाई) 50 से 200 μm तक होता है हालांकि शिशु बकरी के बाल की मोटाई वयस्क से भिन्न 15 से 19 μm तक होती है। वयस्क बकरी के बालों का उपयोग लेखन ब्रश बनाने के लिए सबसे अधिक किया जाता है। इन बालों को अल्प मात्रा में ही इंटरलाइनिंग बनाने के लिए उपयोग किया जाता है, जबकि बड़ी मात्रा का इनका उपयोग ऑटोमोटिव क्षेत्र के लिए सस्ते फेल्ट और कालीन बनाने के लिए किया जाता है। सामान्य बकरी के बालों का कुल उत्पादन लगभग 2300 टन प्रति वर्ष है व इनका निर्यात प्रमुख रूप से अर्जेंटीना व ग्रीस द्वारा किया जाता है।

सामान्य बकरी के बाल बेल्टिंग के लिए धागा बनाने के लिए उपयोग में लिए जाते हैं तो इनका अधिकतम लम्बाई में होना, काफी साफ होता व मोटाई मध्यम/महीन होना आवश्यक होता है। इन धागों से ''बालो वाले लुक'' के फैशन आइटमों का निर्माण कर विक्रय करते है। कई अध्ययनों के अनुसार, बकरी के बाल, ऊन और प्रोप्लॉन के 60:20:20 मिश्रण भारतीय विनिर्देशों मानक ISI:1721-1960 को पूरा करते हैं, **(गुप्ता 1988, डेलल एट अल 2001)**। भारत में उत्पादित बकरी के बालों का उपयोग स्थानीय कलाकारों द्वारा किया जाता है। बकरी के बालों को निरन्तर उपलब्धता इस बात पर निर्भर करती है कि इनसे बने उत्पाद (वस्त्रादि) बकरियों के प्राकृतिक रख–रखाव व उत्पाद निर्माण में नवोनवेशी समायोजन के प्रति ग्राहकों में जागरूकता इसके व्यावसायिककरण में मुख्य भूमिका निभाते हैं। **(पोखरना, 2003)**

सन्दर्भ :

1. आचार्य आर एम, शर्मा वी डी (1980), ए नोट ऑन पश्मीना प्रोडक्शन एंड इट्स क्वालिटी फ्रॉम चांगथांगी पश्मीना बकरियां। इंडियन जनरल एनिमेशन साइंस 50:586–587
2. डेलल जी, एलिसिन ए एफ, सोयलेमेजोग्लू जेड ई, एरिक आई जेड (2001), बालों वाली बकरियों से प्राप्त मोटे रेशों की भौतिक विशेषताएं और उपयोग। टर्किश जनरल आफ वेटरनरी एनिमल साइंस 25:581–587

3. फ्रैंक एन, हिक एम वी एच, एडॉट ओ (2012), विभिन्न श्रेणी की लामा ऊन का डीहेयरिंग, कार्डिंग, कॉम्बिंग और स्पिनिंग अंतर का निर्धारण। इंटरनेशनल जनरल आफ एप्लाइड साइंस एण्ड टेक्नोलोजी 2:61–67
4. गुप्ता एन पी (1988), सामान्य बकरी के बालों से समिश्रित धागें का प्रदर्शन। इंडियन टेक्स्टाइल जनरल 99(2):198–199
5. हंटर एल (1993), मोहायरः इसके गुणों, प्रसंस्करण और अनुप्रयोगों की समीक्षा। अंतराष्ट्रीय मोहायर एसोसिएशन, वेस्ट यॉर्कशायर, पृष्ठ 245
6. कौल जी एल, बिस्वास जे सी, सोमवंशी आर (1987), भारतीय पश्मीना बकरी के फोलिकल और रेशों की विशेषताएँ। रिसर्च आफ वेटरनरी साइंस 43:398–400
7. कोजटोवस्कि आर एम (इडी) (2012) प्राकृतिक रेशों की हैंडबुकः खंड 1: रेशों की खेती और प्रजनन को प्रभावित करने वाले प्रकार, गुण और कारक। वुडहेड पब्लिशिंग लिमिटेड, ऑक्सफोर्ड
8. लिसा आर (2014), http://www.hmrpygoras.com/HMRPygoraFleeceTypesweb.html
9. मैकग्रेयर बी ए (2003), ऑस्ट्रेलियाई कैशमेयर के वाणिज्यिक लॉट की उपज, स्वच्छ ऊन, वनस्पति पदार्थ, मोम, पसीना और राख सामग्री एवं रेशों की भौतिक विशेषताएँ। ऊन तकनीकी व भेड़ नस्ल 51(3):224–241
10. मैकग्रेयर बी ए, बटलर के एल (2009), कैशमेयर रेशों की वक्रता में भिन्नता का स्त्रोतों से प्राप्त ऊन के मूल्यांकन में योगदान 51(3):224–241
11. ओरखीओव ए ए (2007), बकरियां। http://www.fao.org/docrep/009/ah759e/ah759e14.html
12. पोखरना ए के (2003), मूल्य वर्धित उत्पादों के लिए विभिन्न बाल ऊन के प्रसंस्करण पर NATP परियोजना की पूर्णक रिपोर्ट। केन्द्रीय भेड़ एवं ऊन अनुसंधान संस्थान, अविकानगर, पृष्ठ 85।
13. पाइगोरा ब्रीडर्स एसोसिएशन (2013) http://www.pygoragoats.org/Fiber_Prep.html
14. रसक्लोथिंग (2015) http://www.rusclothing.com/russian-shawls/down-pashminas/downy-scarves/web-like-shawl-orenburg-winter/
15. स्कूयूमनन इ ए, बैलहर्ज आर जी, कुन्ज एच (1990), ऑस्ट्रेलियाई और न्यूजीलैंड, कैशमेयर और कैशगोरा बकरियों में ऊन उत्पादन के फेनोटाइपिक पैरामीटर । आस्ट्रेलियन एसोसिएशन आफ एनिमल ब्रीडिंग एण्ड जेनिटिक्स, 8:467–470
16. टेरलेट्स्की एम (2015), ऑरिन्बर्ग–शॉल। http://russian-crafts.com/crafts-history/orenburg-shawlshistory.html
17. ठाकुर वाई पी, कटोच एस, डोगरा पी के (2005), हिमाचल प्रदेश में चीगू बकरी की उसके प्रजनन क्षेत्र में उत्पादन प्रणाली और जनसांख्यिकीय स्थिति। भारतीय लघु रोमन्थी जनरल 11:116–120

भारतीय भाषाएं नदियां हैं
और हिंदी महानदीः

रवीन्द्रनाथ ठाकुर

पशुओ में पोषक तत्वों का महत्त्व एवं कार्य

पवन कुमार माहोर, एल.आर. गुर्जर एवं रंगलाल मीणा

पशु पोषण आहार आवश्यकताओं में पोषक तत्व अनिवार्य भूमिका निभाते हैं जो कि पशु चारे में पाये जाने वाले महत्वपूर्ण घटक होते हैं जिन्हें पशुओ द्वारा सेवन और पाचन द्वारा उपयोग में लिया जाता है। जो पशु खाद्य सामग्री पशुओं को खिलायी जाती है वह पशु विकास दर, उत्पादन क्षमता और पशु की स्वास्थ्य स्थिति को नकारात्मक और सकारात्मक दोनों तरह से प्रभावित करने में सक्षम होती है। इसलिए एक लाभदायक और टिकाऊ पशुधन फार्म के लिए पशु पोषण का ज्ञान महत्वपूर्ण है। एक बार जब एक वाणिज्यिक फ़ीड उत्पाद प्राप्त कर लिया जाता है तो पोषण मूल्य उत्पाद के लेबल पर दिखाई देना चाहिए। जबकि कृषि उत्पाद जैसे कि चारा फसल, फसल अवशेष, अनाज आदि से बने उत्पाद का परीक्षण यह सुनिश्चित करने के लिए किया जाना चाहिए कि इसमें पर्याप्त पोषण संबंधी गुण पाए जाते हो। पशुपालन प्रणाली में एक बेहतर प्रदर्शन और पशु स्वास्थ्य के लिए पशुओं का पोषण प्रबंधन आवश्यक है।

सूक्ष्म पोषक तत्वों का महत्व

दुधारू पशु के प्रजनन और दूध उत्पादन के लिए उर्जा और प्रोटीन के अतिरिक्त खनिज तत्वों का महत्व है। कैल्शियम, फास्फोरस, मैग्नीशियम, सोडियम, क्लोराइड मुख्य खनिज तत्व है। कोबाल्ट, आयरन, मैंगनीज, आयोडीन, सेलेनियम, जिंक, कॉपर, क्रोमियम, सूक्ष्म खनिज है अर्थात इनकी आवश्यकता बहुत कम केवल मिलीग्राम प्रति किलो खनिज मिश्रण होती है। पशुपालक दुधारू पशु के लिए ऊर्जा, प्रोटीन और मुख्य खनिज तत्वों पर तो विशेष ध्यान देते हैं, क्योंकि इनका महत्व और इनकी मात्रा के बारे में पशुपालक कुछ हद तक जानकारी रखते हैं परन्तु सूक्ष्म खनिजों के महत्व के प्रति जागरूक नहीं है। यह जानना आवश्यक है कि इन सूक्ष्म तत्वों की भी अन्य मुख्य खनिज तत्वों के उपयोग में अहम भूमिका है। व्यवसायिक खेती के कारण मृदा में इन सूक्ष्म तत्वों की कमी पाई गयी है। इसके कारण पशु चारे में इनकी मात्रा काफी कम है। खाद्य में उपस्थित इन खनिजों का शरीर में अवशोषण काफी कम होता है। सूक्ष्म तत्वों की आपूर्ति के लिए चारे पर निर्भर न होकर अतिरिक्त खनिज मिश्रण देना अनिवार्य है। सूक्ष्म तत्वों को देते समय इनकी पर्याप्त मात्रा का ज्ञान होना आवश्यक है। क्योंकि कई तत्व इनमें से एक दूसरे के विरुद्ध होते हैं। जैसे कि एक तत्व की मात्रा कम या अधिक होने से दूसरे सूक्ष्म तत्वों के अवशोषण में बाधा आती है।

उत्पादन में पशु पोषण का महत्व

मनुष्यों की तरह पशुओं को सभी आवश्यक पोषक तत्वों, तरल पदार्थ, खनिज और विटामिन युक्त संतुलित आहार की आवश्यकता होती है। उचित पोषण आपके जानवरों को बढ़ने, विकसित होने और प्रजनन करने की शक्ति देता है और संक्रमण से लड़ने के लिए मजबूत प्रतिरक्षा प्रदान करता है। उदाहरण के लिए गाय की पोषण संबंधी ज़रूरतें सूअर से बहुत अलग होती हैं। और दूध पिलाने वाली गाय का आहार भी बछड़े के आहार से भिन्न होगा। पशुधन के लिए फ़ीड की खुराक जोड़कर अपने फ़ीड की विशिष्ट पोषण सामग्री को बढ़ा सकते हैं।

प्रजनन सुधार में पशु पोषण का महत्व

पशु स्वास्थ्य विशेषज्ञों द्वारा प्रकाशित लेखो में जानवरों में पोषण और प्रजनन प्रदर्शन के बीच सीधा संबंध बताया गया है। खाने के पैटर्न, राशन की गुणवत्ता और मात्रा और इससे भी महत्वपूर्ण बात यह है कि फ़ीड का पोषण मूल्य किसी जानवर के प्रजनन स्वास्थ्य को गहराई से प्रभावित करता है। कैल्शियम, जिंक, मैग्नीशियम, सेलेनियम और मैंगनीज जैसे कुछ खनिजों की कमी, प्लेसेंटल रिटेंशन और मेस्टाइटिस के जोखिम को बढ़ाकर और गर्भ और प्रसव हार्मोन के संतुलन को बिगाड़ कर पशुओ में प्रजनन क्षमता को कम कर सकती है। अनुचित पोषण से भ्रूण का खराब विकास हो सकता है, जन्म के बाद विकास अवरुद्ध हो सकता है और गंभीर मामलों में बच्चो की मृत्यु दर अधिक हो सकती है। नर पशुओं की प्रजनन क्षमता भी पोषण से प्रभावित होती है। प्रजनन उद्देश्यों के लिए पाले गए नर पशुओ अपने स्पर्म के स्वास्थ्य और व्यवहार्यता को सुनिश्चित करने के लिए विशेष आहार की आवश्यकता होती है।

कुपोषण रोकने में पशु पोषण का महत्व

सैकड़ों पोषण संबंधी बीमारियां हैं जो पशुधन को प्रभावित करती हैं। इनमें से अधिकांश बीमारियों का कारण कुपोषण या खनिजों और विटामिन की कमी होती हैं। पोषण कमी और कुपोषण, जानवरों की वृद्धि, विकास और उत्पादन को गंभीर रूप से प्रभावित करते हैं। कुछ चरम मामलों में अपरिवर्तनीय स्वास्थ्य स्थितियां, विकार या यहां तक कि मृत्यु भी हो सकती है। बी12 सप्लीमेंट्स और विभिन्न सूक्ष्म और मैक्रो खनिजों वाले नमक–आधारित एडिटिव्स जैसे उच्च मूल्य के पूरक के साथ अपने पशुधन फ़ीड को समृद्ध करें। उदाहरण के लिए मवेशियों में बी12 स्तनपान और वृद्धि की उच्च ऊर्जा मांगों को पूरा करने के लिए आवश्यक है। विटामिन ए के अग्रदूत के रूप में कैरोटीनॉयड की जैव उपलब्धता अब पारंपरिक खाद्य संरचना में इंगित की तुलना में कम मानी जाती है। इस प्रकार विटामिन ए के पौधों के स्रोतों पर निर्भर आहार के लिए पहले की तुलना में आवश्यकताओं को पूरा करने के लिए अधिक फलों और सब्जियों की आवश्यकता होती है। विटामिन बी–12 के मामले में सभी आवश्यकताओं को पशु आधारित स्त्रोत से पूरा किया जाना चाहिए क्योंकि पादप स्रोत खाद्य पदार्थों में वस्तुतः कोई विटामिन बी–12 नहीं होता है। जानवर स्व नियंत्रण करना जानते हैं और जब वे संतुष्ट महसूस करते हैं तो खाना बंद कर देते हैं। हालांकि यदि फ़ीड की पोषक सामग्री बहुत कम है तो खपत की गई फ़ीड उनकी आवश्यकताओं को पूरा करने के लिए पर्याप्त नहीं होगी और वे कुपोषण से पीड़ित हो सकते हैं भले ही उन्हें भरपूर खिलाया गया हो। जानवरों की पोषक आवश्यकताएं विभिन्न प्रजातियों के बीच भिन्न हो सकती हैं। उदाहरण के लिए दुधारू जानवर को बिना दूध देने वाले जानवर की तुलना में अधिक ऊर्जा, पानी, फाइबर और कैल्शियम की आवश्यकता होगी।

कुछ महत्वपूर्ण पोषक तत्वों के कार्य

◊ **कैल्शियम** यह जानवरों के शरीर में सबसे प्रचुर मात्रा में मैक्रोमिनरल है क्योंकि यह हड्डियों और दांतों जैसी संरचनाओं को बनाने के लिए आवश्यक सामग्री का गठन करता है। इसके अलावा यह हृदय, आंत और मांसपेशियों जैसे कई अंगों में बहुत महत्व के सेलुलर कार्यों को पूरा करता है। कैल्शियम की कमी से जानवरो में डीकैल्सिफिकेशन और रिकेट्स की बीमारी होती है जो हड्डियों की कमजोरी,फ्रैक्चर,और मुर्गियों में पोलिनुराइट्स की बीमारी का कारण बनती है।

◊ **फास्फोरस** फास्फोरस एक मैक्रोमिनरल है जो आमतौर पर कैल्शियम से जुड़ा होता है क्योंकि वे हड्डियों की संरचना में एक साथ पाए जाते हैं। इसके अलावा, फास्फोरस जानवरों में कई चयापचय प्रक्रियाओं में शामिल होता है। फास्फोरस की कमी हड्डियों की समस्याओं, भूख और वृद्धि में कमी, और कम उत्पादक प्रदर्शन से जुड़ी है।

◊ **पोटैशियम** पोटेशियम जानवरों में तीसरा सबसे महत्वपूर्ण मैक्रोमिनरल है और इंट्रासेल्युलर स्तर पर सबसे प्रचुर मात्रा में धनायन (धनात्मक आवेशित आयन) है। ऊर्जा उत्पादन से संबंधित सेलुलर स्तर पर इसके महत्वपूर्ण कार्य हैं। पोटेशियम की कमी मांसपेशियों की समस्याओं जैसे कमजोरी या टेटनी के साथ–साथ फ़ीड सेवन की आदतों (पाइका) में बदलाव से जुड़ी है।

◊ **मैगनीशियम** मैग्नीशियम एक मैक्रोमिनरल है जो कैल्शियम और फास्फोरस से निकटता से संबंधित है। इस कारण से, लगभग 70 प्रतिशत मैग्नीशियम हड्डियों की संरचना में और शेष कोमल ऊतकों में होता है। मैग्नीशियम ऊर्जा उत्पादन में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। मैग्नीशियम की कमी से तीव्र न्यूरोमस्कुलर समस्याएं हो सकती हैं, जो कि असंयम या आक्षेप की विशेषता है।

◊ **सल्फर** सल्फर एक मैक्रोमिनरल है जिसका महत्व अमीनो एसिड और कुछ विटामिन के निर्माण पर है। प्रोटीन अमीनो एसिड से बने जीवन के लिए अपरिहार्य अणु हैं और पशु उत्पादन की शुरुआत हैं। सूअरों, ब्रॉयलर, और मांस के जुगाली करने वालों में प्रोटीन मांसपेशियों के निर्माण का आधार है। मुर्गियों में यह अंडे के निर्माण के लिए आवश्यक है। आहार में सल्फर की कमी से प्रोटीन निर्माण में गड़बड़ी होती है। इसलिए कमी के मामलों में उत्पादन प्रदर्शन काफी प्रभावित होता है।

◊ **सोडियम/क्लोरीन** सोडियम/क्लोरीन सामान्य या खाना पकाने वाले नमक में पाया जा सकता है। ये खनिज कोशिकीय और शरीर के स्तर पर पानी की मात्रा को नियंत्रित करते हैं और इसलिए लगभग सभी कार्बनिक प्रक्रियाओं में शामिल होते हैं। पशु पोषण में इसे लगातार पूरक के रूप में दिया जाता है और इसकी कमी सामान्यतः नहीं होती है। हालाँकि अधिकता एक लगातार समस्या है जो जुगाली करने वाले भी प्रभावित हो सकते हैं।

◊ **कॉपर** कॉपर एक सूक्ष्म खनिज है जो ऑक्सीकरण–कमी प्रक्रियाओं में शामिल कई एंजाइम बनाता है जैसे साइटोक्रोम ऑक्सीडेज या सुपरऑक्साइड डिसम्यूटेज। ये एंजाइम लीवर जैसे उच्च चयापचय दर वाले ऊतकों में रेडॉक्स प्रक्रियाओं को नियंत्रित करते हैं। इसके अलावा यह रक्त कोशिकाओं के कामकाज, त्वचा की रंजकता और हड्डियों और तंत्रिकाओं के निर्माण में भी भूमिका निभाता है।

◊ **कोबाल्ट** कोबाल्ट विटामिन बी 12 (सायनोकोबालामिन) का एक घटक है जो लाल रक्त कोशिकाओं और तंत्रिका कोशिका कार्यों के निर्माण में शामिल है। जुगाली करने वालों में कमी दुर्लभ है क्योंकि रूमेन में मौजूद बैक्टीरिया विटामिन बी 12 का उत्पादन करते हैं।

◊ **आयोडीन** आयोडीन वह माइक्रोमिनरल है जो थायरॉइड हार्मोन थायरोक्सिन और ट्राईआयोडोथायरोनिन बनाता है। ये हार्मोन जानवरों के विकास और चयापचय में एक आवष्यक भूमिका निभाते हैं क्योंकि वे इन प्रक्रियाओं को नियंत्रित करते हैं। आयोडीन की कमी से ग्रंथि (गण्डमाला) के आकार में वृद्धि होती है। कार्यात्मक स्तर पर जानवरों में अधिकांश चयापचय प्रक्रियाएं बदल जाती हैं।

- **आयरन** आयरन में श्वसन से संबंधित कार्य होते हैं क्योंकि यह रक्त के अणुओं का निर्माण करता है जो श्वसन गैसों का परिवहन करते हैं। यह उत्प्रेरक, ऑक्सीडेस, डिहाइड्रोजनेज, जैसे अन्य एंजाइमों की एक महत्वपूर्ण संख्या भी बनाता है। पशु पोषण में लोहे की कमी रक्त विकारों से संबंधित हो सकती है जो शरीर की सभी प्रक्रियाओं में बाधा डालती है, जिससे एनीमिया, कमजोरी, कम उत्पादक प्रदर्शन होता है।

- **सेलेनियम** सेलेनियम एंजाइम ग्लूटाथियोन पेरोक्सीडेज का एक घटक है जो ऊतकों और झिल्लियों को ऑक्सीडेटिव तनाव से बचाता है। इसके अलावा, सेलेनियम विटामिन ई अवशोषण कार्य में एक महत्वपूर्ण सूक्ष्म खनिज है।

- **जस्ता** जिंक एक माइक्रोमिनरल है जो कई एंजाइमों को कोफ़ेक्टर के रूप में बनाता है। इसलिए, यह लिपिड, कार्बोहाइड्रेट और प्रोटीन से संबंधित चयापचय प्रक्रियाओं में भाग लेता है। जिंक की कमी से जुगाली करने वाले पशुओ में प्रतिरक्षा प्रणाली और प्रजनन प्रणाली के असंतुलन उत्पन्न होता है।

- **मैंगनीज** मैंगनीज एक सूक्ष्म खनिज है जो क्रेब्स चक्र से संबंधित एंजाइमों के साथ–साथ हड्डी और रक्त कोशिकाओं के निर्माण, कार्बोहाइड्रेट चयापचय में भाग लेता

- **क्रोमियम** क्रोमियम ग्लूकोज टॉलरेंस फैक्टर का हिस्सा है और हार्मोन इंसुलिन का एक कोफ़ेक्टर है। यह हार्मोन ग्लूकोज के परिवहन के माध्यम से कार्बोहाइड्रेट चयापचय में काम करता है, सेलुलर स्तर पर एक बुनियादी ऊर्जा पैदा करने वाला अणु है।

हिंदी द्वारा सारे भारत को एक सूत्र में पिरोया जा सकता है:

स्वामी दयानंद

असिंचित ज्वार–बाजरे में सुखाशमन के लिए उपयोगी शस्य क्रियाएं

रंग लाल मीना, बनवारी लाल, सरोबना सरकार, लीलाराम गुर्जर, सुरेश चन्द्र शर्मा एवं अरूण कुमार तोमर

ज्वार एवं बाजरा भारत में लगभग 11.8 (ज्वार 4.2 एवं बाजरा 7.6) लाख हेक्टेयर क्षेत्रफल पर चारे एवं अनाज के लिए उगाई जाने वाली महत्वपूर्ण फसलें हैं। असिंचित क्षेत्रों में ज्वार एवं बाजरा में वर्षा की अनिश्चितता एवं मिट्टी की प्रतिकूल भौतिक स्थितियों के कारण बुवाई से कटाई तक की अवधि के दौरान फसलों में लगातार सूखे की स्थिति बनी रहती है, जिससे अनाज उपज में 61 से 96 प्रतिशत और चारा उपज में 54 से 69 प्रतिशत हानि होती है। असिंचित ज्वार एवं बाजरा भारत में मनुष्य के लिए मोटे अनाज के रूप में भोजन का एवं पशुओं के लिए चारे का प्रमुख स्रोत है। अतः भविष्य में मानव और पशुओं की बढ़ती जनसंख्या की भोजन और चारे की जरूरतों को पूरा करने के लिए असिंचित ज्वार एवं बाजरे के उत्पादन और उत्पादकता में वृद्धि करना अति आवश्यक है। इसके लिए सूखे की स्थिति एवं मिट्टी की प्रतिकूल भौतिक स्थितियों के आधार पर सूखाशमन के लिए उपयुक्त शस्य क्रियाएं अपनाकर असिंचित ज्वार एवं बाजरा की उत्पादकता को बढ़ाया जा सकता है।

भारत में असिंचित ज्वार एवं बाजरा चारे एवं अनाज उत्पादन के लिए उगाई जाने वाली महत्वपूर्ण फसलें हैं। आर्थिक सर्वेक्षण भारत सरकार वर्ष 2021–22 के अनुसार वर्ष 2020–21 के दौरान भारत में ज्वार एवं बाजरा 11.8 (ज्वार 4.2 एवं बाजरा 7.6) लाख हेक्टेयर क्षेत्रफल पर उगाई गई जिससे 1.13 टन ज्वार एवं 1.44 टन बाजरा अनाज प्रति हेक्टेयर उत्पादकता के साथ कुल 15.7 (ज्वार 4.8 एवं बाजरा 10.9) लाख टन अनाज का उत्पादन हुआ। साथ ही चारे की उत्पादकता लगभग 3.5 टन/हेक्टेयर ज्वार की एवं 3.1 टन/हेक्टेयर बाजरा की रही। भारत में ज्वार एवं बाजरा लगभग सभी प्रकार की मिट्टियों में उगाया जाता है। लेकिन ज्वार के लिए अधिक जल धारण क्षमता वाली बलुई दोमट ओर दोमट मिट्टी जिसमे क्ले की मात्रा ज्यादा हो उपयुक्त मानी जाती हैं। कम क्ले मात्रा वाली बलुई मिट्टी में ज्वार की बढ़वार कम होती एवं ब्लैक कॉटन मिट्टी में क्ले मात्रा अधिक होने के कारण यह मिट्टी ज्वार की बढ़वार के लिए सर्वोत्तम मानी जाती हैं। बाजरा जल भराव वाली मिट्टीयों के प्रति संवेदनशील रहता है इस कारण बाजरे के लिए अच्छे जल निकास वाली बलुई दोमट मिट्टी उपयुक्त मानी जाती हैं। भारत मे अच्छे जल निकास वाली ब्लैक कॉटन मिट्टी, जलोढ़ मिट्टी एवं लाल मिट्टी में बाजरा सफलतापूर्वक उगाया जाता है। ज्वार मध्यम प्रकार की अम्लीय एवं लवणीय मिट्टियों के प्रति सहनसील है पर बाजरा अम्लीय मिट्टियों के प्रति संवेदनशील रहता है। भारत में असिंचित ज्वार एवं बाजरा की फसल की बीजाई जून – जुलाई के महीने में की जाती है, पर मध्य एवं दक्षिण भारत में ज्वार की बीजाई मुख्य रूप से सितंबर – अक्टूबर के महीनों में बड़े पैमाने पर की जाती है तथा यह फसले अपना जीवन चक्र मानसून की वर्षा एवं मानसून की वर्षा से भूमि की अंदरूनी सतह मे संचित नमी से पूर्ण करती है। साथ ही मध्य एवं दक्षिण भारत में बोई गई ज्वार मानसून के बाद नवंबर–दिसम्बर के महीनों में होने वाली औसतन 100 मिमी वर्षा से अपना जीवन चक्र पूर्ण करती है। भारत में असिंचित ज्वार एवं बाजरा की फसल लगाये जाने वाले क्षेत्रों, में मानसूनी हवाओं का बहाव एवं अरावली और सायद्रि पर्वत मालाओं की भौगोलिक स्थिति के समानांतर होने के कारण यह क्षेत्र बारिश की मात्रा एवं बारिश होने के समय के लिए अप्रत्याशित और अविश्वसनीय बारिश वाले क्षेत्र के रूप मे जाना जाते हैं। वर्षा की अनिश्चितता के कारण इन क्षेत्रों में फसल की बुवाई से कटाई तक की अवधि के दौरान लगातार सूखे की स्थिति बनी रहती है। जिससे फसल की क्रांतिक अवस्थाओं के समय (तालिका–1) सुखा पड़ने की सम्भावना रहती है जिससे अनाज उपज में 61 से 96 प्रतिशत और चारा उपज में 54 से 69 प्रतिशत हानि होती है।

भारत के उत्तर और पश्चिम क्षेत्रों में पाई जाने वाली बलुई एवं बलुई दोमट मिददी एवं मध्य एवं दक्षिण भारत की जल अपरदन से प्रभावित उथली काली एवं लाल मिददी की कम जल धारण क्षमता व ब्लैक कॉटन मिददी की प्रतिकूल भौतिक गुण जो समय पर बुवाई में बाधा बनती है, के कारण इन क्षेत्रों मे बारिश की थोड़ी अनियमितता भी सूखे की स्थिति को और भी प्रबल कर देती है जिस कारण कभी–कभी किसान की पूरी फसल चौपट हो जाती है।

ताालिका –1 सूखा के कारण असिंचित ज्वार एवं बाजरा की उपज में नुकसान का आंकलन

सूखे के प्रकार	अनाज उपज	सूखा के कारण उपज मे नुकसान जोन क्षमता की तुलना में (%)		पैटर्न आवृत्ति (%)	क्षमता	
		चारा उपज			ज्वार	बाजरा
टर्मिनल सूखा	फसल बढ़वार की अवस्था के दौरान सूखे की स्थिति	95.8	68.6	07.0	3.1 ट/हे अनाज की उत्पादकता 8.3 ट/हे चारा की उत्पादकता	3.4 ट/हे अनाज की उत्पादकता 9.5 ट/हे चारा की उत्पादकता
	फूल आने से पहले की अवस्था के दौरान सूखे की स्थिति	85.4	63.9	18.0		
	फूल आने के बाद की अवस्था के दौरान सूखे की स्थिति	61.2	54.0	18.0		
फूल आने के समय व बाद की अवस्था के दौरान सूखे की स्थिति		62.3	57.3	17.0		
हल्के सूखे की स्थिति		63.2	61.4	40.0		

असिंचित ज्वार एवं बाजरे की फसल इन क्षेत्रों में भोजन और चारा का प्रमुख स्रोत है, जिससे इस क्षेत्र की आबादी की आजीविका एवं आय के साधन प्रभावित होते हैं। इन क्षेत्रों में असिंचित ज्वार एवं बाजरे की उत्पादकता मुख्यतयाः सूखे की समस्या के कारण ही प्रभावित होती है। सूखे के कारण ही किसानों को वास्तविक क्षमता के अनुरूप ज्वार एवं बाजरे की उपज नही मिल पा रही है। अतः भविष्य में इन क्षेत्रों की मानव और पशुओं की बढ़ती जनसंख्या की भोजन और चारा की जरूरतों को पूरा करने के लिए असिंचित ज्वार एवं बाजरे के उत्पादन और उत्पादकता में वृद्धि करना आवश्यक है। इसके लिए विभिन्न अनुसंधान किये गये हैं ताकि असिंचित ज्वार एवं बाजरे की उत्पादकता को बढाया जा सके और किसानों का मुनाफा बढ़ाया जा सके।

सूखा शमन के लिए कृषि क्रियाएं :–

ज्वार एवं बाजरा सूखे के प्रति सहनसील फसलें है, दोनों फसलों मे किसी भी विकास अवस्था के दौरान 13 से 15 दिन के लिय पानी की कमी पैदावार पर कोई असर नहीं ड़ालती है, लेकिन 27 दिन से अधिक पानी की कमी पैदावार पर विपरीत असर डालती है। तालिका–1 में प्रस्तुत आंकड़ों से संकेत मिलता है कि ज्वार एवं बाजरा में सूखे की वजह से उपज का नुकसान बहुत अधिक होता है। यह नुकसान मुख्यतया सूखे की तीव्रता, फसल की अवस्था जिस पर सूखा आता है व सूखा कितने समय तक फसल को प्रभावित करता है, पर निर्भर है। इन तथ्यों को ध्यान में रखते हुए विभिन्न प्रकार की मिट्टियों और विभिन्न प्रकार की सूखा स्थितियों के लिए विभिन्न कृषि (शस्य) क्रियाओं का असिंचित ज्वार एवं बाजरा के लिए सूखा शमन क्षमता बढ़ाने के लिए संक्षेप में प्रस्तुत किया है, जो की निम्नलिखित है।

समय पर बुवाई

बुवाई का समय फसल वृद्धि, विकास और उपज को प्रभावित करने वाला बगैर लागत का प्रमुख उपाय है। उचित बुवाई का समय, फसल विकास के सभी चरणों में फसल को उपयुक्त वातावरण प्रदान करके फसल उत्पादकता को बेहतर बनाता है। समय पर बुवाई वाली ज्वार एवं बाजरा की फसल को मुख्य रूप से तीन प्रकार से मदद करती है, प्रथम तरीका, समय पर बुवाई करने से फसल को प्रारंभिक अवस्था में अच्छी तरह से स्थापित होने मे सहायक रहती है। अच्छी तरह से स्थापित फसल में, शुरुआती जड़ विकास जल्दी हो जाता है जिस से फसल मानसून की वर्षा के जल व मानसून के बाद वाली वर्षा के जल का कुशलतापूर्वक उपयोग कर पाती है। दूसरे प्रकार से फ़ायदा, समय पर बोई गई फसल में जड़ विकास अच्छा होता है सुविकसित जड़ तंत्र के माध्यम से पौधा पर्याप्त मात्रा मे मिट्टी से पोषक तत्व एवं जल प्राप्त कर पाता जिससे फसल का विकास अच्छा होता हैं, साथ ही अच्छी प्रकार विकसित पौधों में कीट और बीमारी कम लगती है। तीसरे प्रकार से फ़ायदा, समय पर बोई गई फ़सल में प्राकृतिक आपदाओं एवं प्रतिकूल मौसम की वजह से होने वाले नुकसान कम होते है जैसे की भारत के मध्य और दक्षिणी क्षेत्र में उगाई जाने वाली रबी ज्वार की फसल की फूल बनने की अवस्था कम तापमान के प्रति अति संवेदनशील होती है, अगर रात्रि तापमान फूल बनने की अवस्था के समय 10 सेंटीग्रेड से नीचे गिर जाता है, तो यह निषेचन प्रक्रिया को भारी नुकसान करता है जिससे ज्वार की बाली (ईयर हैड) में बीज बनने की क्रिया आंशिक या पूर्ण रुप से प्रभावित हो जाती है। एक शोध निष्कर्ष में यह पाया गया कि 15 सितंबर को बुवाई की गई रबी ज्वार की किस्म "फुले अनुराधा" मे अनाज की उपज 1.74 टन/हेक्टेयर व चारे की उपज 4.10 टन/हेक्टेयर आकलित की गई जो कि 30 सितंबर और 15 अक्टूबर को बुवाई की गई फसल की पैदावार की तुलना में क्रमशः 20.1 व 56.8 प्रतिशत अनाज की उपज मे व 16.4 व 49.3 प्रतिशत चारे की उपज मे अधिक है। बुवाई में देरी के साथ फसल की पैदावार में कमी नमी की वजह से हो सकती है क्योंकि भारत के ज्वार एवं बाजरा उगाये जाने वाले क्षेत्र सूखा प्रवण क्षेत्र के रूप मे रेखाकिंत किये गये है जहां नमी उपलब्धता हमेशा उप–सीमांत स्तर पर रहती है। ज्वार एवं बाजरा ज्यादातर उथली एवं कम नमी भंडारण क्षमता वाली मिट्टी में बोये जाते है, जिनकी नमी भंडारण क्षमता सीमित होती है, अतः फसल बढवार की शुरुआती अवस्था मे ही यह मिट्टी फसल को नमी प्रदान करने मे असमर्थ हो जाती है जिसका सीधा असर फसल की पैदावार पर पड़ता है। अगर बुवाई समय पर नहीं हों पाती है तो फसल पैदावार पर नकारात्मक असर पड़ता है।

पौधों की उचित संख्या का उपज पर प्रभाव

प्रति हेक्टेयर क्षेत्र में पौधों की उचित संख्या फसल की वृद्धि, विकास और उपज को प्रभावित करने वाला दूसरा प्रमुख बगैर लागत का उपाय है। पौधों की उचित संख्या फसल विकास के सभी चरणों में फसल को उपयुक्त वातावरण प्रदान करके फसल उत्पादकता को बेहतर बनाता है। नही तो सुखने की सम्भावना बनी रहती है पौधों की उचित संख्या उत्पादकता को बनाये रखने में एक महतवपूर्ण कदम साबित होता है क्योंकि पौधों की उचित संख्यां पानी के उपयोग के समय को बदलकर टर्मिनल सूखे की तीव्रता को कम करती है। खेत में अगर पौधे से पौधे की और कतार से कतार की दुरी सही से निर्धारित होती है तों उचित दूरी पर लगाए गए छोटे पौधे, शुरूआती अवस्था में जड़ों के कम विकास के कारण उसी पानी का उपयोग कर पाते हैं जो बिलकुल जड़ के पास होता है, हालांकि, जब पौधे फूल बनने की अवस्था में आ जाते हैं, तब तक पौधे का जड़ तंत्र पूर्णतया विकसित हो जाता है उस समय पौधे दो पंक्ति या दो पौधे के मध्यम वाले क्षेत्र मे संचित पानी का उपयोग कर पाते है। यहां मुख्य बिन्दु यह है कि ज्वार बाजरा में जल मांग की सबसे नाजुक अवस्था फूल बनने के समय होती है, अगर इस अवस्था पर पौधे को पानी नही मिलता है तो, ज्वार बाजरा में बाली (ईयर हैड) बनाने की प्रक्रिया आंशिक या पूर्ण रुप से प्रभावित हो जाती है जिससे

निशेचन प्रक्रिया प्रभावित होती है और बाली मे बीज बनने की क्रिया भी आंशिक या पूर्ण रुप से बाधित हो जाती है। चित्र 1 में पौधे आबादी का ज्वार की बाली (ईयर हैड) बनाने प्रक्रिया पर प्रभाव दर्शाया गया है।

चित्र 1

चित्र 2

आमतौर पर ज्वार बाजरा की फसल फूल बनने की अवस्था पर टर्मिनल सूखे का सामना करती है (चित्र 2) और जहां पौधों की संख्या बहुत अधिक होती है वहाँ फसल के खराब होने की आशंका बनी रहती है और जहां हम पौधों की उचित संख्या रखते हैं उसमे पौधे अपने आपको सूखे से सहन करने की शक्ति विकसित कर लेते हैं और किसानों को कुछ उपज मिल जाती है। एक शोध निष्कर्ष मे यह पाया गया की तीन अलग अलग जगह (बेल्लारी, बीजापुर व सोलापुर) पर जब असिंचित रबी ज्वार की पौधों की संख्या को 45(हजार प्रति हेक्टर½ ls 135 ¼हजार प्रति हेक्टर½ किया गया तो तीनों स्थान की औसत अनाज उपज 2.04 टन/हेक्टेयर से बढ़कर 2.40 टन/हेक्टेयर हो गई पर पौधों की संख्या को 135 (•1000/हे) से ऊपर बढ़ाने पर तीनों स्थान की औसत अनाज उपज मे गिरावट देखी गई। एक सीमा के बाद पौधों की संख्या को बढाने पर नमी के लिए अधिक प्रतियोगिता होती है फलस्वरूप फसल की पैदावार में गिरावट होती है।

पूर्ण विकसित ईयर हैड

रोपण दूरी 60•15 सेमी, पौधे की जनसंख्या 111,111 पौधे/हेक्टेयर

आंशिक विकसित ईयर हैड

रोपण दूरी 45•15 सेमी, पौधे की जनसंख्या148,148 पौधे/हेक्टेयर

ईयर हैड अनुपस्थित

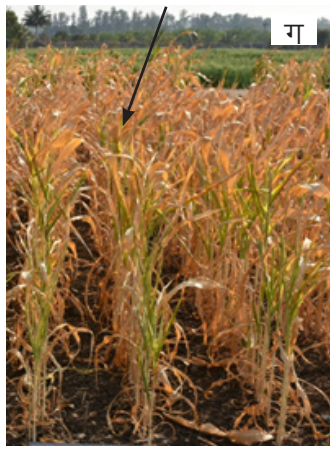

रोपण दूरी 45•10 सेमी, पौधे की जनसंख्या 222, 222 पौधे/हेक्टेयर

चित्र 1 असिंचित रबी ज्वार की किस्म फुल अनुराधा की देर से बुवाई की स्थिति मे उथली काली मिट्टी पर अलग अलग पौधों की संख्या का उपज पर प्रभाव।

बुवाई की गहराई

ज्वार एवं बाजरे की फसल की सफलता व असफलता जितनी समय पर बुवाई व इष्टतम पौधे आबादी पर निर्भर करती है उतनी ही बीज बुवाई की गहराई पर भी निर्भर करती है। शोध निष्कर्ष यह बताते हैं की असिंचित रबी ज्वार फसल की अच्छी उपज प्राप्त करने के लिए मध्यम से गहरी काली प्रकार की मिट्टीयों मे सामान्य नमी की स्थिति में बीज बुवाई के दौरान बीजारोपण की गहराई 2–3 सेमी तक ही होनी चाहिए। जबकि एंटिसोल समूह की मिट्टीयों में, बीज बुवाई की गहराई 4–5 सेमी तक होनी चाहिए। सिंचाई की स्थिति में दोनों प्रकार की मिट्टीयों में, बीज बुवाई की गहराई 2–3 सेमी उपयुक्त होती है। शुष्क स्थितियों मे दोनों प्रकार की मिट्टीयों में बीज बुवाई की गहराई 4–5 सेमी होनी चाहिए, लेकिन किसी भी हालत में बीज बुवाई की गहराई 5 सेमी से अधिक नहीं होनी चाहिए। बाजरे में बीज बुवाई की गहराई सभी प्रकार की मिट्टियों मे 2–3 सेमी से अधिक नहीं होनी चाहिए। बाजरे में बीज बोने की प्रसारण (छिड़काव) विधि का उपयोग किया जाता है पर इस विधि में बीज अंकुरण अनियमित एवं कम होता है, जिससे फसल की पौधे संख्या कम या ज्यादा हो जाती है जिसका फसल उत्पादकता पर विपरीत असर पड़ता है अतः बाजरे की बीजाई ड्रिल विधि से करनी चाहिए जिससे उपयुक्त अंकुरण हो एवं इष्टतम पौध आबादी प्राप्त हो सके ।

बुवाई/रोपण की दिशा

ज्वार एवं बाजरे की फसल की उपज प्राथमिक तौर पर मिट्टी की नमी से निर्धारित होती है तथा मिट्टी की नमी सौर विकरणों के कारण मिट्टी से होने वाले वाष्पीकरण से प्रभावित होती है। शोध निष्कर्ष यह बताते हैं की खेत मे भूमि की अंदरूनी सतहों मे संचित कुल नमी का 35–40 प्रतिशत भाग सौर विकरणों के कारण मिट्टी से होने वाले वाष्पीकरण के रूप मे वातावरण मे चला जाता है जिसका पौधे के विकास में कोई योगदान नहीं होता है। तथा शोध निष्कर्ष यह भी बताते हैं की उत्तर से दक्षिण दिशा मे की गई पंक्ति बुवाई वाली फसल के खेत से मिट्टी से होने वाले वाष्पीकरण हानि, पूर्व से पश्चिम दिशा में की गई पंक्ति बुवाई वाली फसल के खेत से होने वाले वाष्पीकरण हानि से कम होती है। इस प्रकार फसल की बुवाई उत्तर से दक्षिण दिशा में करके हम सौर विकरणों को सीधा भूमि पर पहुंचने से रोक कर सौर विकरणों के कारण मिट्टी से होने वाले वाष्पीकरण को कम कर सकते है जिसके फलस्वरूप भूमि की अंदरूनी सतहों मे संचित नमी फसल को लंबे समय तक प्राप्त होगी एवं इसका फसल पैदावार पर सकारात्मक असर दिखेगा।

समय पर खरपतवार नियंत्रण

शुष्क क्षेत्रों में, समय पर और प्रभावी तरीके से खरपतवार नियंत्रण एक प्रमुख कृषि क्रिया है जो फसल विकास और उपज पर तत्काल सकारात्मक प्रभाव ला सकती है। फसलों में कीड़े, बीमारियों और खरपतवार की वजह से कुल उपज मे होने वाली हानियों में, एक तिहाई हिस्सा केवल मात्र खरपतवार का होता है। शोध निष्कर्ष मे यह पाया गया है की कम नमी वाले खेत मे खरपतवार केवल पानी के लिए फसल से प्रतिस्पर्धा के जरिए 50 प्रतिशत से अधिक फसल की पैदावार में कटौती कर सकते हैं। बुवाई के बाद के 20 से 25 दिनों तक ज्वार एवं बाजरे का विकास धीमी गति से होता है, इस समय अगर खेत मे नमी की कमी हो ओर खरपतवार की संख्या ज्यादा हो तो फसल–खरपतवार प्रतिस्पर्धा ज्वार एवं बाजरे के पौधों को कमजोर व बीमार कर सकती है। खरपतवार पानी के अलावा भी, फसल के साथ, सूरज की रोशनी और स्थान के लिए प्रतिस्पर्धा करते हैं तथा विभिन प्रकार के संसाधनो के लिए प्रतिस्पर्धा कर खरपतवार फसल उपज को 15–83 प्रतिशत तक नुकसान कर सकते हैं। खरपतवारों के कारण होने वाले इस नुकसान से बचाने के लिए फसल को बुवाई के बाद वाले शुरुआती 45 दिन तक खरपतवार मुक्त रखना आवश्यक है, इस के लिए

पहली हाथ से खरपतवार निकालने की क्रिया फसल बुवाई के 15 से 20 दिन के बाद व दूसरी खरपतवार निकालने की क्रिया फसल बुवाई के 30 से 35 दिन बाद करना आवश्यक है। अगर हाथ से खरपतवार निकालना संभव ना हो तो आट्राजीन नामक खरपतवारनाशी का 0.5 से 1.0 किलोग्राम सक्रिय तत्व प्रति हेक्टेयर के हिसाब से बुवाई के तुरंत बाद 800 से 1000 लीटर पानी के साथ घोल बनाकर मिट्टी की ऊपरी सतह पर छिड़काव करें। इस खरपतवारनाशी के उपयोग करते समय इस बात का ध्यान रखना अति आवश्यक है की छिड़काव बुवाई के तुरंत बाद (बीज उगने से पहले) करे। साथ ही यह भी सुनिश्त करें की खेत में ढेले नहीं हों एवं छिड़काव के समय मिट्टी मे प्रयाप्त नमी हों। खरपतवारनाशी के प्रभाव को बढानें के लिए छिड़काव के बाद 3–4 सप्ताह तक खेत में किसी प्रकार का कर्शण कार्य नहीं करना चाहिए।

किस्म का चयन

ज्वार एवं बाजरे की फसल बुवाई से कटाई तक की अवधि के दौरान लगातार टर्मिनल सूखे का सामना करती है। उथली एंटिसोल मिट्टी की कम जल धारण क्षमता, वर्टिसोल मिट्टी की प्रतिकूल भौतिक स्थिति जो समय पर बुवाई मे बाधा बनती है, बारिश की अनिश्चितता जिससे सूखे की स्थिति और भी प्रबल हो जाती है व फूल बनने की अवस्था का ठंड से प्रभावित होना कम उपज के प्रमुख कारण है। इन स्थितियों में मिट्टी की स्थिति के आधार पर ज्वार की किस्मों का चयन सबसे अधिक उपयुक्त माना गया है। शोध निष्कर्ष यह बताते है की उथली एंटिसोल समूह की मिट्टीयों के लिए छोटी अवधि वाली किस्मे जेसे की सलेक्सन–3, फुले अनुराधा को उपयुक्त माना गया है एवं एम 35–1, फुले सुचित्रा जैसी किस्मे मध्यम से गहरी वर्टिसोल समूह की मिट्टीयों के लिए उपयुक्त मानी गई है। ज्वार की किस्मों का वर्गीकरण मिट्टी की योग्यता के आधार पर नीचे दी गई तालिका–2 के अनुसार किया गया हैं।

तालिका–2 मिट्टी की स्थिति के आधार पर रबी ज्वार की किस्मों और संकरों का वर्गीकरण

किस्म/ संकर	मिट्टी की स्थिति (गहराई) के आधार पर			
	उथली मिट्टी	मध्यम मिट्टी	गहरी मिट्टी	सिंचित मिट्टी
किस्म	सलेक्सन–3, फुले–अनुराधा, मऊली, सीएसवी–26	मऊली, फुले–चित्रा, फुल–सुचित्रा, परभणी–मोती, सीएसवी–14आर, डीएसवी–4	सीएसवी–18, सीएसवी–22, सीएसवी–26आर (फुले–यशोदा), पीकेवी क्रांति, सीएसवी–14आर, सीएसवी–29आर, डीएसवी–5	फुले–वसुधा, फुले–रेवती, सीएसवी–26आर (फुले–यशोदा), डीएसवी–4, सीएसवी–29आर, डीएसवी–5
संकर	–	सीएसएच–15 आर	सीएसएच–15 आर, सीएसएच–19 आर	सीएसएच–15 आर, सीएसएच–19 आर

इसी प्रकार बाजरे की फसल में भी मिट्टी की जल धारण क्षमता उत्पादकता को निर्धारित करती है। अलग–अलग प्रकार की मिट्टीयों की जल धारण क्षमता अलग–अलग होती है। जैसे की गहरी काली एवं दोमट मिट्टीयों की जल धारण क्षमता अधिक होती है इनमें अधिक पैदावार लेने के लिए अधिक उत्पादकता वाली लंबी अवधि की किस्में उपयुक्त रहती है।

जैसे कि सुरभि (RHRBH 8924) एवं PCB-141 किस्में। इसी प्रकार कम जल धारण क्षमता वाली बलुई एवं उथली काली एवं लाल मिट्टीयों में कम अवधि वाली संकर किस्में जैसे की HHB-67 HHB-68 एवं श्रृद्धा (RHRBH 8609) उपयुक्त रहती है। बाजरे की किस्मों का वर्गीकरण फसल अवधि के आधार पर नीचे दी गई तालिका–3 के अनुसार किया गया हैं।

पोषक तत्व प्रबंधन

असिंचित ज्वार एवं बाजरे की फसल सूखा प्रवण क्षेत्र की कम जल धारण क्षमता, वाली मिट्टीयों पर बोई जाती है। फसल बढ़वार की शुरुआती अवस्था मे ही यह मिट्टीयाँ फसल को नमी प्रधान करने मे असमर्थ हो जाती है जिसका सीधा असर फसल की पैदावार पर पड़ता है। इन स्थितियों में पोशक तत्व प्रबंधन, छोटे पौधे की जड़ो के विकास मे सहायक बन कर पौधों को मिट्टी की गहरी प्रोफाइल से पानी लेने के लिए सक्षम बनाता है, जिससे टर्मिनल सूखे की तीव्रता कम हो जाती है। असिंचित ज्वार एवं बाजरे के लिए उर्वरको की मात्रा का चयन मिट्टी की समता एवं जाँच के आधार पर करना चाहिए यदि मिट्टी की जाँच नहीं की गई हों तो उर्वरको की मात्रा का चयन मिट्टी की समता के आधार पर करना चाहिए जैसे की उथली से मध्यम गहराई की मिट्टीयों में 40–50 किलोग्राम नत्रजन एवं 30–40 किलोग्राम फॉस्फोरस व पोटाश प्रति हेक्टेयर तथा गहरी मिट्टीयों में 60–80 किलोग्राम नत्रजन एवं 40–50 किलोग्राम फॉस्फोरस व पोटाश प्रति हेक्टेयर उपयोग करके अधिक मुनाफ़ा लिया जा सकता हैं। अगर मिट्टी में जिंक की कमी हों तो 15–20 किलोग्राम जिंक सलफेट (20 % जिंक) प्रति हेक्टेयर उपयोग करके जिंक की कमी को पूरा कर सकते हैं। असिंचित ज्वार एवं बाजरे में उर्वरको की उपयुक्त मात्रा बुवाई से पहले जड़ के पास लगभग 5–10 सेमी गहराई पर ड्रिल विधि से डालने से फसल की पैदावार पर सकारात्मक असर पड़ता है। अगर वर्षा होती हैं तो फ़सल, मौसम एवं खेत की नमी कों ध्यान में रखते हुई 15–20 किलोग्राम यूरिया प्रति हेक्टेयर की दर से छिड़काव करे इसका फसल की पैदावार पर सीधा सकारात्मक असर पड़ता है।

निष्कर्ष

इस समीक्षा से, यह निष्कर्ष निकाला जा सकता है कि:–

1. असिंचित ज्वार एवं बाजरे की उपज प्राथमिक तौर पर मिट्टी की नमी से निर्धारित होती है।
2. बुवाई का सही समय, फसल विकास के सभी चरणों में फसल को उपयुक्त वातावरण प्रदान करके फसल उत्पादकता को बेहतर बनाता है।
3. पौधों की उचित संख्या एक रणनीति के रूप में कार्य करती है जो पानी के उपयोग के समय को बदलकर टर्मिनल सूखे की तीव्रता को कम करती है।
4. प्रतिकूल मिट्टी की भौतिक स्थिति व बारिश की अनिश्चितता के कारण बीज बुवाई की गहराई, असिंचित ज्वार एवं बाजरे की फसल की सफलता व असफलता के लिए एक महत्वपूर्ण नाजुक कारक है।
5. कम नमी वाले क्षेत्र में खरपतवार केवल पानी के लिए फसल से प्रतिस्पर्धा के जरिए 50 प्रतिशत से भी अधिक फसल की पैदावार में कटौती कर सकते हैं।

6. मट्टी की जल धरण स्थिति के आधार पर ज्वार एवं बाजरे की फसल के लिए किस्मों का चयन सबसे उपयुक्त माना गया है।

7. पोषक तत्व प्रबंधन, छोटे पौधे की जड़ो के विकास मे सहायक बन कर पौधों को मिट्टी की गहरी प्रोफाइल से पानी निकालने के लिए सक्षम बनाता है।

8. उत्तर से दक्षिण दिशा मे की गई पंक्ति बुवाई वाली फसल से मिट्टी से होने वाला वाष्पीकरण, पूर्व से पश्चिम दिशा मे की गई पंक्ति बुवाई वाली फसल से मिट्टी से होने वाले वाष्पीकरण की तुलना मे कम होता है।

निष्कर्ष, उपरोक्त सभी कृषि संबंधी रणनीतियाँ सूखे के प्रभाव को कम करती हैं लेकिन उनके सूखा शमन की क्षमता के आधार पर हमने इन कृषि क्रियाओं को निम्नानुसार रखा हैः– समय पर बुवाई ≥ पौधों की उचित संख्या ≥ बुवाई की गहराई ≥ समय पर खरपतवार नियंत्रण ≥ मिट्टी की स्थिति के आधार पर किस्म का चयन = पोषक तत्व प्रबंधन > बुवाई/रोपण की दिशा।

समस्त भारतीय भाषाओं के लिए यदि कोई एक लिपि आवश्यक हो तो वह देवनागरी ही हो सकती हैः

जस्टिस कृष्णस्वामी अय्यर

भेड़ बकरी और स्टाल फीडिंग

पवन कुमार माहौर

लौटना होगा हमें स्टाल फीडिंग की तरफ
अच्छी नस्ल हेतु सेलेक्टिव ब्रीडिंग की तरफ
रिकॉर्ड मेन्टेन होगा बिजली की रीडिंग की तरह
प्रतीक्षा नहीं कर सकते फिलम की वेटिंग की तरह

मरुधरा की रानी है
रुखा सूखा चारा है
थोड़ा चाहिए पानी है
जरा सम्भालो पल जाएगी
घर पर ही चरालो
वारे न्यारे कर जाएगी

चलता फिरता एटीएम है मेरी प्यारी भेड़
पांच सितारा जानवर है मेरी प्यारी भेड़
मरू भूमि का फ्रिज है मेरी प्यारी भेड़
जिसने इसको पाला तो कभी न होगी अंधेर
जरुरत पड़ने पर भेड़ कभी ना करेगी देर

भेड़ हम नहीं बल्कि भेड़ हमें पालती है
भेड़ हम नहीं बल्कि भेड़ हमें पालती है
गरीबो के जीवन का जरिया है
जो कम आंक रहे इसको यह उनका नजरिया है
यह गरीब के जीवन को तंगहाली से निकालती है
गरीबो के जीवन की गाड़ी का पहिया है
इसी से उनकी गाड़ी चालती है

चरवाहे ने जब से चराई से मुँह मोड़ा
कमर टूट गयी पैसो से पड़ गया हथोड़ा
अब कौन बाहर जाये पशु चराने को
अब कौन बाहर जाये धूप खाने को
कोई लाना नहीं चाहता बोझा ढोके चारा
एकमात्र ही बचा है स्टाल फीडिंग का सहारा

चारा नहीं अब लोग चारागाह खाने लगे हैं
उंघना तो छोड़िये जनाब डकार लेने में भी शर्माने लगे हैं
छोटी मोटी नदियों के आसपास की चरु भूमियां हड़पाने लगे हैं
अब उन भूमियों में कंक्रीट के जंगल पनपाने लगे हैं

सिमट रही है हरी भरी धरा
घट रही है चरु भूमि

वनभूमि से वन गायब है
घांस के मैदानों का मिलना नायाब है
बरसात में पत्तियां कोमल होने के लिए तरस रही है
और मेरी प्यारी भेड़ बकरी बाहर चरने के लिए तड़प रही है

चरागाहों पर निरंतर अतिक्रमण हो रहा है
मानवबस्ती का चरागाह पर संक्रमण हो रहा है
पर्यावरण का लगातार विपरीत चक्रण हो रहा है
खोजने से भी नहीं मिल पा रही है चरु भूमियां
बचे हुए चरागाहों का क्षण क्षण विलोपन हो रहा है

जो बचे है चरागाह वहां चारा नहीं है
कोमल टहनियां तो छोड़िये तिनके का सहारा नहीं है
कैसे बताये हम मौसम का हाल क्योंकि थर्मामीटर में पारा नहीं है
जो बचे है चरागाह वहां गाजरघांस लैंटाना और विलायती बबूल भरे पड़े है
ऐसे चरागाह में पांव रख दे कोई ऐसा बेचारा नहीं है

छोड़ दिया है हमने चरवाहे का काम
मीलो दूर चराना तो दूर की बात है
अब तो गांव की पगडण्डी में भी चरा नहीं पाएंगे
रहा होगा किसी ज़माने में चरवाहे के मूछों पर ताव
अब तो चराने में शर्माना है और फैशन का जमाना है
कोई भी चाकरी कर लूंगा पर चराने को नहीं दूंगा भाव

सिकुड़ रहे है चरागाह हो रहा है अतिक्रमण
मानव की लालसा बढ़ रही है क्षण क्षण
मृदा अपरदन से बिखर रहा है कण कण
बरसने वाला जल भूमि में नहीं हो पा रहा है अर्पण

दो बीघे को चार बीघा करलू कौन मुझे रोक पायेगा
इतनी हिम्मत आ गयी है मुझमे
की मैं चारा नहीं पूरा चारागाह ही खा जाऊंगा
फिर प्रकृति के सामने हाथ जोड़कर गिड़गिड़ाउंगा

मिटटी जल संचयन खो रही है
ऐसी मिटटी में तो ठूंठ ही उग पायेगा
प्रकृति को क्या अंगूठा दिखा रहा है
चार उंगलियों का इशारा तो खुद की और ही जा रहा है

वही भाषा जीवित और जागृत रह सकती है जो जनता का ठीक-ठाक प्रतिनिधित्व कर सके और हिंदी इसमें समर्थ है:

पीर मुहम्मद मूनिस

पौष्टीक हरा चारा : मक्खन घास

रामेश्वर प्रसाद चतुर्वेदी एवं सुरेश चंद्र शर्मा

सर्दियों के मौसम में किसानों के लिए सबसे बड़ी चिंता का विषय हरे चारे की उपलब्धता है। इसकी पूर्ति के लिए पशुओं को क्या खिलाएं और क्या ना खिलाएं ताकि पशु स्वस्थ और तंदरुस्त रहें क्योंकि सर्दियों में अगर पशुओ को संतुलित और सही आहार नहीं दिया जाए तो वह बीमार होने लगता है जिससे दूध का उत्पादन भी कम होने लगता है। चुकि पशुपालक सर्दियों में पशुओं को हरे चारे के रूप में बरसीम अथवा रिजका खिलाते हैं उससे भी दूध में वांछित उत्पादन नहीं हो पाता। बरसीम में कीट लगने की समस्या भी अधिक होती है। इसलिए सर्दियों में जानवरों को बरसीम के बजाय मक्खन घास खिलाना चाहिए। क्योकि मक्खन घास शीतकालीन चारा फसल है। यह मैदानी एवं पहाडी इलाकों में बुवाई के लिए भी उपयुक्त है। सर्दियों में पशुपालक अपने पशुओं को बरसीम की जगह पर मक्खन घास खिलाए तो दूध उत्पादन 20–25 प्रतिशत तक बढ़ जाता है। यह पशुओं में दूध की मात्रा एवं गुणवत्ता जैसे फैट प्रतिशत में वृद्धि करता है। पशुओं की उदरपूर्ति के साथ ही उन्हें स्वस्थ जीवन प्रदान करने वाली मक्खन घास उच्च प्रोटीनयुक्त, रसीली एवं स्वादिष्ट घास होती है। इसमें 14–18 प्रतिशत प्रोटीन होता है साथ ही विटामिन ए और एंटीऑक्सीडेंट बीटा कैरोटीन एवं विटामिन K2 भी पाया जाता है जो कि विटामिन K का एक रूप है जो हड्डी और हृदय स्वास्थ्य में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। शुष्क पदार्थ की पाचन क्षमता 65ः होती है। यह घास पशुपालकों के लिए वरदान स्वरूप है।

मक्खन घास का उत्पादन कैसे करें

भूमि की तैयारी

मक्खन घास उपजाऊ और अच्छी तरह से जल निकासी वाली मिट्टी में उगता है, लेकिन इसमें मिट्टी की एक विस्तृत श्रृंखला के अनुकूल होने की उल्लेखनीय क्षमता है। उनकी उच्च जल धारण क्षमता और सुखद वातावरण के कारण, भारी बनावट वाली मिट्टी को बेहतर माना जाता है। यह कैल्शियम और फास्फोरस में उच्च मिट्टी में सबसे अच्छा बढ़ता है। कम जुताई और गीली मिट्टी के साथ उच्च उपज क्षमता, तेजी से स्थापना और उपयुक्तता प्राप्त की जाती है। फसल हल्की अम्लता का सामना कर सकती है और जलभराव से फसल की वृद्धि नकारात्मक रूप से प्रभावित होती है। राईग्रास के बीज छोटे होते हैं, इसलिए उचित अंकुरण और स्थापना के लिए एक अच्छी बीज क्यारी की आवश्यकता होती है। मक्खन घास का बीज वजन में बहुत हल्का होता है, इसलिए बुवाई का तरीका बहुत महत्वपूर्ण होता है। इसके लिए खेत की जुताई टीलर एवं हैरो से करने के बाद खेत को समतल किया जाता है एवं ढेलों को तोड़ कर मिट्टी की सतह को समतल कर देते है और मिट्टी को हल्के से जमाने के लिए पाटा लगाकर खेत को बोने के लिए तैयार कर लिया जाता है। अच्छी बीज क्यारी प्राप्त करने के लिए एक खुरदरी जुताई के बाद 2–3 हैरो की आवश्यकता होती है। 6.5–7.0 की पी एच रेंज वाली मिट्टी फसल वृद्धि और विकास के लिए आदर्श होती है।

तापमान व जलवायु

मक्खन घास को विभिन्न जलवायु में उगाया जा सकता है, हालांकि आदर्श स्थितियाँ 18–25 डिग्री सेल्सियस और 300 मिमी समान रूप से वितरित वार्षिक वर्षा हैं। मिट्टी का तापमान 65 डिग्री F (18 डिग्री C) से ऊपर होना चाहिए। अंकुरण और जड़ वृद्धि के लिए इ÷टतम मिट्टी का तापमान 75 डिग्री से 80 डिग्री थ (24 डिग्री से 27 डिग्री C)

है। अंकुरण को बढ़ाने के लिए बीज को नम रखना चाहिए आद्र परिस्थितियों में, अंकुरण 10 से 14 दिनों के भीतर शुरू हो जाएगा और लगभग 18 दिनों के भीतर पूरा हो जाता है। यह शीतकालीन चारा फसल है इसलिए पहाड़ी और कम तापमान वाले क्षेत्रों के लिए अत्यधिक उपयुक्त है और अक्टूबर–दिसंबर से बोने के लिए उपयुक्त है। यदि सर्दियों का तापमान 6–8 डिग्री सेल्सियस से नीचे चला जाता है, तो फसल की वृद्धि में काफी बाधा आती है, भले ही यह सुनिश्चित सिंचाई (विभिन्न रूप से भारतीय परिस्थितियों में) के साथ अधिक तापमान का सामना कर सके।

बुवाई का समय, विधि एवं बीज की मात्रा

मक्खन घास की बुवाई सभी तरह की मिट्टी जिसका पीएच 6.5 से 7.0 तक हो, की जा सकती है। इसकी शीतकालीन बुवाई नवंबर से दिसंबर में की जा सकती है। ग्रीष्मकालीन चारा फसल के लिए इसे मार्च से अप्रैल के बीच बोया जा सकता है। अगर इसकी अक्टूबर महीने में बुवाई की है तो 35–40 दिनों में पहली कटाई मिल जाती है, तथा दूसरी कटाई 20–25 दिनों में मिल जाती है, इस तरह मक्खन घास से तीन से चार कटाई मिल जाती है। मक्खन घास के बीज वजन में हल्के होते हैं। प्रति एकड़ क्षेत्रफल के लिए इसका पांच से छह किलो बीज पर्याप्त होता है। भूमि को पाटा लगाकर समतल करना आवश्यक है जिससे पानी का भराव एक जगह नही हो। इसके पश्चात खेत मे आवश्यकता एवं सिचाई की सुविधा के अनुसार उचित आकार की क्यारियाँ तैयार कर इसमें बीज को ब्रॉडकास्ट स्प्रेडर, सीडर, हाइड्रोसीडर या हाथ से लगाया जा सकता है। अच्छा अंकुरण प्राप्त करने के लिए मिट्टी में बीज को 1/4 इंच से अधिक गहराई पर नहीं डालना क्योकि इसका बीज महीन एवं हल्का होता है जिससे अधिक गहराई पर डालने पर अंकुरण को बाहर निकलने मे समस्या आती है। बुवाई के तुरंत बाद हल्की सिचाई कर देना चाहिए। बरसीम के साथ भी मिलाकर बुवाई की जा सकती है जिसमे 2 से 3 किलोग्राम बीज प्रति एकड़ की आवश्यकता होती है। इस फसल की बुवाई हेतु कतार से कतार की दूरी 30 सेंटीमीटर रखना चाहिए।

बुवाई की गीली विधि – राईग्रास की बुवाई के लिए महीन बीज की क्यारियों का उपयोग किया जाता है क्योंकि इसके छोटे बीज होते हैं। क्यारियों को 0.5–1.0 इंच की गहराई तक भरा जाता है। बीजों को मिट्टी की ऊपरी परत में मिलाने के बाद खड़े पानी में बिखेर दिया जाता है। इस प्रक्रिया से तेजी से अंकुरण और युवा पौध की सरल स्थापना प्राप्त होती है। जबकि सूखी विधि में बीज को एक सीड ड्रिल का उपयोग करके एक कतार में बिखेर दिया जाता है, और बाद में पानी दिया जाता है।

खाद एवं उर्वरक

भूमि की तैयारी से पूर्व मृदा मे 8 टन प्रति एकड़ गोबर या मैंगनी की खाद को चारों तरफ अच्छी तरह से बिखेर कर मिट्टी मे मिला देना चाहिए। नाइट्रोजन (N) सबसे आवश्यक तत्वों में से एक है, जो मक्खन घास की पत्ती के विकास, जैव–उत्पादन, प्रोटीन की मात्रा और गुणवत्ता को सीमित करता है। सामान्य मिट्टी के लिए, अनुसंशित नाइट्रोजन, फास्फोरस और पोटेशियम खुराक क्रमशः 80 किग्रा नत्रजन/हेक्टेयर, 60 किग्रा फ़ॉस्फोरस/हेक्टेयर और 40 किग्रा पोटाश/हेक्टेयर हैं। नत्रजन की आधी मात्रा बुवाई के समय तथा शेष नत्रजन की मात्रा 30 दिन के अंतराल पर विभाजित मात्रा में दें। जब मिट्टी में पोषक तत्वों की कमी हो तो क्रमशः 120 किग्रा नत्रजन /हेक्टेयर, 60 किग्रा फ़ॉस्फोरस /हेक्टेयर और 40 किग्रा पोटाश/हेक्टेयर की सिफारिश की जाती है। प्रत्येक कटाई के बाद प्रति एकड़ की दर से 12 किग्रा. नाइट्रोजन उर्वरक का प्रयोग करना चाहिए।

सिंचाई एवं निराई गुड़ाई

बुवाई के समय खेत में नमी रहनी चाहिए। 10 से 15 दिनों में अंकुरण होना शुरू हो जाता है। मक्खन घास के खेत में पहली सिंचाई के बाद हाथ से निराई–गुड़ाई कर देना चाहिए। बीजों के अंकुरण के बाद दो–तीन सप्ताह में एक सिंचाई की जरूरत होती है। दूसरी सिंचाई बुवाई के लगभग 5 से 6 दिन बाद होती है। बाद में 10 दिनों के अंतराल पर, इसके बाद 20 दिनों के बाद जरूरत के अनुसार पानी दिया जाना जरूरी है। सामान्यतया अक्टूबर–फरवरी में 12–14 दिन के अंतराल पर और मार्च–अप्रैल से 8–10 दिन के अंतराल पर सिंचाई की आवश्यकता होती है। अच्छे कालों के विकास को बढ़ावा देने के लिए प्रत्येक कटाई के बाद सिंचाई की जानी चाहिए।

खरपतवारनाशी

मक्खन घास खरपतवारनाशी के प्रति बहुत संवेदनशील होती है, इसलिए किसी भी खरपतवारनाशी का छिड़काव नहीं करना चाहिए।

कटाई और उपज

हरे चारे की पहली कटाई बुवाई के 60–65 दिन बाद करनी चाहिए। बाद में 25–30 दिनों के अंतराल पर कटाई करनी चाहिए। सामान्य तौर पर फसल को तीन बार काटने के बाद बीज उत्पादन के लिए छोड़ दिया जाता है। बीज उत्पादन के लिए, अंतिम कटाई की तारीख महत्वपूर्ण होती है, और यह फसल की वृद्धि और मौसम की स्थिति पर निर्भर करती है। मक्खन घास की बुवाई 14 किलो ग्राम बीज/हैक्टर के अनुसार करने पर अधिकतम हरे चारे की उपज (879 क्विंटल/हेक्टेयर) और सूखे चारे कीउपज (178 क्विंटल हेक्टेयर) प्राप्त होती है। जिसमें भारत में तीन से चार कटिंग संभव हैं, विशिष्ट उपज वितरण 30–35 प्रतिशत पहली कटाई में, दूसरी कटिंग मे 35–40 प्रतिशत और बाद की कटाई मे 20–25 प्रतिशत उपज प्राप्त होती है।

मक्खन घास की उपयोगिता

- मक्खन घास उच्च पौष्टिक मल्टीकट घास है।
- पहाड़ी क्षेत्रों सहित सभी चारा क्षेत्रों के लिए उपयुक्त है।
- मक्खन घास अच्छे स्वाद के साथ प्रोटीन से भरपूर होती है।
- इसमें उच्च चयापचय योग्य ऊर्जा है।
- अधिकांश कीटों और रोगों के प्रति प्रतिरोधी गुणयुक्त है और उनके नियंत्रण के लिए लगभग नगण्य निवेश की आवश्यकता होती है।

मक्खन घास की खेती

- यह प्रोटीन, ऊर्जा, विटामिन और खनिज का प्रमुख स्त्रोत है। दुनिया भर में मक्खन घास का उपयोग पशुओं को खिलाने के उद्देश्य से किया जाता है।

- यह पाचन प्रक्रिया को बढ़ाने में मदद करता है और खनिजों एवं विटामिन के अवशोषण में सुधार करता है।
- मक्खन घास में उच्च स्तर के पोषक तत्व होते हें। यह छोटे पशुओं और छोटे मेमनों/बछड़ों को चबाने और पचाने में आसान होता है।
- मक्खन घास में सामान्य घास से दो गुणा अधिक प्रोटीन और तीन गुणा अधिक कैल्शियम होता है।
- भेड़/बकरी/गाय के लिए उसके ब्याने के बाद भार बढ़ाने और उच्च गुणवत्ता वाले दूध के उत्पादन के लिए मक्खन घास खिलाना काफी महत्वपूर्ण है।
- इस घास में उच्च मात्रा में विटामिन ए होता है जो कि मेमनों/बछड़ों में विटामिन ए की कमी होने से रोकने में मदद करता है।
- यह घास पशुओं में बीमारी और सूजन को रोकने में भी मदद करती है जिससे कि पशु के दूध उत्पादन में वृद्धि होती है।

मक्खन घास से बनायें 'हे' (सूखी घास)

- घास की कटाई/कटाई बूट स्टेज पर की जाती है (इष्टतम गुणवत्ता के लिए)। जब अगले 4–5 दिनों के लिए अच्छी धूप का पूर्वानुमान हो तो घास की कटाई की जानी चाहिए।
- तेजी से सूखने को बढ़ावा देने के लिए घास को विस्तृत स्वाथ में रखा जाना चाहिए अन्यथा यह पोषक तत्वों (स्टार्च और शर्करा) के खराब होने और नुकसान का कारण होगा।
- घास को सुबह जल्दी काट दिया जाना चाहिए, ताकि इसके पूरे दिन सूरज निकलने के साथ पहले दिन तेजी से नमी कम करने का अवसर मिले।
- 2 –3 दिनों के बाद, घास को टेडेड (मोड़) किया जाना चाहिए ताकि सभी भागों को अच्छी तरह से सूखा जा सके।
- घास को 15% नमी तक सूखना चाहिए।
- पत्तियों को नुकसान से बचाने के लिए इस घास को गलाया जा सकता है या तंग बंडलों में रखा जा सकता है।

मक्खन घास अत्यधिक सुपाच्य और स्वादिष्ट चारा पैदा करता है। मक्खन घास का चारा उच्च शुष्क पदार्थ सेवन स्तरों का समर्थन करता है और उच्च पोषण संबंधी आवश्यकताओं वाले जानवरों के लिए उपयुक्त है। इसे स्थापित करना अपेक्षाकृत आसान है और प्रकृति में बहुआयामी है जिसका उपयोग हरे चारे, साइलेज और घास बनाने में किया जाता है। यह विभिन्न उत्पादन प्रणालियों के साथ एक उत्कृष्ट चारा फसल है, जैसे कि विभिन्न चारा फसलों के साथ अंतरफसल इत्यादि। मक्खन घास के बीज की कीमत की बात करें, तो इसके बीज बाजार में 400 रुपए प्रति किलो तक बिकते हैं।

राष्ट्रीय व्यवहार में हिंदी को काम में लाना देश की एकता और उन्नति के लिए आवश्यक है:

महात्मा गांधी

हाइड्रोपोनिक्स : वर्ष भर पशुओं के लिये हरे चारे विकल्प

सुरेश चंद्र शर्मा, तरूण कुमार जैन एवं रंगलाल मीणा

वर्तमान में, देश को 35.6% हरे चारे, 10.5% सूखी फसल के बचे हुए और 44% फ़ीड (दाना) सामग्री की कमी का सामना करना पड़ रहा है। चारे की खेती के तहत भूमि क्षेत्र को बढ़ाने का विकल्प बहुत सीमित है। अत: पशुओं के लिए चारे का उत्पादन करने के लिए उपलब्ध अल्प भूमि का बुद्धिमानी से उपयोग करना हमारे सामने बड़ी चुनौती है। जिसे उपयुक्त चारा उत्पादन प्रणाली अपनाकर प्राप्त किया जा सकता है। खेती योग्य जमीन की कमी, बढती आबादी, पानी की कमी, गुणवता रहित पानी व भूमि तथा जलवायु परिवर्तन ऐसे प्रमुख कारण है जो किसानों को वैकल्पिक तरीकों की ओर प्रोत्साहित कर रहे हैं। पशुओं के लिए हरा चारा संतुलित एवं पोष्टिक आहार है। देश के अधिकतर हिस्से या तो शुष्क व अर्ध शुष्क है जिसमे सिंचाई हेतु पानी की कमी सदैव ही बनी रहती है या फिर अतिवृष्टि क्षेत्र है। दोनों ही स्थिति में हरा चारा उत्पादन करना चुनौतीपूर्ण कार्य है। ऐसी जगहों पर हाइड्रोपोनिक विधि काफी हद तक कारगर साबित हुई है।

परंपरागत हरा चारा उत्पादन की तुलना में हाइड्रोपोनिक चारा उत्पादन के लिए केवल 2–3 % पानी की आवश्यकता होती है। हाइड्रोपोनिक्स तकनीक में मिट्टी आधारित बागबानी की तुलना में 95 प्रतिशत कम पानी का उपयोग होता है। पारम्परिक चारा फसलों के लिए 80–90 लीटर प्रतिदिन पानी की तुलना में प्रतिदिन 2– 3 लीटर पानी में 1 किलोग्राम हरा चारे का उत्पादन कर सकते है। हाइड्रोपोनिक तकनीक के लिए उच्च गुणवत्ता वाली कृषि योग्य भूमि की आवश्यकता नहीं होती है, लेकिन उत्पादन के लिए केवल भूमि का एक छोटा सा टुकड़ा होता है। इससे प्राप्त हरा चारा गुणवत्तायुक्त, प्रोटीन, फाइबर, विटामिन और खनिजों से भरपूर होता है। हाइड्रोपोनिक प्रणाली की ये सभी विशेषताएं, शुष्क और अर्ध–शुष्क क्षेत्रों में हरे चारा उत्पादन के लिए हाइड्रोपोनिक तकनीक को और भी महत्वपूर्ण बनाती हैं। इस तकनीक में हम जल संसाधनों की अनुपलब्धता को भी पूरा कर सकते हैं। हाइड्रोपोनिक तकनीक में जो हरा चारा पैदा करते हैं, उसे बकरी, भेड़, भैंस, गाय और अन्य सभी पशुधन पशुओं को खिलाया जा सकता है।

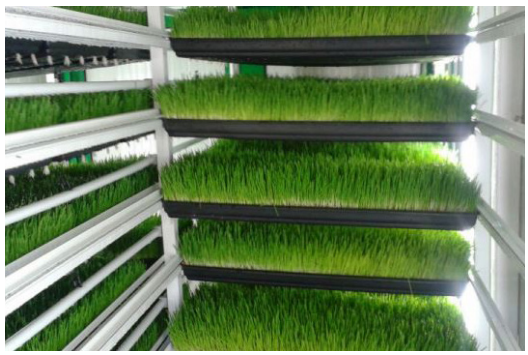

हाइड्रोपोनिक द्वारा हरा चारा उत्पादन

हाइड्रोपोनिक हरे चारे की फिडिंग व्यवस्था

वर्तमान में पशुपालकों को यह भ्रम रहता है कि हाइड्रोपोनिक्स से आने वाले चारे की गुणवत्ता, मिट्टी में उगने वाले चारे की गुणवत्ता से कम होती है। परन्तु ऐसा बिल्कुल नहीं है। मक्के से तैयार किये गये हाइड्रोपोनिक्स चारें से संबंधित प्रयोगों में पाया गया है कि परंपरागत हरे चारे में क्रूड प्रोटीन 10.7 प्रतिशत थी जबकि हाइड्रोपोनिक्स से उगाये गये हरे चारे में क्रूड प्रोटीन 13.6 पायी गयी। लेकिन परंपरागत हरे चारे की अपेक्षा हाइड्रोपोनिक्स हरे चारे में क्रूड फाइबर कम होता है। हाइड्रोपोनिक्स प्रणाली में उगने वाले चारे को उन्हीं पोषक तत्वों की आपूर्ति की जाती है जो मिट्टी उगायें जाने वाले पौधों के लिए

आवश्यक है तथा उनकी मात्रा को इस तकनीक में ज्यादा सही नियंत्रित होकर दिया जाता है। दोनों तरीकों के बीच बुनियादी फर्क पोषक तत्वों और पानी को चारे के लिए देने के लिए वितरित करने के तरीके में निहित है।

हाइड्रोपोनिक्स हरा चारा जड़ों, बीजों और पौधों से मिलकर 20 से 30 सेमी ऊंचाई की चटाई जैसा दिखता है। एक किलो हाइड्रोपोनिक्स मक्का चारा के ताजा उत्पादन के लिए लगभग 1.5 से 3.0 लीटर पानी की आवश्यकता होती है। हाइड्रोपोनिक्स चारा पशुओं को अन्य स्वास्थ्य लाभ प्रदान करते हुए अधिक स्वादिष्ट, सुपाच्य और पौष्टिक होता है। हाइड्रोपोनिक्स चारा खिलाने से राशन के पोषक तत्वों की पाचनशक्ति बढ़ जाती है जो दूध उत्पादन (8 से 13 %) में वृद्धि में योगदान कर सकता है। ऐसी स्थितियों में, जहां पारंपरिक हरे चारे को सफलतापूर्वक नहीं उगाया जा सकता है, किसानों द्वारा कम लागत वाले उपकरणों का उपयोग करके अपने पशुओं को खिलाने के लिए हाइड्रोपोनिक्स चारे का उत्पादन किया जा सकता है। जिन जगहों पर पानी, जमीन और श्रम की कमी है, वहां यह हाइड्रोपोनिक तकनीक का उपयोग करके बहुत छोटे क्षेत्र में 50 किलो से 01 टन तक हरा चारा उत्पादन कर सकते है। इससे प्राप्त हरा चारा पूर्णरूप से जैविक होता है।

हाइड्रोपोनिक्स तकनीक क्या है

हाइड्रोपोनिक्स शब्द मुख्यतः लैटिन भाषा के शब्दों का युग्म है जिसमें हाइड्रो का तात्पर्य पानी एवं पोनोस का तात्पर्य श्रम होता है। वांछित तापमान और आर्द्रता पर पोषक पानी का उपयोग करके बिना मिट्टी के पौधे उगाने के विज्ञान को हाइड्रोपोनिक्स कहते है। देशी भाषा में हाइड्रोपोनिक्स को 'मिट्टी रहित खेती' के रूप में भी जाना जाता है। यह मिट्टी के बजाय पोषक तत्वों से भरपूर घोल में पौधों को उगाने का विज्ञान है और पशुओं के लिए हरा चारा उगाने के लिए भूमि के दबाव को कम करने के लिए इसका कुशलता से उपयोग किया जा सकता है। पौधों को फलने–फूलने के लिए तीन चीजों की जरूरत होती है, पानी, पोषक तत्व और धूप। हाइड्रोपोनिक्स पौधों के विकास को अनुकूलित करने के लिए नियंत्रित पर्यावरण स्थितियों के तहत मिट्टी की आवश्यकता के बिना इन सभी पोषक तत्वों को प्रदान करने का एक सीधा तरीका है। हाइड्रोपोनिक्स से प्राप्त चारे में अनाज, जड़, तना और पत्तियों के साथ घास होती है, जबकि परंपरागत रूप से उगाए जाने वाले चारे में केवल तना और पत्तियां होती हैं। हाइड्रोपोनिक्स के माध्यम से पोषक हरे चारे का उत्पादन आसान और त्वरित होता है।

हाइड्रोपोनिक्स तकनीक की आवश्यकता

परंपरागत हरा चारा उत्पादन के दौरान निम्नलिखित बाधाओं को दूर करने के लिए हाइड्रोपोनिक्स तकनीक की आवश्यकता है।

1) डेयरी किसानों के बीच छोटी जोत
2) चारा उत्पादन के लिए उपजाऊ भूमि की अनुपलब्धता
3) सिंचाई, बाड़ लगाना, भूमि तैयार करने के संसाधन सीमित हैं।
4) खनन और तटीय क्षेत्र में चारा उत्पादन के लिए सीमित क्षेत्र है।
5) आवारा पशुओं और जंगली जानवरों द्वारा चारे को नष्ट करना।
6) खेती के तरीकों के लिए श्रम की उच्च लागत।
7) चारे की खेती के लिए शिक्षित बेरोजगार युवाओं की कम भागीदारी।
8) चारे की मौजूदा उपलब्धता की तुलना में हरे चारे की मांग बहुत अधिक है।

हाइड्रोपोनिक्स के लाभ

हाइड्रोपोनिक्स तकनीक गैर कृषि योग्य भूमि वाले क्षेत्रों के लिए उपयुक्त है। प्राकृतिक आपदाओं जैसे सूखा, बाढ, अत्यधिक गर्मी या ठंड से होने वाली समस्याओं से मुक्त होता है। मृदा कीट और रोगों में काफी कमी आ जाती है। क्योंकि इसमें पूरा तंत्र स्वचालित रहता है जो पी–एच, विद्युत चालकता, तापमान, पोषक तत्वों की सांद्रता तथा आर्द्रता को संतुलित रखता है। इसके अलावा अन्य फायदे इस प्रकार है:–

उच्च उपज और पौधों की वृद्धि : पौधे तेजी से बढ़ते हैं क्योंकि हम पौधों के लिए अनुकूल परिस्थितियों को बनाए रखते हैं। जब हम खेती की पारंपरिक पद्धति से तुलना करते हैं तो इस हाइड्रोपोनिक तकनीक में हम इस तकनीक का उपयोग करके उगाई जाने वाली फसलों की अच्छी और उच्च उपज प्राप्त कर सकते हैं।

हरे चारे की जैविक आपूर्ति : हम खेती की इस पद्धति में रसायनों और उर्वरकों का उपयोग नहीं करते हैं। ताकि, हम इस कृषि तकनीक में जैविक उत्पाद प्राप्त कर सकें।

पानी का संरक्षण : एक किलो हरे चारे के उत्पादन के लिए सिर्फ 2 से 3 लीटर पानी की आवश्यकता होती है, जबकि चारा उत्पादन की पारंपरिक प्रणाली में 60 से 80 लीटर पानी की आवश्यकता होती है। हाइड्रोपोनिक्स में बचे हुए पानी को चारा उगाने के लिए पुनर्चक्रीत किया जा सकता है।

भूमि : हाइड्रोपोनिक्स ग्रीनहाउस को पारंपरिक हरी घास के मैदान के लिए एक हेक्टेयर भूमि की तुलना में 600 किलोग्राम हरे चारे/दिन/इकाई के लिए 10 मीटर X 4.5 मीटर भूमि अर्थात सीमित भूमि की आवश्यकता होती है। अधिकतम चारे के उत्पादन के लिए आवश्यक भूमि की मात्रा में कमी करती है हाइड्रोपोनिक्स प्रणाली क्योंकि घनी आबादी वाले क्षेत्रों में पर्याप्त जगह नहीं है।

कम श्रम की आवश्यकता : पारंपरिक चारा उत्पादन में खेती से लेकर घास की कटाई तक लगातार गहन श्रम की आवश्यकता होती है, लेकिन हाइड्रोपोनिक्स में केवल 2 से 3 घंटे/दिन श्रम की आवश्यकता होती है।

हरे चारे के विकास के समय में कमी : हाइड्रोपोनिक्स तकनीकी से कम समय में अधिक चारा उत्पादन किया जाता है। पौष्टिक चारा प्राप्त करने के लिए बीज के अंकुरण से लेकर 25 से 30 सेंटीमीटर ऊँचाई के पूर्ण विकसित पौधे तक केवल 7 से 10 दिनों की आवश्यकता होती है। बायोमास रूपांतरण अनुपात 60 से 80 दिनों के लिए उगाए जाने वाले पारंपरिक चारे से 7 से 8 गुना अधिक है।

साल भर हरा चारा: हाइड्रोपोनिक्स मांग के अनुसार पूरे साल हरे चारे का प्रावधान करने में सक्षम है। बारिश, तूफान, धूप या सूखे की परवाह किए बिना निरंतर आपूर्ति की व्यवस्था की जा सकती है।

चारे के पोषक मूल्य में वृद्धि : हाइड्रोपोनिक्स के माध्यम से डेयरी पशुओं से गुणवत्तापूर्ण दूध प्राप्त करने के लिए अतिरिक्त विकास प्रवर्तकों, पोषक तत्वों आदि को जोड़कर पोषक मूल्य को बढ़ाना संभव है।

पशुओं के लिए प्राकृतिक चारा : हाइड्रोपोनिक्स के माध्यम से हरा चारा उगाना पूरी तरह से प्राकृतिक स्रोत से है। हरे चारे के उत्पादन में किसी भी कीटनाशक का उपयोग नहीं किया जाता है जो दूध और दुग्ध उत्पादों को दूषित कर सकता है।

कुल मिलाकर यह कहा जा सकता है कि हाइड्रोपोनिक अभिनव प्रौद्योगिकी से व्यापक तापमान (15 से 32° C) और आर्द्रता (70 से 80 %) की सीमा में फफूंद वृद्धि के बिना हरे चारे को उगाने सकते है। यह तकनीक पर्यावरण के अनुकूल तकनीक है। इससे संदूषण मुक्त शुद्ध चारा प्राप्त होता है एवं जल और श्रम की बचत होती है। हाइड्रोपोनिक विधि से उगाया गया हरा चारा अत्यधिक स्वादिष्ट और पौष्टिक होता है फलस्वरूप पशु स्वास्थ्य और प्रजनन क्षमता में सुधार आता है।

हाइड्रोपोनिक प्रणाली कैसे बनाएं

इसके लिए हम प्लास्टिक की ट्रे ले सकते हैं या लकड़ी की ट्रे बना सकते हैं जिसकी लंबाई लगभग 01 मीटर, चौड़ाई 40 सेंटीमीटर एवं गहराई 5 सेमी हो। इस तरह की ट्रे को पर्याप्त ऊंचाई पर लकड़ी अथवा लोहे के बने स्टेंड पर इस तरह रखते हैं कि अतिरिक्त पानी निथार सके। इसके बाद इन ट्रे में उपचारित चारा बीज की 2 से 2.5 सेमी मोटी परत बिछा देते हैं। तत्पश्चात इसमे झारे से अथवा अच्छी तरह से जुड़े हुए प्लास्टिक के पाईप से 3 से 4 घंटे के अंतराल पर तैयार किया गया उर्वरक पानी देते है। मौसमानुसार सात से दस दिन में अंकुरित होकर हरा चारा पशुओं को खिलाने हेतु तैयार हो जाता है।

हाइड्रोपोनिक हेतु पोषक तत्वों युक्त उर्वरक पानी घर पर कैसे बनाते हैं ?

हाइड्रोपोनिक पोषक तत्वों बनाने के लिए आपको नाइट्रोजन, फास्फोरस, कैल्शियम आदि खरीदना होगा। ये नमक के रूप में होते हैं। घोल बनाने के लिए इन लवणों को पानी के साथ मिलाएं। लवण टूट जाएगा और पौधे को पोषक तत्व प्रदान करेगा। यहां वे मात्राएं हैं जिनका उपयोग करना चाहिए।

- अमोनियम फॉस्फेट 2 चम्मच
- मैग्नीशियम सल्फेट 4 चम्मच
- पोटेशियम नाइट्रेट 4 चम्मच
- कैल्शियम नाइट्रेट 4.5 चम्मच

फ़िल्टर्ड पानी का उपयोग करे जिसमें किसी तरह, कोई भी गंदगी या अवांछित दूषित पदार्थ नहीं हों। घोल बनाने के लिए कुछ बाल्टी पानी की आवश्यकता होगी। बाल्टियों में 10 गैलन पानी डालना चाहिए। एक अन्य कंटेनर में 1 चौथाई पानी डालें और 0.25 चाय के चम्मच से बोरिक एसिड और 0.1 चाय के चम्मच से मैंगनीज क्लोराइड मिलाकर अच्छी तरह से हिलाये। फिर इस घोल का आधा कप लें और इसे मैक्रोन्यूट्रिएंट घोल में मिलाएं। एक अलग कंटेनर में 1 चौथाई गेलन पानी डालें और 0.5 चाय के चम्मच आयरन मिलाएं। इस घोल का 3/5 कप मैक्रोन्यूट्रिएंट घोल में मिलाएं। पौधे की वृद्धि के लिए सूक्ष्म पोषक तत्वों (बोरिक एसिड, क्लोरीन, मैंगनीज, लोहा, आदि) की आवश्यकता होती है।

अब तैयार घोल के पीएच स्तर को संतुलन करने की आवश्यकता है। यह सुनिश्चित करना है कि पीएच स्तर 5.5 से 6.5 के बीच हो। यदि यह 7.0 से अधिक है, तो यह क्षारीय है, अत: पीएच स्तर को कम करने की आवश्यकता है। पीएच स्तर को कम करने के लिए मिश्रण में सिरका डाल सकते हैं। यदि पीएच मान 5.5 से कम है, तो यह अम्लीय है। इस पीएच स्तर को समायोजित करने के लिऐ बेकिंग सोडा डालना चाहिए। पीएच स्तर को संतुलन करने के बाद, विद्युत चालकता को संतुलन करना चाहिए। यह पानी के पोषक तत्वों का अनुपात है। रीडिंग की जांच करने के लिए

इलेक्ट्रॉनिक ईसी मीटर का उपयोग कर सकते हैं। विद्युत चालकता को 0.8 से 3.0 के बीच होना चाहिए। ज्यादातर मामलों में, 1.5 से 2.5 अधिक उपयुक्त है। यदि विद्युत चालकता बहुत अधिक है, तो इसे नीचे लाने के लिए अधिक पानी डालना चाहिए। उच्च पैदावार सुनिश्चित करने के लिए सभी पोषक तत्वों को सही मात्रा में डालना चाहिए। पौधों को पर्याप्त प्रकाश मिलना चाहिए। इस तरह उगाए जाने वाले पौधों पर कीटों द्वारा हमला नहीं किया जाता है। अत:, निराई आवश्यक नहीं है।

पारंपरिक हरा चारा एवं हाइड्रोपोनिक्स हरा चारा उत्पादन की तुलना

विवरण	हाइड्रोपोनिक्स हरा चारा	पारंपरिक हरा चारा	बचत
क्षेत्र	50 वर्गमीटर	10000 वर्गमीटर	भूमि की बचत
दिनों में चारा उत्पादन	सिर्फ 7 से 10 दिन	65 से 70 दिन	समय अवधि की बचत
पानी और बिजली की आवश्यकता	बहुत कम	बहुत ज्यादा	पानी और बिजली की बचत
मिट्टी की उर्वरता	ज़रूरी नहीं	ज़रूरी है	उर्वरकता आवश्यकता को बचाता है
उर्वरक	जरूरत नहीं है	आवश्यक है	उर्वरक लागत पर बचत और संदूषण से बचाता है
चारा उपज निर्भरता	नियंत्रित वातावरण में	मौसम और सिंचाई पर	बाहरी कारकों पर कोई निर्भरता नहीं
श्रम की आवश्यकता	बहुत कम	अत्यधिक	श्रम में बचत
बाड़ लगाना और सुरक्षा	जरूरत नहीं है	आवश्यक है	लागत और सुरक्षा पर बचत
पशुओं द्वारा हरे चारे का उपयोग	पूर्ण	आंशिक	हरे चारे की बर्बादी में कमी
चारा खिलाने के तरीके	जरूरत नहीं है	कुट्टी करना जरूरी है	काटने के समय और श्रम लागत की बचत

हाइड्रोपोनिक्स चारे की परम्परागत मिट्टी द्वारा उत्पादित चारे (जौ) में तुलना

पोशक चारा	परम्परागत	हाइड्रोपोनिक्स
प्रोटीन प्रतिशत	11.5	29.8
रेशा प्रतिशत	30	25.26
ऊर्जा किलो कैलोरी	2600	4400
ऐश (राख) प्रतिशत	11.4	5.5

हिंदी जैसी सरल भाषा दूसरी नहीं है:

मौलाना हसरत मोहानी

अजोला : एक परिपूर्ण पूरक पशु आहार

तरूण कुमार जैन, सुरेश चंद्र शर्मा और रामेश्वर प्रसाद चतुर्वेदी

आज के युग में कृषि एवं पशु पालन विशेषकर भेड़ व बकरी पालन एक दुसरे के पुरक हैं। राजस्थान की अर्थव्यवस्था में पशुपालन की सदैव महत्वपूर्ण भूमिका रही है। पशुपालन व्यवसाय लघू और सीमान्त किसानों, ग्रामीण महिलाओं और भूमिहीन कृषि श्रमिकों को रोजगार के पर्याप्त व सुनिश्चित अवसर देकर ग्रामीण अर्थव्यवस्था को ठोस आधार प्रदान करता है। परंतु भारत देश में विशेषकर राजस्थान में पशुधन को साल में 9 महीने अपौष्टिक सूखा चारा ही प्राप्त होता हैं। प्राय: मानसून के अलावा पशुओं को फसल अवशेषों एवं भूसे आदि पर पालना पड़ता है। दरअसल वर्ष के कम से कम दो तिहाई समय देश के सभी क्षेत्रों में हरे चारे की कमी रहती है। पशु पालक पशुओं को गेहूं का भुसा या कड़बी (ज्वार/बाजरा/मक्का) या अन्य अपौष्टिक सुखा चारा ही दे पाते है और फिर चरने के लिए खुलें में छोड़ देते है। चारा दाना मंहगा होने के कारण कई पशु पालक आर्थिक समस्या के कारण महंगा पशु आहार नही खिला सकते हैं, फलस्वरूप पशुओं को पर्याप्त मात्रा में पोषण नही मिल पाता है। जिससे पशुओं की बढोतरी, उत्पादन एवं प्रजनन क्षमता पर विपरीत प्रभाव पड़ता है एवं पशु कुपोषण के शिकार हो जाते हैं। कुपोषण की समस्या के कारण दूध उत्पादन कम हो जाता हैं एवं भेड़ व बकरी के बच्चें कमजोर हो जाते हैं। पशुओं के संतुलित आहार में हरे चारों की अहम भूमिका होती है, इसे नकारा नहीं जा सकता है। हरे चारे अथवा पौष्टिक आहार की इस कमीं की पूर्ति बाजार से महंगे व गुणवत्ता विहीन पशु आहार से की जा रही है। इस कारण पशु पालन में आने वाली लागत काफी अधिक होती जा रही हैं। इसी वजह से पशु पालन एक घाटे का व्यवसाय होता जा रहा है जिससे किसानो का पशुधन के प्रति मोह कम होता जा रहा है। पशुआहार का विकल्प – अजोला सदाबहार चारे के रूप में उपयोगी हो सकता है। अजोला उत्पादन पशुपालको के लिए वरदान बन सकता है। इसे घर–आंगन में उगा सकते है और साल भर हरा चारा उत्पादन कर सकते हैं। देश के विभिन्न क्षेत्रों से अजोला उत्पादन के बेहतर नतीजे सामने आ रहे है।

अजोला : एक परिचय

अजोला, अजोसी कुल का एक सदस्य है, जो कि जल सतह पर मुक्त रूप से तैरने वाली जलीय फर्न है। यह छोटे–छोटे समूह में सघन हरित गुच्छे की तरह तैरती एवं फैलती है। यह नम, आर्द्र एवं गर्म जलवायु में आसानी से उगाया जा सकता है। भारत में इसकी प्रजाति अजोला पिन्नाटा एवं एनाबियाना काफी उपयुक्त पाई गई है। यह अधिक गर्मी सहन करने वाली किस्म है।

अजोला के गुण

- अजोला कम लागत का पशुओं के लिए एक पौष्टिक आहार है।
- यह जल मे तीव्र गति से बढवार करती है।
- शुष्क भार के आधार पर इसमें 25–35 प्रतिशत प्रोटीन, 10–12 प्रतिशत खनिज पदार्थ एवं 7–10 प्रतिशत अमीनो अम्ल पाए जाते हैं।
- अज़ोला में ज्यादातर सभी आवश्यक अमीनो अम्ल, विटामिन (विटामिन ए, विटामिन बी–12 तथा बीटा कैरोटीन, विकास वर्धक सहायक तत्वों एवं कैल्शियम, फॉस्फोरस, पोटेशियम, कॉपर एवं मैग्नेशियम से भरपुर हैं।
- उपरोक्त जैव रसायनों से भरपूर होने के कारण यह पशुओं के लिये एक आदर्श जैविक पूरक आहार कहा जा सकता है।

- अजोला खिलाने से न केवल पशु स्वस्थ एवं निरोग रहता है बल्कि दूध की उत्पादकता में भी 10–15 प्रतिशत की वृद्धि पाई गई है। इसके अलावा शारीरिक विकास में भी यह काफी सहायक सिद्ध हुआ है।
- पशु, अजोला को आसानी से पचा सकते हैं, क्योंकि इसमें रेशा तथा लिग्निन कम मात्रा में पाया जाता है।
- इसकी उत्पादन लागत काफी कम होती हैं
- यह औसतन 15 कि़ग्रा वर्गमीटर की दर से प्रति सप्ताह उपज देती है
- सामान्य अवस्था मे यह फर्न तीन दिन में दौगुनी हो जाती है
- यह पशुओ के लिए आर्दश आहार के साथ साथ भूमि उर्वरा शक्ति बढाने के लिए हरी खाद के रूप में भी उपयुक्त है।
- दुधारू पशुओं जैसे–गाय, भैंस, भेड़, बकरी आदि के आहार में सस्ते जैविक पूरक राशन के रूप में अजोला का उपयोग कर प्रोटीन तथा हरे चारे की कमी को पूरा किया जा सकता है ।

अजोला के उत्पादन हेतु उपयुक्त जलवायु

प्राकृतिक रुप से यह उष्ण व गर्म उष्ण कटिबंधीय क्षेत्रों में पाया जाता हैं। 20 से 30 डिग्री तापमान व 60 प्रतिशत आद्रता पर यह पौधा तैयार हो जाता हैं। अजोला की अच्छी बढ़वार के लिये प्रकाश की की अति आवष्यकता हैं, लेकिन अधिक गर्मी के मौसम में यह छाया में उचित वृद्धी करता हैं। अच्छी बढ़वार के लिये पानी की गहराई 8–12 सेमी तथा पी एच मान 5.0 से 7.0 उपयुक्त होता हैं।

अजोला ईकाई स्थापना

अजोला उगाने के लिये किसी विशेष विशेषज्ञता की जरुरत नही होती हैं। किसान/पशु पालक स्वयं ही इसे आसानी से उगा सकते हैं। इसके लिये अधिक भूमि की भी आवश्यकता नही होती हैं।

- सर्व प्रथम किसी भी छायादार स्थान पर 2 मीटर लम्बा एवं 2 मीटर चौडा (वर्गाकार) अथवा 4 मीटर लंबा, 1 मीटर चौड़ा (आयताकार) तथा 20–30 सेमी गहरा गड्ढा उपयुक्त होता है।
- इसके बाद गड्ढे की सतह पर प्लास्टिक शीट बिछा देते हैं, जिससे आसपास लगे पेड़ों की जड़े गड्ढे में न जाएं। प्लास्टिक के लगे होने से गड्ढे में रिसाव द्वारा बाहर का पानी नहीं पहुंचता तथा गड्ढे का तापमान भी नियंत्रित रहता है ।
- जहाँ तक संभव हो पराबैंगनी किरणरोधी प्लास्टीक शीट का प्रयोग करना चाहिये। इसके लिये प्लास्टीक शीट सिलपोलीन एक पॉलीथीन तारपोलीन हैं जो की पराबैंगनी किरणो के लिये प्रतिरोधी क्षमता रखती हैं।
- गड्ढे में प्लास्टिक शीट इस प्रकार से बिछानी चाहिए, जिससे उसमें परत न पड़े।
- सीमेंट की टंकी में भी अजोला उगाया जा सकता हैं इसमें प्लास्टिक शीट बिछाने की आवश्यकता नही होती।
- गड्ढे में लगभग 10–15 कि.ग्रा. छनी हुई मिट्टी समान रूप से पॉलीथीन के ऊपर डाल देते हैं।

अजोला उत्पादन व्यवस्था

- इसके बाद 5 कि.ग्रा. गोबर, 30 ग्राम एस.एस.पी. का 10 लीटर पानी में घोल बनाते हैं तथा इस घोल को गड्ढे में डालते हैं। इसके बाद और अधिक पानी को गड्ढे में डालते हैं, जिससे पानी का स्तर 8 सें.मी. हो जाए।

- लगभग 1–2 कि.ग्रा. ताजा रोगमुक्त अजोला का बीज गड्ढे में डालते हैं।
- अजोला 7–10 दिनों में पूर्ण वृद्धि प्राप्त कर गड्ढे में भर जाता है। इस प्रकार लगभग 4 वर्ग मीटर के गड्ढे से 2 कि.ग्रा. अजोला प्रतिदिन प्राप्त कर सकते हैं।
- प्रत्येक 7 दिनों के अंतराल पर गोबर 2 कि.ग्रा., 20 ग्राम एस.एस.पी. को 2 लीटर पानी में घोलकर गड्ढे में डालते रहना चाहिए, जिससे अजोला का उत्पादन अधिक एवं टिकाऊ बना रहता है।

अजोला उत्पादन में ध्यान देने योग्य बातें

- अजोला की तेज बढ़वार और उत्पादन के लिए इसे प्रतिदिन उपयोग हेतु (लगभग 200 ग्राम प्रति वर्गमीटर की दर से) बाहर निकाला जाना आवश्यक हैं।
- अजोला तैयार करने के लिए अधिकतम 30 डिग्री सेग्रे तापमान उपयुक्त माना जाता है। अतः इसे तैयार करने वाला स्थान छायादार होना चाहिए। शीत ऋतु में तापमान कम होने पर अजोला क्यारी को प्लास्टिक मल्च अथवा पुरानी बोरी के टाट अथवा चद्दर से रात्रि में ढक दें।
- समय–समय पर गड्ढे में गोबर एवं सिंगल सुपर फॉस्फेट डालते रहें जिससे अजोला फर्न तीव्रगति से विकसित होता रहे।
- प्रति माह एक बार अजोला तैयार करने वाले गड्ढे या टंकी की लगभग 5 किलो मिट्टी को ताजा मिट्टी से बदलें जिससे नत्रजन की अधिकता या अन्य खनिजो की कमी होने से बचाया जा सके ।
- एजोला तैयार करने की टंकी के पानी के पीएच मान का समय–समय पर परीक्षण करते रहें। इसका पीएच मान 5.5–7.0 के मध्य होना उत्तम रहता है।
- प्रति 10 दिनों के अन्तराल में, एक बार अजोला तैयार करने की टंकी या गड्ढे से 25–30 प्रतिशत पानी ताजे पानी से बदल देना चाहिए जिससे नाइट्रोजन की अधिकता से बचाया जा सके ।
- प्रति 6 माह के अंतराल में, एक बार अजोला तैयार करने की टंकी या गड्ढे को पूरी तरह खाली कर साफ कर नये सिरे से मिट्टी,गोबर, पानी एवं अजोला कल्चर डालना चाहिए।
- अजोला गड्ढे से निकाली गई मिट्टी एवं पानी को फेंकने की बजाए अपने बाग एवं खेतों में डालें, जिससे वो एक जैविक खाद के रूप में मिट्टी को मिलेगी एवं इसके पौष्टिक तत्व से जमीन को उपजाऊ बनाया जा सके।
- आधी बाल्टी पानी में अजोला को अच्छी तरह से धो लेना चाहिए एवं पानी को किसी पौधे में ड़ाल देना चाहिये। उसके बाद ही इसका प्रयोग दुधारू पशुओं के लिए किया जाना चाहिए, ताकि गोबर की गंध खत्म हो जाए, फिर पशु इसे स्वाद से खाते हैं।

अजोला अन्य चारे से बेहतर क्यों ?

- अजोंला जैविक नाईट्रोजन स्थिरीकरण द्वारा नाईट्रोजन प्रदान करने का एक सस्ता स्त्रोत हैं ।
- रिजका एवं संकर नेपियर की तुलना मे अजोला से 4 से 5 गुना उच्च गुणवता युकत प्रोटीन प्राप्त होती है यदि जैव भार उत्पादन के रूप में तुलना करे तो रिजका व संकर नेपियर से अजोला 4 से 10 गुना तक अधिक उत्पादन देता है।

- अजोला की उत्पादन लागत अन्य चारो से बहुत कम (लगभग 1 से 1.50 रुपये प्रति किग्रा)
- यदि छोटे किसान अजोला चारा उगाते है, तो वर्ष के शेष भाग के लिए चारे की आवश्यकताओं को पूरा किया जा सकता हैं। अन्य चारे की अपेक्षा रख रखाव एवं उत्पादन में खर्च कम होता हैं। अजोला की उत्पादन विधि इतनी आसान व सरल है कि घर की महिलायें भी इसका उत्पादन कर सकती हैं।
- गोपशुओं एवं छोटे जानवरों जैसे बकरी, भेड़ मुर्गी, बत्तख, शूकर के लिए इसका उपयोग कर कम समय में उनका औसत वजन बढ़ाकर अच्छी आमदनी की प्राप्ति कर सकते हैं।
- आर्थिक पशुपालन उत्पादन की वृद्धी इन दोनो कारको के अति महत्वपूर्ण होने से अजोला को जादुई फर्न अथवा सर्वोत्तम पादप अथवा हरा सोना अथवा पशुओ के लिए च्वनप्राश की संज्ञा दी गई है।

अजोला का रासायनिक संघटन (शुष्क भार आधार पर)

अजोला : सदाबहार पौष्टिक हरा चारा	पोषक तत्व	मात्रा (प्रतिशत)
	प्रोटीन	22.5
	रेशा	12.5
	वसा	03.2
	कार्बोहाइड्रेट	50.0
	खनिज लवण	
	कैल्शियम	1.16
	फॉस्फोरस	1.29
	मैग्नीशियम	0.35
	सूक्ष्म तत्व	
	मैंगनीज	174.42
	जिंक / जस्ता	87.59
	कॉपर / तांबा	16.74

अजोला और अन्य चारे के बायोमास और प्रोटीन की तुलना

मद	बायोमास का वार्षिक उत्पादन (मिट्रिक टन/ हेक्टेयर	शुष्क पदार्थ (मिट्रिक टन/ हेक्टेयर)	प्रोटीन (%)
हाइब्रिड नेपियर	250	50	4
कोलाकटटो घास	40	8	0.8
ल्युक्रेन	80	16	3.2
कोऊपी	35	7	1.4
सुबाबुल	80	16	3.2
सोरघम	40	3.2	0.6
अजोला	1,000	80	24

अजोला चारा के रुप में क्यों उपयोगी हैं ?

अजोला सस्ता, सुपाच्य एवं पौष्टिक पूरक पशु आहार है। पशुओं को दैनिक आहार के साथ 1.5 से 2 किग्रा. अजोला प्रतिदिन दिया जा सकता है। इससे दुग्ध उत्पादन में 15–20 प्रतिशत तक वृद्धि संभव है। इसे खिलाने से वसा व वसा रहित पदार्थ सामान्य आहार खाने वाले पशुओं के दूध में अधिक पाई जाती है। अजोला घास से गायों का स्वास्थ्य और प्रजनन शक्ति बढ़ती हैं। यह पशुओं के बांझपन निवारण में उपयोगी है। पशुओं के पेशाब में खून की समस्या फॉस्फोरस की कमी से होती है। पशुओं को अजोला खिलाने से यह कमी दूर हो जाती है। अजोला से पशुओं में कैल्शियम, फॉस्फोरस, लोहे की आवश्यकता की पूर्ति होती है जिससे पशुओं का शारीरिक विकास अच्छा होता है। भेड़–बकरी लगभग 2–3 किलो ताजा अजोला प्रतिदिन खा लेते हैं जिससे 30 से 35 ग्राम प्रोटीन की आपुर्ति के साथ–साथ 2.0 से 2.5 लीटर पानी की भी पूर्ति हो जाती हैं।

अजोला को पशुओं को खिलाने से उनके उत्पादन में वृद्धि एवं लाभ

पशु	मात्रा	वृद्धि शरीर भार प्रतिशत/उत्पादन
गाय	1.5 कि.ग्रा. प्रतिदिन	15 प्रतिशत
भैंस	1.5 कि.ग्रा. प्रतिदिन	12 प्रतिशत
बकरी	1.0 कि.ग्रा. प्रतिदिन	15.9 प्रतिशत
भेड़	1.0 कि.ग्रा. प्रतिदिन	16.0 प्रतिशत
मुर्गी	150 ग्राम प्रतिदिन	12.5 प्रतिशत
शूकर	2.0 कि.ग्रा. प्रतिदिन	20.0 प्रतिशत
घोड़ा	1.5 कि.ग्रा. प्रतिदिन	11.5 प्रतिशत

अजोला ईकाई से चारा पैदावार

अजोला बहुत तेजी से बढ़ता हैं और 10–15 दिन के अंदर पुरे गढ्ड़े को ढक लेता हैं। इसके बाद 4 X1.5 मीटर के गड्ढे से 1.5 से 2 किग्रा अजोला प्रतिदिन छलनी या बांस की टोकरी से पानी के ऊपर बाहर निकाला जा सकता हैं, जिससे की क्यारी का पानी क्यारी में ही रहें। हर हफ्ते एक हैक्टर में 90 से 100 क्विन्टल अजोला का उत्पादन लिया जा सकता हैं जो कि 450 से 500 किलो शुष्क पदार्थ के बराबर हैं एवं प्रतिदिन 16 से 18 किलो प्रोटीन उपलब्ध कराता हैं।

अजोला इकाई की लागत विश्लेषण

अजोला चारा ईकाई लगाने की लागत रू. 1500 से रू. 2000 के बीच आती है। प्राथमिक लागत श्रम के रूप में होती है जिसे पारिवारिक श्रम द्वारा पूरा किया जा सकता है। चारा ईकाई की लागत का आंकलन करते समय चारा क्यारियों की दो इकाइयों को शामिल किया जाता है ताकि अजोला की उपज नियमित रूप से मिलती रहे। पशु और चारे की आवश्यकता के आधार पर इकाइयों की संख्या को बढ़ाया जा सकता है। लागत का विवरण निम्नानुसार है:–

अजोला से प्रति इकाई लागत का ब्यौरा

उत्पाद	मात्रा	लागत (रुपये)
2 क्यारी बनाने की मजदूरी (4 X 1.5 मीटर) एवं उपजाऊ मिट्टी (30 किग्रा)	1 मजदूर 400/– रुपये	400रुपये
छाया करने के लिए ग्रीन नेट, छप्पर आदि	15 वर्ग मीटर (दर 25 प्रति मीटर)	375 रुपये
प्लास्टिक शीट (काले रंग की)	15 मीटर (दर 20 रुपये प्रति मीटर)	300रुपये
उर्वरक एस एस पी	रुपये 10/– प्रति किग्रा	50 रुपये
ताजा गोबर	10 कि.ग्रा. (दर 4 प्रति कि.ग्रा.)	40रुपये
अजोला बीज	5 कि.ग्रा. (100 रुपये प्रति कि.ग्रा.)	500 रुपये
कुल लागत		**1665 रुपये**

हिंदी चिरकाल से ऐसी भाषा रही है जिसने मात्र विदेशी होने के कारण किसी शब्द का बहिष्कार नहीं किया:

डॉ. राजेन्द्र प्रसाद

मूंगफली की फसल में अधिक पैदावार लेने के लिए रोग एवं नियंत्रण के उपाय

जे. पी. बैरवा, एस. सी. शर्मा एवं अरूण कुमार तोमर

तिलहन फसलों में मूंगफली का महत्वपूर्ण स्थान है, इसमें तेल के साथ–साथ प्रोटीन भी प्रचुर मात्रा में पाया जाता है। मूंगफली के तेल को देश–विदेश में बढ़ती मांग के कारण, इसे सभी प्रकार की मिट्टी में उगाया जाता है लेकिन मूंगफली के लिए बलुई दोमट मिट्टी सबसे अधिक उपयुक्त रहती है । मूंगफली को सिंचित एवं असिंचित क्षेत्रों में भी उगाने लगे हैं किन्तु इसकी उपज पर्याप्त नहीं मिल पाती, इसके कई कारण हैं । विभिन्न प्रकार के रोगों का आक्रमण, उनमें से एक प्रमुख कारण है। रोगों को शुरूआत में पहचान कर यदि उनका समय पर प्रबन्ध कर ले तो कुछ रोग व्याधियों से होने वाली हानि से बच सकते हैं। और मूंगफली की अच्छी उपज प्राप्त कर सकते हैं । मूंगफली के प्रमुख रोग एवं रोकथाम के उपाय निम्नानुसार हैं।

गेरुआ : यह रोग लगातार वर्षात एवं बादल छाये रहने पर फसल पर आक्रमण करता है, जो कि एक फफूंद पक्सीनिया एरेचिडस के कारण होता है । रोग के लक्षण सर्वप्रथम पौधे के निचले पत्तियों पर लाल भूरे रंग की छोटी–छोटी बुदंक के रुप में दिखाई देती है, जो बाद में पौधे की ऊपरी पत्तियों पर्णवृन्त एवं शाखाओं पर भी फैल जाते हैं । इन बूंदकियों से गेरुई रंग का चूर्ण निकलता हे तो स्वस्थ पौधों पर जाकर उन्हें भी संक्रमित कर देता है बाद में ये स्पोट या बुन्दकी काले पड़ जाते है, तथा पौधें की बढ़वार रुक जाती है। पौधे झुलसे हुऐ दिखाई देते हैं, और पत्तियां झड़ने लगती है। कभी–कभी रोग के कारण 50 प्रतिशत हानि हो जाती है।

रोकथाम : रोग निरोधक जातियां लगाये । रोग के लक्षण दिखाई पड़ते ही मैन्कोजेब (2.5 ग्राम/लीटर पानी) या बेलेटान (2 ग्राम/लीटर पानी) या प्लांटवेक्स (1.5 ग्राम/लीटर) का छिड़काव 15 दिनों के अंतर से 2 से 3 बार करें।

टिक्का पत्ति धब्बा : यह मूंगफली का प्रमुख रोग है जो कि मूंगफली उगाने वाले सभी क्षेत्रों में पाया जाता है। इस रोग से 15 से 50 प्रतिशत कमी आ सकती है । इसके लक्षण पत्तियों अर्धवृताकार गहरे भूरे रंग के धब्बे पर्णवृन्त एवं तने पर भी बनते हैं । रोग की उम्र अवस्था में ये धब्बे आपस में मिल जाते हैं और पत्तिया झड़ जाती हैं यह अगेती टिक्का रोग के कारण होता है । पछेती टिक्का रोग के लक्षण बाद में दिखाई देते हैं, इसके कारण पत्तियों की निचली सतह पर गोल गहरे भूरे से काले रंग के अपेक्षाकृत छोटे, 1–6 मिली लीटर व्यास के धब्बे बनतें हैं । धब्बों के ऊपर घेरे में बीजाणु बनते है । जिससे उनकी सतह खुरदरी प्रतीत होती है। रोग की तीव्रता बढ़ने पर धब्बे पर्णवृन्त एवं तनों पर भी बनते हैं । यह फिओआइसेरिआप्सिस परसोनेटा के कारण होता है।

रोकथाम : पौधे एवं खेतों के मेड़ या आस आस–पास के मूंगफली के गिरनार, बी॰ एस॰ आर॰–1, सी॰ ओ॰ 3, बी॰ जी॰ –3 आदि लगायें । रोग के लक्षण दिखते ही बेविस्टीन 1 ग्राम दवा प्रति लीटर पानी या क्लोरोथेलोनिल 2 ग्राम प्रति लीटर पानी के हिसाब से घोल बनाकर छिड़काव करते है जिसका 15 दिनों के अंतर से पुनः छिड़काव करते है ।

जड़ सड़न : यह रोग मूंगफली में अक्सर पौध अवस्था में पौधों को प्रभावित करता है । यह स्केलेरोशियम रोल्फासाई नामक फफूंद से होता है, जो कि बहुत समय तक जिंदा रहता है । पौधे की शाखाओं का निचला भाग भूरे रंग का हो जाता है और पत्तियॉ भी संक्रमित हो जाती हैं । ग्रसित या मरे हुए पौधों को उखाड़कर देखने पर तने के निचले भाग पर सफेद रंग की कपास के समान फफूंद और उस पर राई के दानों के समान संरचनाएं दिखाई देती है ।

रोकथाम : फसल कटाई के बाद फसल को एकत्रित करके जला देना चाहिए । बीज को उपचारित करके ही बोना चाहिए। मूंगफली में बिजोपचार 3 ग्राम थायरम प्रति किलोग्राम के हिसाब से करना चाहिए।

पौध झुलसन : यह रोग एस्परजिलम फफूंद के कारण होता है एवं सभी क्षेत्रों में जहां मूंगफली उगाई जाती है, पर पाया जाता है । पौध अवस्था में जब रोग का प्रकोप होता हैं तो पौधों में सड़न पैदा होती है और पूर्ण रूप से फसल नष्ट हो जाती है। इसके पहले जब बोने के तुरन्त बाद बीज भूमि में रहता है तब भी इस फफूंद का आक्रमण होता है और बीज अंकुरण से पहले ही सड़ जाता है ।

रोकथाम : स्वस्थ एवं साफ सुथरे बीजों का ही प्रयोग बुवाई हेतु करना चाहिए । बुवाई से पहले बीजोपचार अवश्य करना चाहिए । इसके लिए 3 ग्राम प्रति किलोग्राम के हिसाब से फफूंदनाशक का प्रयोग करना चाहिएं । उचित फसल चक्र अपनाना चाहिए ।

कलिकाक्षय : यह विषाणु द्वारा उत्पन्न होने वाला घातक रोग है । इस रोग में पौधे की शीर्ष कलिकायें नष्ट हो जाती हैं और पौधे की सामान्य बढ़त रूक जाती है । सुसुप्त कक्षीय कलिकाओं में वृद्धि आरम्भ होने से अनेक छोटी–छोटी शाखाएं वहां से निकलने लगती हैं ।

ऐसी शाखाओं पर पत्तियॉ छोटी और गोलाई लिए होती है । इस प्रकार पौधें का सामान्य आकार और रूप बदल जाता है। रोगी पौधों पर फूल व फलियां भी बहुत कम लगते हैं । फलियों में बीज बनते भी है तो वे छोटे रह जाते है और इस प्रकार फसल की उपज भी घट जाती है । कई प्रकार के कीट इस रोग को रोगी पौधों से स्वस्थ पौधे पर फैलाते हैं ।

रोकथाम : बोने के लिए स्वस्थ रोगमुक्त मोटे तथा प्रमाणित बीजों का ही प्रयोग करना चाहिए । यदि खेत में से रोगी पौधें की शुरूआत में ही नष्ट कर दे तो रोग को बढ़ने से रोका जा सकता है । खेत में खरपतवार नहीं पनपने देना चाहिए । कीड़ो की रोकथाम के लिए किसी प्रभावशाली कीटनाशी दवा के घोल का छिड़काव करना चाहिए ।

मोजेक रोग : नये पत्तों में रोग के लक्षण दिखाई पड़ते हैं । पत्तियों पर हरे एवं पीले चितकबरे धब्बे बनते हैं । पौधें की बढ़वार कम हो जाती है, पत्तियॉ छोटी रह जाती हैं एवं विकृत हो जाती हैं । रोग ग्रस्त पौधों पर फलियों की संख्या घट जाती है, वे छोटी रह जाती हैं और उनके अन्दर दाने भी छोटे रह जाते हैं ।

रोकथाम : रोगमुक्त, स्वस्थ बीजों का प्रयोग बुवाई के लिए करना चाहिये । खेत में खरपतवार न पनपने देना चाहिए। आरम्भ से ही रोगी पौधों को उखाड़कर नष्ट कर देना चाहिए ।

आप जिस तरह बोलते हैं, बातचीत करते हैं, उसी तरह लिखा भी कीजिए। भाषा बनावटी नहीं होनी चाहिएः

महावीर प्रसाद द्विवेदी

गद्दी जनजाति की सामाजिक एवं व्यवसायिक गतिविधियाँ

रजनी चौधरी और अब्दुल रहीम

सार : गद्दी एक अर्ध–खानाबदोश अनुसूचित जनजाति है जो ज्यादातर भारत के पश्चिमी हिमालयी क्षेत्र के कुछ हिस्सों में रहते हैं। कृषि और पशुपालन इनकी आजीविका के मुख्य स्रोत हैं। वे आमतौर पर शीत ऋतु में प्रवास करते हैं। गद्दी जनजाति के लोग हिमाचल प्रदेश, उत्तराखंड, जम्मू और कश्मीर के सम–शीतोष्ण पर्वतीय क्षेत्र में आंशिक रूप से बसे हुए है, जिसमें से प्रत्येक परिवार के एक या दो सदस्य अथवा एक गाँव के 4–5 व्यक्ति अपनी भेड़ बकरियों के झुण्ड के साथ घुमंतु जीवन शैली अपनाते हैं । इन चरवाहों को स्थानीय भाषा में ''फुआल'' कहा जाता है जो आमतौर पर समुद्र तल से 350 से 4000 मीटर के ऊंचाई के बीच प्रवास करते हैं। चरवाहों का उनके पशुओं के साथ प्रवास प्रतिकूल जलवायु परिस्थितियों में पशुधन के जीवित रहने के लिए बहुत महत्वपूर्ण है, जिसमें गर्मियों में अधिक ऊँचाई तथा सर्दियों में कम ऊँचाई पर जाना/प्रवास शामिल है। गद्दी जनजाति की आजीविका पशु उत्पादों और प्राकृतिक संसाधनों पर निर्भर करती है।

परिचय : गद्दी जनजाति भारत के तीन उत्तरी राज्यों (जम्मू और कश्मीर, हिमाचल प्रदेश और उत्तराखंड) में उत्तर–पश्चिमी हिमालयी क्षेत्र में विरल रूप से वितरित है। यह जनजाति भारत की सांस्कृतिक रूप से सबसे अधिक समृद्ध जन जातियों में से एक है । आदिकाल से ही इस जनजाति के लोग अपने पशुओं के साथ मौसम के अनुरूप शिवालिक पर्वतीय श्रेणी की तलहटी से भीतरी हिमालय की श्रेणियों जैसे धौलाधार, पीर पंजाल और ट्रांस हिमालयी सीमाओं के बीच अर्ध खानाबदोश जीवन व्यतीत करते हैं। वे कृषि–पशुपालक होते हैं, जिनके पास पक्के मकान, जमीन होती है और वे मध्य ऊंचाई पर खेती करते हैं (सान्याल, 2021)। वे भेड़ और बकरी के बड़े झुंड के साथ–साथ कुछ पहरेदार कुत्तों और सामान ढोने के लिए घोड़ों को पालते हैं। सर्दियों में बर्फबारी के कारण, वे अपने पशुओं के झुंड और परिवार के साथ निचले इलाकों में चले जाते हैं। गर्मियों में फुआल अपने पशुओं के झुंड के साथ ऊंचाई वाले चरागाहों में जाते हैं, जबकि परिवार स्थाई निवास पर रहकर कृषि का प्रबंधन करता है ।

सामाजिक और आर्थिक स्थिति : 2001 की जनगणना के अनुसार, गद्दी जनजाति को भारत सरकार के सकारात्मक भेदभाव के आरक्षण कार्यक्रम के तहत एक अनुसूचित जनजाति के रूप में वर्गीकृत किया गया था। यह वर्गीकरण जम्मू –कश्मीर और हिमाचल प्रदेश के कुछ हिस्सों में लागू होता है। लगभग 98.7 प्रतिशत गद्दी जनजाति के व्यक्ति हिंदू धर्म का पालन करते हैं। ज्यादातर हिन्दुओं की भांति गद्दियों में भी अपने जीवन काल में एक ही बार विवाह करने की प्रथा है। गद्दी जनजाति वंशानुगत सामाजिक वर्गों में विभाजित हैं। गद्दी गाँव जो बाहर से एक इकाई के रूप में दिखाई देता है, भीतर से स्पष्ट सामाजिक विभाजन प्रकट करता है। जाति बंधन एक ही जाति के लोगों को एकजुट रखता है। विभिन्न जातियों के सदस्यों से अपेक्षा की जाती है कि वे सामाजिक अंतःक्रियाओं के दौरान अलग–अलग व्यवहार करें और उनके अलग–अलग मूल्य और विचार हों।

गद्दी जनजाति के व्यक्ति जो खानाबदोश जीवन शैली (फुआल) को अपनाते हैं, वे आमतौर पर कम पढ़े–लिखे होते हैं। ''गदेशी'' बोली इस जनजाति के सदस्यों द्वारा संचार के लिए उपयोग की जाने वाली सामान्य भाषा है। पीढी दर पीढी गद्दियों द्वारा एकत्रित किया गया स्वदेशी ज्ञान केवल गदेशी बोली के माध्यम से ही प्रसारित होता है।

समय के साथ अधिकाश गद्दियों के जीवन स्तर में शिक्षा के कारण उत्थान हुआ है। अब वे अतीत से बेहतर आर्थिक व सामाजिक स्थिति में तथा भेदभाव से मुक्त होकर सांस्कृतिक गतिविधियों में भाग लेते हैं। उनके अन्य जातियों और बाहरी लोगों के साथ संपर्क में भी सुधार आया है।

लट्टीमोर के अनुसार, ''शुद्ध खानाबदोश गरीब खानाबदोश होते हैं। हालाँकि, प्रत्येक गद्दी का लक्ष्य बड़े से बड़ा भेड़ो व बकरियों का झुण्ड रखना होता है। प्रतिष्ठा और स्थिति झुंड की ताकत से परिभाषित होती है। झुंड में पशुओं की गुणवत्ता से संख्या अधिक महत्वपूर्ण होती है। पशुधन की संख्या विरासत में मिलने वाली संपत्ति का एकमात्र रूप है। चारागाहों पर व्यक्तिगत रूप से किसी का स्वामित्व नहीं होता है क्योंकि चारागाह तक पहुँच पूर्वजों से मिली विरासत की सम्बधता द्वारा प्राप्त की जाती है ।

पशुपालन : गद्दी जनजाति के लोग दो प्रकार के जानवरों को पालते हैं, गैर–प्रवासी और प्रवासी। जो गद्दी स्थाई जीवन व्यतीत करते हैं वे मध्य पहाड़ियों के स्थायी गाँवों में बैल और गायों को पालते हैं। घुमंतु गद्दी जनजाति के लोग भेड़ और बकरियों के मिश्रित झुंड पालते हैं। साथ ही अपनी व पशुओं की जंगली जानवरों से सुरक्षा के लिए गद्दी नस्ल के दो या तीन कुत्ते पालते हैं। इसके अतिरिक्त सामान ढोने के लिए कुछ घोड़े या खच्चर भी पाले जाते हैं।

गद्दी जनजाति द्वारा प्रवास के दौरान भेड़ व बकरी पालन

गद्दी भेड : ये भेड़ मध्यम आकार की होती हैं जो आमतौर पर सफेद, हालांकि कभी कभी भूरे, काले और धब्बेदार होती हैं। मेढ़े सींग वाले होते हैं, और उनके सींग आमतौर पर बड़े होते हैं। लेकिन मादा भेड़ के सींग नही होते हैं, केवल 10–15 प्रतिशत मादा ही सींग वाली होती हैं। गद्दी नस्ल की भेड़ की पूंछ छोटी और पतली होती है और कान ज्यादातर छोटे होते हैं। वयस्क गद्दी भेड़ का वजन लगभग 26.7 किलोग्राम व औसत ऊंचाई लगभग 56.1 सेमी होती है। भेड़ों को ज्यादातर उनकी ऊन व मांस के लिए पाला जाता है। गद्दी भेड़ों से साल में तीन बार मोटी ऊन प्राप्त

की जाती है। इनकी आयु के आधार पर ऊन की वार्षिक उपज लगभग 437 से 696 ग्राम होती है, जिससे बारिश प्रतिरोधी कंबल और चरवाहों के लिए बर्फ में चलने के लिए जूता बुना जाता है। यद्यपि भेड़ें अधिक ऊन का उत्पादन करती हैं। वे बकरियों की तुलना में कम दूध और मांस देती हैं। शीत ऋतु में प्रवास के दौरान झुण्ड से लगभग 40 प्रतिशत पशुधन को आजीविका के लिए बेच दिया जाता है। इससे झुण्ड का प्रबंधन सही प्रकार से हो पाता है।

गद्दी मादा भेड़ और मेमना

गद्दी बकरी

गद्दी बकरियां : यह एक मध्यम आकार की बकरी की नस्ल है, जो अच्छी बनावट और लंबे बालों वाली होती है। शरीर का रंग ज्यादातर सफेद होता है लेकिन काले या भूरे धब्बे वाले कुछ जानवर भी पाए जाते हैं। इनके सींग लंबे सर्पिल तथा पीछे की ओर मुडे होते हैं। कान लम्बे और निचे की ओर झुके हुए होते हैं । इस नस्ल में नाक की रेखा उत्तल होती है। गद्दी बकरियाँ दूध और मांस प्राप्त करने के लिए पाली जाती हैं। पलायन के दौरान चरवाहों के लिए दूध का मुख्य स्रोत गद्दी बकरियाँ ही होती हैं। बकरियां भेड़ों की तुलना में कम गुणवत्ता वाले चरागाहों पर जीवित रहने में सक्षम हैं। परन्तु उनके अधिक तेज धार युक्त खुरों की वजह से एक निश्चित समय तक चरने के बाद वहां की घास कटनी शुरू हो जाती है व चारागाह नष्ट होने लगता है ।

गद्दी कुत्ता : इस नस्ल को गद्दी जनजाति के लोगों द्वारा तिब्बतियन मेसटिफ नस्ल से विकसित किया गया है।

गद्दी कुत्ता

ऐतिहासिक काल से इन फुर्तीले और आत्मविश्वास से भरे कुत्तों का इस्तेमाल पालतू पशुओं को शिकारी जानवरों से बचानेव शिविर की रखवाली के लिए किया जाता है। वे प्रमुख रूप से काले और गहरे या हलके पीले और कभी–कभी लाल, काले और हलके सफेद रंग के होते हैं। इनके शरीर पर माध्यम से भारी बालों का कोट होता है जो उन्हें ठंड से बचने में उनकी मदद करता है। उनके कान छोटे और झुके हुए होते हैं और बालों से भरी लंबी पूँछ होती है जो उनकी पीठ पर मुड़ी हुई होती है। एक वयस्क गद्दी कुत्ते की ऊंचाई 61 से 71 सेंटीमीटर तक होती है। वयस्क नर गद्दी कुत्ते का वजन लगभग 30 से 45 किलोग्राम होता है जबकि मादा का वजन लगभग 20 से 35 किलोग्राम होता है। इन कुत्तों की जीवन प्रत्याशा 9 से 14 वर्ष तक होती है।

कृषि : मध्य ऊंचाई पर गद्दी लोगों के पास पक्के घर और कृषि भूमि होती है। कुछ गद्दियों के पास अपने शीतकालीन चरागाहों पर भी घर और खेत होते हैं। जब चरवाहों के पास नियमित रूप से गर्मियों और सर्दियों के चरागाह होते हैं, तो वे अपने पास बाजरा, जौ या सब्जियां उगाना शुरू कर देते हैं। गद्दी अपने किसी भी प्रवास में तंबू का इस्तेमाल नहीं करते हैं। इन्हें बोझ रहित यात्रा करना पसंद होता है। वे जानवरों से उत्पाद प्राप्त करते हैं और उनका सीधे उपयोग करते हैं। जब वे कृषि क्षेत्रों से गुजरते हैं, तो वे अनाज और अन्य आवश्यकताओं के लिए पशु उत्पादों का आदान–प्रदान करते हैं।

देहाती खानाबदोश आमतौर पर भोजन और अन्य अधिकांश आवश्यकताओं के मामले में आत्मनिर्भर होते हैं। गद्दी चरवाहे भविष्य में उपयोग के लिए अल्पाइन चरागाहों और दूरस्थ जंगलों से दुर्लभ औषधीय पौधों को एकत्र कर उन्हें सुखाकर व संरक्षित करके उनका उपयोग किया जाता है।

प्रवास : गद्दी जनजाति के लोगों को जलवायु परिस्थितियों के कारण ऊंचे पहाड़ी क्षेत्रों से कम ऊँचाई वाले क्षेत्रों या मैदानी क्षेत्रों की तरफ शीतकालीन प्रवास करना पड़ता है। समय के साथ परिवारों के बढ़ते वंशजों की वजह से या शहरीकरण के कारण चरागाहों की संख्या व आकार में कमी होती जा रही है। गर्मियों में ऊंचाई पर स्थित चरागाहों की ओर प्रवास अप्रैल –मई में शुरू होता है तथा सर्दियों में सितम्बर–अक्टूबर में वे मैदानी क्षेत्रों की तरफ चले जाते हैं। वे ज्यादातर ईंधन, चारा और पानी के लिए प्राकृतिक संसाधनों पर ही निर्भर होते हैं। प्राकृतिक संसाधनों पर इनकी निर्भरता विभिन्न प्रकार के सामाजिक और सांस्कृतिक तंत्र जैसे धर्म, लोककथाओं और परंपराओं के माध्यम से संस्थागत है।

चरागाह : गद्दियों की चराई क्षेत्र अलग–अलग चरागाह प्रकारों के कारण तीन पारिस्थितिक क्षेत्रों में फैला हुआ है। निचली पहाड़ियों की उपोष्ण कटिबंधीय चरागाह, मध्य पहाड़ियों के उप समशीतोष्ण चरागाह, और ऊंची पहाड़ियों के अल्पाइन चरागाह। गद्दियों के पास जो भी भूमि है वो ऐतिहासिक रूप से वहां के राजाओं की थी, जो अलग–अलग परिवारों को छोटे–छोटे खेत किराए पर देते थे। उन्हें अल्पाइन पहाड़ियों में चरागाह संपत्ति के रूप में दे दिए जाते थे तथा निचली पहाड़ियों में जो भूमि दी जाती थी वो अनुबंध के तौर पर दी जाती थी। उन्हें अल्पाइन चरागाहों में संपत्ति के अधिकार चराई के लिए चारागाह दिए गए थे। निचली पहाड़ियों में निवासियों के साथ प्रथागत अधिकार या अनुबंध दिए गए थे। आज भी निचले क्षेत्रों में रहने वाले गद्दी अल्पाइन की पहाड़ियों में चले जाते हैं और सर्दियों में वे अपनी भेड़ों और बकरियों के साथ निचली पहाड़ी क्षेत्रों में चले जाते हैं। गद्दी गर्मियाँ अपने स्थायी घरों में बिताते हैं और अपनी भूमि पर खेती करते हैं। सर्दियों के प्रवास में इनके परिवार वाले भी इनके साथ होते हैं। जहां पुरुष जानवरों के साथ जाते हैं, वहीं महिलाएं और बच्चे मजदूरी और घरेलू सहायिका के रूप में काम करते हैं। निचले क्षेत्रों के किसान फसल के बाद या घास के मैदान में अपने खेतों में इन्हें आश्रय और चराई क्षेत्र प्रदान करते हैं। जिसके बदले में किसानों को उनके खेतों के लिए खाद मिलती है।

चुनौतियां : गद्दीयों को बदलती जलवायु परिस्थितियों के कारण दोहरी चुनौतियों का सामना करना पड़ रहा है, कम ऊँचाई वाले चारागाह क्षेत्रों का शहरीकरण के कारण छोटा होना और चारागाह क्षेत्रों में खरपतवार का अधिक होना। पहाड़ियों की तलहटी में बनाये गए बांधों ने गद्दियों को अपने प्रवास, रास्तों को बदलने पर मजबूर कर दिया है जिसके कारण उनको काफी कठिनाईयों का सामना करना पड़ता है। गद्दी इसलिए पारगमन का अभ्यास करते हैं क्योंकि वे पूरे

वर्ष एक स्थान पर रहकर अपना जीवन यापन नहीं कर सकते। ऊबड़–खाबड़ इलाके, खड़ी ढलान, छोटे खेत, सिंचाई के अभाव के कारण एक स्थान पर निर्वाह करना असम्भव हो जाता है। कृषि में होने वाले नुकसान की भरपाई वे भेड़ व बकरी पालन से करते हैं। ऊँचे पहाड़ों की ऊपरी श्रेणियां अपने बड़े, हरे–भरे घास के मैदानों के कारण गर्मियों में चराई के लिए उल्लेखनीय हैं। हालाँकि, ये चरागाह केवल मौसमी हैं। गद्दी साल भर के भरण–पोषण के लिए उन पर निर्भर नहीं रह सकते। आजकल, वन विभाग चराई की अनुमति किसी समुदाय विशेष को नहीं अपितु पिछले वर्षों में दी गई अनुमति के आधार पर देता है। चरवाहों की जरूरतों और अनुभव–आधारित ज्ञान की उपेक्षा करने से भविष्य में गद्दियों की सामाजिक पूंजी का अत्यधिक नुकसान होने और उनके द्वारा प्रबंधित आजीविका की व्यवस्था के नष्ट होने की सम्भावना है।

हिंदी का प्रचार और विकास
कोई रोक नहीं सकताः

पंडित गोविंद वल्लभ पंत

बकरी पालन : आर्थिक उन्नति की राह

अतुल शंकर अरोड़ा

बकरी पालन व्यवसाय को सीमांत, लघु किसानों एवं भूमिहीन मजदूर वर्ग कम लागत, साधारण आवास एवं रख–रखाव तथा सीमित पालन पोषण के साथ आसानी से कर सकते है। बकरी के छोटे आकार और आसान प्रबंधन के कारण इस व्यवसाय को विशेषकर ग्रामीण क्षेत्रों के पशुपालकों द्वारा लोकप्रियता के साथ अपनाया जा रहा है वर्तमान में हरा चारा, संतुलित आहार एवं चिकित्सा में होने वाले खर्च को देखते हुए बकरी पालन फायदेमंद व्यवसाय साबित हो रहा है। बकरी पालन कम स्थान और कम लागत से शुरू किया जा सकता है। कम देखभाल के बावजूद भी किसान बकरी पालन से अच्छी आमदनी प्राप्त करते हैं। लघु बकरी पालन करने के लिए पशुपालक को अलग से किसी विशेष पशुशाला की आवश्यकता भी नहीं पड़ती, उन्हें वो अपने घर पर ही आसानी से रख सकते है। यदि बड़े स्तर पर बकरी पालन किया जाएं तब अलग से एवं व्यवस्थित तरीके से पशुशाला बनाने की आवश्यकता रहेगी।

भारत देश में 19वीं पशुगणना (2012) के अनुसार बकरियों की संख्या 135.17 मिलियन थी एवं 20वीं पशुगणना (2019) के अनुसार 148.88 मिलियन है यानि लगभग 10 प्रतिशत की बढ़ोतरी हुई है।इससे पता चलता है कि अपने देश मे किसान एवं पशुपालक बकरी पालन की तरफ रूख कर रहे है। राजस्थान में बकरियों की संख्या मे वर्ष 2012 की तुलना मे 2019 मे कमी पायी गई है। वर्ष 2012 में यहां 21.66 मिलियन बकरियों की संख्या थी जो कि लगभग 3.81 प्रतिशत की कमी के बाद 2019 मे 20.84 मिलियन हो गयी उसके उपरांत भी राजस्थान बकरियों की संख्या मे भारत देश मे प्रथम स्थान पर है।

बकरी के दूध में कैल्शियम, पोटेशियम, प्रोटीन और विटामिन–डी होते है जो कि मानव शरीर के लिए बहुत ही फायदेमंद होते है। अधिकांशतः लोग गाय या भैंस का दूध पसंद करते है लेकिन बकरी का दूध भी अपने आप में बहुत सी औषधीय विशेषताओं युक्त है एवं स्वास्थ्य के लिए बहुत ही फायदेमंद है। यह इम्यून सिस्टम व मेटाबॉलिज्म को बढ़ाने के साथ ही डेंगू बीमारी में भी काफी प्रभावी है साथ ही इसका दूध गाय के दूध की तुलना में आसानी से पचाया जा सकता है। बकरी के मांस में कम कोलेस्ट्रॉल होने के कारण अधिक प्रचलन मे है एवं बकरी वंश के मांस के उपयोग में कोई सामाजिक बंधन नहीं होने से भी बकरी पालन व्यवसाय बहुत से पशुपालकों द्वारा अपनाया जा रहा है।

गरीब की गाय है बकरी

बकरी पालन से कम लागत मे अधिक आमदनी के कारण पशुपालकों का रूझान इस व्यवसाय की तरफ बढ रहा है। बकरी एक बहुउपयोगी पशु है। आकार में छोटा होने के कारण बकरी पालन में आवास, प्रबंधन और पोषण पर कम खर्च करना पड़ता है। आम तौर पर एक बकरी 10 से 12 महीने में गर्भधारण करने लायक हो जाती है 16 से 17 महीने की आयु में पहली बार बच्चें दे देती है। साथ ही भूमिहीन मजदूरों, लघु एंव सीमान्त कृषकों के आजीविका में महत्वपूर्ण आर्थिक भूमिका रखता है। ग्रामीण क्षेत्र में गरीब की गाय के नाम से मशहूर बकरी हमेशा से ही आजीविका के सुरक्षित स्त्रोत के रूप में पहचानी जाती है। सूखाग्रस्त क्षेत्रो में भी बकरी पालन फायदेमंद है।

बकरी पालन है आर्थिक उन्नति की राह

बकरियों से प्राप्त मुख्य उत्पाद मांस व दूध है। इसके अतिरिक्त बकरी का मल–मूत्र भी मिट्टी की उर्वरक क्षमता को बढ़ाने हेतु अत्यंत लाभकारी साबित हो रहा है। इसलिए वर्तमान परिदृश्य मे बकरी पालन आर्थिक उन्नति की राह बनता जा रहा है। बकरियों की विशेषता यह है कि इन्हें घर पर लाकर चारा, दलिया–बांट खिलाना आवश्यक नहीं है। यह पेड़ की पत्तियों, घास, झाड़ियों आदि का सेवन चरागाहों से कर मनुष्यों हेतु उत्तम दूध व मांस का उत्पादन करती है। अतः इनके पोषण पर ज्यादा खर्च करने की आवश्यकता नही होती। अतः इसका पालन फायदे का व्यवसाय है। बकरी पालन मे उत्पादन लक्ष्य और क्षेत्र के भौगोलिक स्थिति के अनुसार बकरी के नस्ल का चयन करना आवश्यक है।

जमुनापरी, सिरोही, बरबरी और जखराना नस्ल की बकरियां दूध एवं मांस उत्पादन के साथ मैदानी क्षेत्र के लिए उपयोगी मानी जाती है। ब्लैक बंगाल और गंजम नस्ल की बकरी को मुख्यतया मांस के लिए पाला जाता है। राज्य, केन्द्र सरकारों की विभिन्न योजनाओं मे बकरी पालन के लिए 50 प्रतिशत तक का अनुदान मिलता है। सफल बकरी पालन व्यवसाय के लिए जरूरी है कि वे स्वस्थ और निरोगी रहें, बीमार होने की दशा में तुरंत इलाज कराना चाहिए, वैसे बरसात आने पर ही ज्यादातर बीमारियां होने की संभावना रहती है। ऐसे में बरसात के मौसम में इन पर विशेष ध्यान देकर उन्हें स्वस्थ रख सकते है। अगर कोई पशुपालक पशुपालन व्यवसाय के बारें मे सोच रहें हैं तो बकरी पालन से शुरूआत कर सकते है। बकरी पालन में सबसे बड़ा फायदा यह है कि इसके लिए बाजार स्थानीय स्तर पर उपलब्ध हो जाता है।

लघु उद्योग के रूप मे उभरता बकरी पालन व्यवसाय

दूध और मांस के उपरान्त बकरी का चमड़ा भी काफी महत्वपूर्ण है। इससे जैकेट, कोट, पर्स, जूते, दस्ताने तथा घर की सजावटी चीजें बनाकर बेचने से भी आय प्राप्त की जा सकती है। बकरियों से प्राप्त बाल तथा रेशे से विभिन्न प्रकार के ऊनी वस्त्र एवं नमदें बनाए जाते है। प्रत्येक बकरी से सालभर में लगभग दो क्विंटल खाद प्राप्त

होती है। इसकी उपयोगिता को देखते हुए बकरी उत्पादन से संबंधित लघु उघोग स्थापित किये जा सकते है। जैसे– दूध उद्योग, मांस और चमड़ा व वस्त्र उद्योग आदि। इससे रोजगार के अवसर बढेगें तथा साथ ही बकरी पालकों की आर्थिक स्थिति भी सुदृढ होगी। यदि कोई पशुपालक 100 बकरियां एवं 04 बकरे से बकरी पालन शुरू करना चाहे तो लगभग आठ लाख रूपये की पूंजी का निवेश होगा एवं प्रतिवर्ष औसत 1 से 1.50 लाख रूपये की आमदनी प्राप्त कर सकता है जो अगले कुछ वर्षो मे बढ़ भी सकती है। बकरी पालन व्यवसाय स्थापित करने हेतु सरकार द्वारा चलायी जा रही विभिन्न योजनाओ मे कम ब्याज पर ऋण प्राप्त कर सकते है।

बकरी पालन की आर्थिक महत्ता

बकरी सामान्यतः 10 से 12 महीने की उम्र में गर्भधारण करने लायक हो जाती है, इनका गर्भकाल भी लगभग पांच महीने का होता है तथा 16 से 17 महीने की आयु में पहली बार बच्चें दे देती है। इस कारण बकरियों की संख्या बहुत तेजी से बढती है। इसलिए यह व्यवसाय कम लागत एवं कम समय में अधिक मुनाफा देना वाला है। इनके लिए बाजार स्थानीय स्तर पर भी उपलब्ध है। अधिकतर व्यवसायी बकरी पालकों के घर से ही बकरे–बकरी को खरीदकर ले जाते है। दूध, मांस व रेशे के अतिरिक्त किसान फसल कट जाने के उपरान्त बकरियों के रेवड़ को अपने खेतों में रखते है ताकि खेत में बकरियों की मींगनी व मूत्र जैविक खाद के रूप में मिल जाते है। समाज का वह वर्ग जिनके पास भूमि नही के बराबर है। बकरी पालन को अपनाकर अपनी आर्थिक स्थिति को काफी हद तक सुधार सकता है क्योंकि बकरी–पालन दूध एवं मांस के लिए उपयुक्त स्त्रोत होने के साथ–साथ इसके चमड़े व बालों से अतिरिक्त आय भी प्राप्त होती है तथा मल मूत्र से खेत की उर्वरकता बढ़ती है। आर्थिक रूप से पिछडी एवं भूमिहीन वर्ग की महिलाओं के लिए भी बकरी पालन एक वरदान साबित हो रहा है। बड़े पशुओं की तुलना में बकरी को आसानी से पाला जा सकता है। एक महिला एक झुण्ड की आसानी से देखभाल कर सकती है। बकरी पालन से आर्थिक लाभ के साथ–साथ घर में उपलब्ध अतिरिक्त श्रम का भी उपयोग होता है। तथा साथ ही बकरी के दूध एवं मांस से ग्रामीण महिलाओं एवं बच्चो के पोषण स्तर में भी अपेक्षित सुधार होगा। जिससे कुपोषण की समस्या नहीं रहेगी जो कि ग्रामीण क्षेत्रों में बहुत सी बीमारियों का कारण है। सूखा एवं अकालग्रस्त क्षेत्रों में बकरी पालक इन्हें बुरें दिनों का बीमा मानते है एवं आवश्यकता अनुसार जरूरत के समय इन्हें तुरंत बेचकर नकद राशि प्राप्त कर लेते है।

दूध एवं मांस उत्पादन के लिए हमारे देश के किसानों के लिए बकरी पालन एक बेहतर विकल्प साबित हो रहा है। बड़े पशुओं जैसे–गाय भैंस आदि की शारीरिक जरूरत और रखरखाव काफी महंगी पड़ती है, ऐसी स्थिति में सीमान्त, लघु किसानो एवं भूमिहीन मजदूरो के लिए बकरी–पालन काफी सरल एवं लाभप्रद व्यवसाय है। बकरी को घर की महिलाऐं, छोटे बच्चे व अन्य सदस्य आसानी से सार्वजनिक चरागाहों, अन्य भूमि पर चराकर पाल सकते है। गौवंश एवं भैंस पालने वाले पशुपालक भी पशु विविधिकरण के अन्तर्गत बकरी पालन को गाय–भैंस पालन के साथ साथ अपनाकर अपनी आर्थिक एवं सामाजिक उन्नति की राह पर अग्रसित हो सकते है।

भाषा की सरलता, सहजता और शालीनता अभिव्यक्ति को सार्थकता प्रदान करती है। हिंदी ने इन पहलुओं को खूबसूरती से समाहित किया है:

नरेंद्र मोदी (प्रधानमंत्री)

किसानों एवं पशुपालकों के लिए सहकारी समितियों का महत्व एवं उनकी कार्यप्रणाली

एल.आर. गुर्जर एवं रंगलाल मीणा

सहकारी समिति संकुल स्तर पर ग्राम संगठन के लिए एक ऐसा संघ है जो स्वयं सहायता समूहों एवं ग्राम संगठन को एक स्वप्रबंधित और आत्म निर्भर संस्था के रूप में विकसित करने के लिए निरंतर सहयोग एवं निर्देशन करता है ताकि सहभागिता तथा भागीदारी के आधार पर ग्राम संगठन के लिए सामाजिक पूंजी का निर्माण हो सके। सरकारी विभागों तथा अन्य संस्थाओं से ग्राम संगठन को जोड़ते हुए संकुल संघ का मुख्य दायित्व संसाधनों का लाभ एवं जुड़ाव है ताकि सदस्यों का समन्वित एवं सामाजिक एवं आर्थिक विकास में मदद मिल सके।

सहकारी समिति के उद्देश्य एवं कार्य :

1. अपने सदस्यों के बीच बचत एवं शाख को विकसित करने के लिए सभी तरह की सुविधाओं के लिए प्रयास करना एवं प्रोत्साहित करना।
2. समिति सदस्यों और उसके पदाधिकारियों को किसानों एवं पशुपालकों के लिए तकनीकी और व्यावसायिक प्रशिक्षण की व्यवस्था करना।
3. स्वयं सहायता समूह के विकास में सहायता के लिए एक समन्वित सामुदायिक विकास कार्यक्रम के रूप में बचत एवं ऋण की अवधारणा को प्रोत्साहित करना।
4. स्वयं सहायता समूह और सदस्यो के माध्यम से शुल्क, चंदा, अनुदान, योगदान, हिस्सा, पूंजी, बचत और अन्य प्रकार की जमा इक्कठा करना।
5. सदस्यों को जमानत के बिना उपभोग, उत्पादन परिसम्पति निर्माण और अन्य उद्देश्यों के लिए स्वयं सहायता समूह के माध्यम से लघुकालीन, मध्यकालीन, दीर्घकालीन और अन्य प्रकार के ऋण उपलब्ध कराना।
6. सदस्यों को सामाजिक एवं आर्थिक विकास के लिए कल्याणकारी कार्यक्रमों से जोड़ना और उसे क्रियान्वित करना।
7. सदस्यों को पेंशन, बीमा और स्वास्थ्य सेवाओं की जानकारी देना एवं उसे उपलब्ध कराना।
8. सदस्यों के सर्वांगिण विकास के लिए आवश्यक वित्तीय और गैर वित्तीय कार्यक्रमों/स्कीमों/परियोजनाओं को लागू करना एवं वित्तीय तथा तकनीकी परामर्श देना।
9. आजीविका, रोजगार, उत्पादन और आय बढ़ाने के लिए सभी तरह के आवश्यक सेवाओं को मुहैया करना तथा विशेष रूप से जीवन की गुणवत्ता में सुधार के लिए स्वास्थ्य, शिक्षा एवं आवास की सुविधा प्राप्त करने में सहायता देना।
10. वस्तुओं की खरीद बिक्री, प्रसंस्करण, गुणवत्ता के आंकलन एवं भंडारण के लिए सदस्यों की सहायता करना तथा आवश्यक होने पर इस हेतु सुविधाऐं/संयंत्र स्थापित एवं संचालित करना।

11. संबंधित कानूनों के प्रावधानों के तहत सदस्यों एवं सहकारिता समिति के हित को आगे बढ़ाने या लाभ प्राप्त करने के लिए सरकार, क्रियामक प्राधिकारों, वित्तीय संस्थानों, बैंको, स्थानीय राष्ट्रीय एवं अंतर्राष्ट्रीय विकास अभिकरणों, संघीय सहकारी संस्थाओं, स्थानीय निकायों, निगम निकायों, दातव्य संस्थानों आदि के साथ सम्पर्क स्थापित करना एवं उससे सहायता लेना।
12. सरकारी विभागों, बैंकों एवं अन्य वित्तीय संस्थाओं, सहकारी निगमों, विकास एजेंसी और सामान्य व्यक्तियों से विशेष उद्देश्यों के लिए अनुदान, दान, जमा एवं ऋण प्राप्त करना।
13. सदस्यों के आर्थिक विकास के लिए परियोजना तैयार करना एवं उसे क्रियान्वित करना।
14. सहकारी समिति को लाभ पहुंचाने के लिए और उसके उद्दश्यों को पूरा करने के लिए हिस्सा पूंजी, अतिरेक कोष, जमा निधि, स्थायी और अस्थायी संपत्ति को निवेश करना।
15. समिति के संरचनात्मक ढांचे के माध्यम से किसानों एवं पशुपालकों के कृषि उपज एवं जानवरों के विपणन में सहयोग करना।
16. किसानों एवं पशुपालकों के कृषि उपज एवं जानवरों के विपणन के लिए नई–नई संभावनाओं को खोजने की कोशिश करना एवं उन्हें लागु करना।
17. समूहों से जुड़े लोगों के लिए प्रशिक्षण एवं अनुसंधान जैसी सुविधाऐं उपलब्ध करवाना। समूहों से जुड़े लोगों के उद्यमी के रूप में विकसित करना।
18. समूह समिति द्वारा किये गये कार्यों की समीक्षा करना एवं परामर्श देना।
19. समिति के उद्देश्यों की पूर्ति हेतु भूमि एवं भवन क्रय करना, निर्माण कराना एवं भूमि एवं भवन किराये पर लेना।
20. कोई अन्य कार्य जो इसके लक्ष्य एवं उद्देश्यों की प्राप्ति के लिए प्रासंगिक एवं आवश्यक हो, क्रियान्वित करना।
21. इस उद्देश्यों की पूर्ति हेतु ग्रामीण क्षेत्र में ग्राम संगठन के माध्यम से स्वयं सहायता समूहों का गठन करना/कराना।

समिति बैंक खाता :–

1. समिति के नाम से बैंक में खाता खोला जाता है।
2. समिति के बैंक खाते में से लेन–देन एवं हस्ताक्षर समिति के तीन पदाधिकारी (i) अध्यक्ष/उपाध्यक्ष, (ii) कोषाध्यक्ष, (iii) सचिव द्वारा होता है।

पूँजी के स्त्रोत

1. समिति निम्न स्त्रोतों से पूंजी अर्जित कर सकती है :–

1. हिस्सा राशि।
2. प्रवेश शुल्क एवं अन्य शुल्क।

3. सदस्यों एवं असदस्यों की अमानतें।
4. समिति साख सुविधा उपलब्ध करवाने के उद्देश्य से उधार प्राप्त कर सकती है।
5. समिति राज्य सरकार/केन्द्र सरकार/ बैंक एवं अनुमोदित संस्थाओं से ग्रांट एवं अनुदान प्राप्त कर सकती है।
6. राज्य सरकार के अनुमोदन से अन्य स्त्रोतों से।
7. सदस्यों द्वारा कृषि उपज एवं जानवरों के बेचने पर समिति द्वारा निर्धारित शुल्क से।

3. आय

1. समिति विभिन्न संस्थाओं से ऋण प्राप्त कर अपने कार्य क्षेत्र के ग्राम संगठन एवं स्वयं सहायता समूह के माध्यम से सदस्यों को ऋण उपलब्ध करवाती है। ऋण पर ब्याज से प्राप्त आय समिति का मुख्य स्त्रोत होता है। इसके साथ समिति स्वयं के संसाधनों से प्राप्त होने वाला ब्याज भी समिति की आय का स्त्रोत होता है।
2. इसके साथ समिति द्वारा संचालित विभिन्न सेवाओं से प्राप्त शुल्क, अनुदान, सदस्यता शुल्क इत्यादी भी समिति का आय का स्त्रोत होता है।
3. समिति के संचालन हेतु आरम्भिक पूंजीगत एंव आयगत खर्च सोसाइटी के प्रवेश शुल्क में से किये जाते है, तत्पश्चात समिति द्वारा नियमित आय सृजित होने पर समिति की आय में से समिति के संस्थापन एवं अन्य खर्च सम्पादित किये जाते है।

अधिकतम उधार सीमा

समिति की अधिकतम उधार सीमा अमानतों तथा ऋणों के रूप में, समिति की कुल प्रदत्त हिस्सा पूंजी व रक्षित कोष राशि के 2.5 गुणा अथवा ऐसी राशि की सीमा के बराबर होती, है। जैसा राज्य सरकार द्वारा समय समय पर अनुमति दी गयी हो।

समिति का प्रबंधन

समिति की प्रबंधन संचालक समिति में निहित होता है।

संचालक समिति के सदस्यों का निर्वाचन (सरकार द्वारा नामित प्रतिनिधियों व विशेषज्ञों के अतिरिक्त) राजस्थान सहकारी संस्था अधिनियम, 2001 के प्रावधानों के तहत कराया जाता है।

निर्वाचन प्रक्रिया – संचालक/निदेशक मंडल में कुल 16 निर्वाचित सदस्य होते है। इनका चयन/निम्न प्रक्रिया द्वारा किया जाता है।

संचालक मंडल का निर्वाचन/मनोनयन

1. कार्य क्षेत्र की ग्राम पंचायतों के ग्राम सदस्य, ग्राम संगठन की कार्यकारिणी समिति का सदस्य बनने के लिए मनोनित करते है।

2. ग्राम संगठन कार्यकारिणी समिति में से तीन पदाधिकारियों अध्यक्ष, सचिव एवं कोषाध्यक्ष का चयन/निर्वाचन/मनोनयन प्रक्रिया के द्वारा करते है।

3. ग्राम संगठन अपने तीन सदस्यों जिनमें से एक कार्यकारिणी समिति के अध्यक्ष व दो सामान्य सदस्य को समिति के प्रतिनिधि मंडल के लिए मनोनित करते है।

4. ग्राम संगठनों से आये हुए प्रतिनिधि मण्डल के (तीन सदस्य प्रति ग्राम संगठन) के सदस्यों में से समिति के संचालक मण्डल (बोर्ड) के सदस्यों का चयन निर्वाचन/मनोनयन द्वारा किया जाता है। संचालक मण्डल में 16 सदस्य होते है।

5. संचालक मंडल में से समिति के 4 पदाधिकारियों (अध्यक्ष, उपाध्यक्ष, सचिव एवं कोषाध्यक्ष) का चयन निर्वाचन प्रक्रिया द्वारा किया जाता है।

6. संचालक मंडल एवं पदाधिकारियों का कार्यकाल 2 वर्ष का होता है।

7. समिति अपने अन्तर्गत होने वाले सभी कार्यों की देख–रेख/मूल्यांकन/सहयोग इत्यादि कार्य अपने संचालक मंडल में से उप–समितियां (आवश्यकतानुसार) गठित कर संपन्न करती है। इसके लिए उप–समितियों के सदस्यों को मानदेय संचालक मंडल द्वारा बनाये गये नियमानुसार भुगतान कर करती है।

संचालक समिति के कर्तव्य

1. समिति के संचालक समिति का कार्य समिति में नीतिगत निर्णय लेना होता है। परन्तु महत्वपूर्ण नीतिगत निर्णय समिति की सहमति से क्रियान्वित होते है। तथा समिति के प्रशासनिक/प्रबंधकीय एवं वित्तीय मामलों में समिति का पूर्ण नियंत्रण होता है।

2. समिति के कार्यो हेतु शर्ते तय कर ऋण, ग्राण्ट्स, अनुदान की व्यवस्था करना। अधिनियम एवं नियमों के प्रावधानानुसार सदस्यों का प्रवेश स्वीकार करना।

3. समिति के कर्मचारियों की नियमानुसार नियुक्ति, निलम्बन अथवा उन्हें पदच्युत करना।

4. समिति की ओर से बिल्स्, नोट्स, प्राप्तियां, स्वीकारोक्ति चैकों के बेचान पर हस्ताक्षर करने हेतु व्यक्तियों को अधिकृत करना तथा प्रबंधक की अनुपस्थिति में संविदा करने तथा दस्तावेजों के निष्पादन हेतु आवश्यक अधिकारिता देने संबंधि कार्य।

5. समिति के कार्य संचालन हेतु सहायता रेगुलेशन्स (नियम) बनाना तथा उन्हें निगम एवं रजिस्ट्रार, सहकारी समितियां, राजस्थान से अनुमोदित करवाना।

6. समिति के पक्ष में कानूनी कार्यवाही के संस्थापन, बचाव की कार्यवाहियां करना या समिति के विरूद्ध/समिति के अधिकारियों द्वारा संस्थापित, परिचालित कानूनी वादों में समिति का हित साधन/ संरक्षण करना।

7. समिति के विनियोजन की स्वीकृति देना और ऋण एवं अग्रिम स्वीकारना।

8. वार्षिक बजट एवं खर्चे की समीक्षा कर सामान्य सभा के समक्ष रखना।

9. समिति के प्रबंधन हेतु बजट आवंटन के अन्तर्गत पदों का सृजन, स्वीकृत और नियुक्ति अथवा समिति के कार्य संचालन हेतु निगम के माध्यम से कार्मिकों की प्रतिनियुक्ति करवाना।

10. समय–समय पर समिति कार्यालय एवं फिल्ड स्टाफ की संख्या का निर्धारण, उनके वेतनमान, वेतनों, भत्तों और अन्य सेवा शर्तों का निर्धारण तथा बजट आवंटन के अनुसार समिति के कार्य संचालन हेतु व्यय करना।

11. संबंधित ग्राम संगठन के माध्यम से स्वयं सहायता समूह के कुशल पर्यवेक्षण की व्यवस्था करना।

12. सामान्य सभा में लेखे और वार्षिक रिपोर्ट प्रस्तुत करना।

13. देय ऋणों की समय सीमा में वृद्धि स्वीकार करना।

14. सामान्य सभा एवं विशेष सामान्य सभा बुलाना एवं सम्बोधित करना।

15. संबंधित ग्राम संगठनों को तथा स्वयं सहायता समूहों को समिति के देय ऋणों की समय अनुसार भुगतान हेतु निर्देश देना।

16. समिति की प्रशासन व्यवस्था हेतु समय–समय पर ऐसे सभी कार्य करना तथा समिति स्तर पर अधिनियम तथा उपनियमों के अनुसार सभी आवश्यक लेखे निर्धारित प्रारूपों में रखने तथा उनके कुषक संधारण की व्यवस्था करना।

17. उप समितियों में बटकर समस्त कार्यों की निगरानी करना।

विविध

1. सहकारी अधिनियम एवं नियमों में विहित प्रक्रिया अनुसार ही उपविधियों में संशोधन किया जाता है।

2. समिति की सम्पत्तियों से संबंधित रजिस्टर एवं दस्तावेजात समिति को अध्यक्ष अथवा प्रबंधक द्वारा हस्ताक्षरित किये जाते है।

3. समिति के सदस्यों एवं सदस्यों के मध्य, सदस्यों एवं समिति के मध्य अथवा संचालक मण्डल के सदस्य अथवा समिति के मध्य निगम के कार्यो तथा उपविधियों संबंधी उठने वाले विवादों का निपटारा सहकारी अधिनियम/नियम के प्रावधानों के अन्तर्गत मध्यस्थ निर्णय द्वारा रजिस्ट्रार द्वारा किया जाता है।

4. उपविधियों की संरचना एवं उनकी व्याख्या संबंधी संदेह की स्थिति में प्रकरण रजिस्ट्रार, सहकारी विभाग को भेजा जाता है, जिसमें उनका निर्णय अन्तिम होता है।

5. समिति का समापन एवं विघटन राजस्थान सहकारी सोसाइटी अधिनियम एवं नियमों के प्रावधानानुसार किया जाता है।

6. ऐसे मामले जिनका उल्लेख उपविधि में नहीं हुआ है ऐसी स्थिति में अधिनियम एवं नियमों के प्रावधान लागू होते है।

''हिंदी वैश्विक भाषा बनने की ओर अग्रसर''

जे. पी. मीना

आज भारत के कुछ राज्यों, कुछ लोगों के दिमाग में यह बात रच बस गई है कि ज्ञान और सत्ता की भाषा केवल अंग्रेजी से प्राप्त की जा सकती, केवल और केवल इसके माध्यम से ही हम अपनी मंजिल तक पहुँच सकते हैं। लेकिन ''हिंदी वैश्विक भाषा बनने की ओर अग्रसर'' से पहले हमें हिंदी को अपने देश के अंदर ही राष्ट्रभाषा का दर्जा दिलाना होगा। गृह मंत्रालय की संसदीय राजभाषा समिति ने हाल ही में राष्ट्रपति जी को अपनी सिफारिशें प्रस्तुत की हैं, जिसमें उन्होंने देश की शीर्षस्थ शिक्षा संस्थानों जैसे केंद्रीय विश्वविद्यालय, आई आई टी, आई आई एम, मेडिकल आदि प्रमुख संस्थानों में शिक्षा का माध्यम हिंदी, नौकरियों में हिंदी के ज्ञान पर चयन, अंग्रेजी और हिंदी के विज्ञापनों पर पचास–पचास प्रतिशत खर्च सभी राज्य सरकारों को हिंदी का प्रचार–प्रसार करने का दायित्व होगा पर अनेक अन्य सिफारिशें हिंदी को बढ़ावा एवं प्रोत्साहित करने के लिए की हैं। जिन पर तमिलनाडू राज्य में फिर से विरोध के स्वर सुनाई देने लगे हैं। हाल ही में तमिलनाडू के मुख्य मंत्री एम. के. स्टॉलिन ने एक रिपोर्ट के जरिए कहा है कि हिंदी थोपकर केंद्र सरकार को एक और भाषा युद्ध की शुरूआत नहीं करनी चाहिए। उन्होंने भारत के प्रधानमंत्री से अपील की है कि हिंदी को अनिवार्य बनाने का प्रयास छोड़ दिया जाए और देश की अंखडता को कायम रखा जाए। उन्होंने कहा कि ऐसा होने से देश की गैर हिंदी बड़ी आबादी दोयम दर्जा की रह जाएगी। हिंदी थोपना भारत की अखंडता के खिलाफ है। हमें सभी भाषाओं को केन्द्र की आधिकारिक भाषा बनाने का प्रयास करना चाहिए। डी. एम. के 1965 से ही हिंदी का भारत में विरोध कर रहा है। मेरी समझ में हिंदी का विरोध आज के वैश्वीकरण के दौर में समझ से परे है एक तरफ जहाँ छात्र–छात्राओं को मेडिकल, इंजिनियर प्रबंधन आदि में पढ़ाई हिंदी माध्यम से शुरू करने की वर्षों पुरानी मंशा को मृतरूप देने का प्रयास किया जा रहा, वही दूसरी तरफ कुछ नेता आज भी हिंदी विरोध की राजनीति पर अलग मुहिम देश के अंदर चला रहे हैं।

आज भारत 140 करोड़ की आबादी वाला देश है जहाँ पर हर किसी को अपनी अपनी भाषा में बात करने का अधिकार है। भारत में अन्य राज्यों की अनेक भाषाएं भी हैं लेकिन इस बात से इंनकार नहीं किया जा सकता कि हिंदी सर्वाधिक बोलने और समझने एवं काम काज करने वाली भाषा है। आज देश का युवा भाषाओं के साथ–साथ रहन–सहन, खान–पान और सांस्कृतिक विविधताओं को भी आत्मसात करना चाहता है। वर्तमान में देश के अंदर 43. 63 प्रतिशत लोग हिंदी भाषा बोलते हैं इससे साफ है कि हिंदी देश में सबसे तेजी से बढ़ने वाली भाषा है। भारत की संविधान सभा ने 14 सितम्बर 1949 को हिंदी को भारत की राजभाषा के रूप में स्वीकार किया था लेकिन इसे अभी तक राष्ट्रभाषा का दर्जा प्राप्त नहीं हुआ है।

हाल ही में केन्द्र सरकार द्वारा राष्ट्रपति जी को सौंपी गई रिपोर्ट में की गई सिफारिशों से लगता है कि भारत सरकार पूरी तरह से हिंदी को राष्ट्रभाषा के रूप में स्वीकार करने एवं सभी राज्यों पर अनिवार्य रूप से हिंदी को लागू करने के मूड़ में दिखाई दे रही है तथा ठोस कदम उठाने जा रही है। आज हम देखे तो हिंदी वैसे भी अपनी चमक दमख से विश्व के हर देश में अपनी छाप हिंदी प्रेमी लोगों के द्वारा बिखेर रही है और विश्वपटल पर छाने को आतुर है। आज वैश्वीकरण के दौर में हिंदी का महत्व और अधिक बढ़ गया है। हिंदी विश्व स्तर पर एक प्रभावशाली भाषा बनकर उभरी है। आज विश्व में बड़े पैमाने पर हिंदी में ज्ञान–विज्ञान की पुस्तकें लिखी जा रही

है। सोशल मीड़िया और संचार माध्यमों में हिंदी का प्रयोग निरंतर बढ़ रहा है। आज हम जितना अधिक हिंदी का प्रयोग शिक्षा, विज्ञान, प्रौद्योगिकी एवं शोध में कर रहे हैं उतनी ही तेज गति से हिंदी का विकास निरंतर बढ़ रहा है। भारत के महापुरूषों ने हिंदी को भारत की संपर्क भाषा के रूप में अपनाकर ही आजादी की लड़ाई लड़ी थी। भौगोलिक दृष्टि से देखा जाए तो हिंदी आज विश्व के हर देश में फेली हुई है, क्योंकि इसको बोलने और समझने वाले लोग विश्व के लगभग सभी देशों में देखने को मिल जाएंगे। हिंदी आज अपने आप में अंतर्राष्ट्रीय स्तर बनाए हुए है। आर्य, द्रविण, स्पेनी, पुर्तगाली, जर्मन, फ्रेंच, अंग्रेजी, अरबी, फारसी, चीन, जापानी भाषाओं के शब्द बसुदेव कुटुंब बंकम वाली परिभाषा को उजागर करते हैं।

हिंदी में ब्रज अवधी राजस्थानी पहाड़ी, बुंदेली, मगधी छत्तीसगढ़ी भाषाओं के शब्द भण्डार, मुहावरें इसकी लोकोक्तियों में रचे बसे हैं। आज के वैश्वीकरण के दौर में यह कहा जा रहा है कि विश्व में आगे चलकर 8 से 10 भाषाओं का ही बाजार होगा जिसमें हिंदी भी एक व्यापारीकरण एवं संचार की भाषा होगी। जो अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर पहचानी जाएगी और अपना स्थान संयुक्त राष्ट्र संघ में पक्का करेगी। क्योंकि आज हम देख रहे हैं कि विश्व के हर देश की अर्थव्यवस्था बाजारीकरण पर निर्भर है। आज के दौर में बाजारीकरण का सर्वोत्तम साधन उस देश की राष्ट्रभाषा है जिसके माध्यम से वह अपने व्यापार का आदान–प्रदान सही मायने में कर सकता है। क्योंकि भारत 140 करोड़ की जनसंख्या वाला सर्वाधिक धनी आबादी वाला चीन के बाद दूसरा राष्ट्र है। तो यहाँ व्यापार अर्थात बाजारीकरण की अपार संभावनाएं है। यहाँ अनेक बहुराष्ट्रीय कंपनिया अपना उत्पाद बेचने के लिए हिंदी भाषा में अपना कार्यभार बढ़ा रही है। वैसे भी हिंदी चीन की मंदारिन भाषा के बाद सबसे अधिक बोली जाती है।

विश्व में बसे हुए प्रवासी (एन.आर.आई.) अपना कार्य निष्पादन एवं संचार पूरी तरह से हिंदी भाषा में कर रहे हैं। आज विश्व में नेपाल, भूटान, सिंगापुर, मलेशिया थाइलैण्ड, हॉगकॉग, फीजी, मॉरीशस, ट्रनीटाड, गयना, सूरीलम, इग्लैंड, कनाडा, संयुक्त राज्य अमेरिका आदि में हिंदी बोलने और समझने वाले प्रचुर मात्रा में प्रवासी भारतीय रहते हैं। और हाल ही के देशों में भारतीय मूल के लोग ब्रिटेन, अमेरिका एवं कनाडा आदि में प्रधानमंत्री व मंत्री जैसे आदि पदों पर आसीन हुए हैं जो कि मूल रूप से हिंदी भाषी प्रवासी भारतीय हैं, यह एक हिंदी को वैश्वीकरण के पटल पर खड़ा करने का एक स्पष्ट उदाहरण है। आज के दौर में हिंदी इंटरनेट, संचार माध्यम आदि के जरिए विश्व के पटल पर खुब पढ़ी एवं पढ़ाई जा रही है तथा काम काज की भाषा बनी हुई है। विश्व के 180 से अधिक विश्वविद्यालयों शिक्षण संस्थाओं में हिंदी के शिक्षा प्रशिक्षण कार्यक्रम चल रहें है। इंटरनेट के प्रसार से आज के किसी को सबसे ज्यादा फायदा हुआ है तो वह हिंदी भाषा है। डिजीटल माध्यम से हिंदी समाचार पढ़ने वालों की संख्या निरंतर बढ़ रही है। भारतीय हिंदी सिनेमा एवं संचार माध्यम भी हिंदी को बढ़ावा देने में निरंतर अपना प्रयास कर रहे हैं। 110 देशों से अधिक देश आज हर वर्ष 10 जनवरी को विश्व हिंदी दिवस के रूप में मना रहे हैं, जो कि अपने आप में निरंतर वैश्विक भाषा बनने का एक अनूठा उदाहरण प्रस्तुत कर रहे हैं। आज के दौर में हिंदी विश्व के अनेक देशों में अधिक रोजगारन्मुखी एवं कम्प्यूटर की भाषा बनने की तैयारी में है तथा हिंदी में काम काजी सॉफ्टवेयर विकसित हो रहे है। जिनसे यह एक व्यापार करने की भाषा बनकर विश्व पटल पर उभर रही है और आगे चलकर बाजारीकरण की भाषा के रूप में उपयोग होने लगेगा और बाजारीकरण के जरिए विश्व पटल पर हिंदी की सूचना क्रांति देखने को मिलेगी।

आज भारत के विदेशों में स्थित दूतावास एवं भारतीय संस्कृति विकास परिषद हिंदी के प्रचार प्रसार की गतिविधियों को निरंतर बढ़ाने का प्रयास कर रहा है। आज भारत सामरिक, आर्थिक, राजनैतिक रूप से एक सशक्त राष्ट्र बनकर उभरा है हमारी अर्थव्यवस्था अन्य देशों की अपेक्षा बहुत तेजी से आगे बढ़ रही है, जबकि अन्य देश इस समय मंदी के दौर से गुजर रहे हैं। जब हमारी अर्थव्यवस्था मजबूती से विश्व में बढ़ेगी तो निश्चित ही हिंदी का मान अपने आप विश्व पटल पर हिंदी शिक्षा, विज्ञान, साहित्य एवं व्यापार के आदान–प्रदान के जरिए बढ़ता चला जाएगा। आज भारत जी–20 शिखर सम्मेलन की अध्यक्षता अगले वर्ष 2023 में करने जा रहा है। जिसमें अनेकों शक्तिशाली राष्ट्र के अध्यक्ष एवं प्रतिनिधि भाग लेंगे जिससे उनकों भारत की संस्कृति एवं हिंदी को सिखने एवं विचारों को आदान–प्रदान करने का अवसर प्राप्त होगा।

हिंदी के प्रचार–प्रसार हेतु भारत अब तक 11 अंतर्राष्ट्रीय विश्व हिंदी सम्मेलन आयोजित कर चुका है एवं 12वाँ अंतर्राष्ट्रीय हिंदी सम्मेलन अगले वर्ष 15 से 17 फरवरी, 2023 को भारतीय विदेश मंत्रालय और फिजी सरकार के द्वारा संयुक्त रूप से किया जा रहा है। यह सम्मेलन फिजी देश के नाडी शहर में आयोजित किया जाएगा। इस सम्मेलन में देश विदेश के हजारों भाषाविद् वैज्ञानिक साहित्यकार, पत्रकार एवं शोधार्थी आदि भाग लेंगे जिसमें हिंदी के प्रचार–प्रसार ज्ञान–विज्ञान, शोध आदि पर विचार किया जायेगा। आने वाले समय में भारत इस प्रकार के प्रयासों के जरिए विश्व पटल पर एक वैश्विक हिंदी भाषा का रूप धारण करेगा इसमें कोई दोहराई नही है। कहते है कि भाषा में सबसे ज्यादा ताकत होती है इसी से हम एक–दूसरे तक पहुँच सकते हैं।

राजभाषा नियम 1976 के नियम 5 के अनुसार हिंदी में, प्राप्त पत्रों का उत्तर हिंदी में ही दिया जाना आवश्यक है।

नरेंद्र मोदी (प्रधानमंत्री)

संस्थान में राजभाषा कार्यान्वयन संबंधी गतिविधियां

जे. पी. मीना

केन्द्रीय भेड़ एवं ऊन अनुसंधान संस्थान, अविकानगर में हिंदी सप्ताह शुभारंभ समारोह का आयोजन 16 सितम्बर 2022 को आयोजित किया गया। कार्यक्रम की अध्यक्षता संस्थान के निदेशक डॉ. अरूण कुमार तोमर ने की। कार्यक्रम में मुख्य अतिथि के रूप में डॉ. अर्जवा शर्मा, पूर्व निदेशक, एन.वी.ए.जी.आर करनाल, पी.डी.सी.आर. मेरठ एवं विशिष्ट अतिथि डॉ विनीत भसीन, पूर्व प्रधान वैज्ञानिक, परिषद, नई दिल्ली उपस्थित रहे। इस अवसर पर डॉ. अर्जवा शर्मा ने संस्थान के निदेशक और हिंदी के प्रवल समर्थक संस्थान के समस्त अधिकारियों/कर्मचारियों को बधाई देते हुये कहा कि किसी भी व्यक्ति को बोलने और लिखने की अभिव्यक्ति होती है जिसके माध्यम से वह अपनी बात अपनी भाषा में समझा सकता है। आज विश्व में नजर डाले तो कई भाषाएं जैसे मंदारिन, अरवियन, पार्शियन और अन्य भाषाएं बोली जाती है। लेकिन विश्व में अंग्रेजी, मंदारिन और हिंदी भाषा सबसे अधिक बोली जाती है। मेरा संस्थान के सभी अधिकारियों/कर्मचारियों से बधाई देते हुये अनुरोध है कि हिंदी का प्रयोग ना केवल सप्ताह या वर्ष के लिये प्रयोग करे बल्कि जन्म जन्मांतर हिंदी को अधिकाधिक प्रयोग करते हुये हिंदी का झंडा ऊँचा करते रहे। इसी क्रम में विशिष्ट अतिथि महोदय ने कहा कि भारत सरकार के द्वारा हिंदी प्रोत्साहन के लिये चलाई जा रही योजनाओं का लाभ इलेक्ट्रॉनिक माध्यमों का प्रयोग करते हुये निरंतर लेते रहना चाहिए। इस अवसर पर संस्थान के निदेशक डॉ. अरूण कुमार तोमर ने कहा कि हिन्दी में वैज्ञानिक साहित्य सृजन एवं उपयोग किये जाने की आवश्यकता है। हम सभी को हिंदी को बढ़ाने में सहयोग करना चाहिए ताकि भेड़ों के ऊपर हुये अनुसंधान तकनीकों को हिंदी में अधिक से अधिक बढ़ाया जा सके। यदि तकनीकी ज्ञान हिंदी में उपलब्ध नहीं है तो उसका मुख्य कारण आम आदमी ही है। श्री जे0पी0 मीना, प्रभारी राजभाषा ने हिन्दी सप्ताह के दौरान आयोजित कार्यक्रम के बारे में विस्तार से बताया जिसमें अंताक्षरी, हिंदी निबंध, आशुभाषण, हिंदी शोधपत्र, वाद–विवाद, कम्प्यूटर पर यूनिकोड़ में हिंदी टंकण प्रतियोगिता एवं स्वरचित कविता सहित कुल 7 प्रतियोगिताओं का आयोजन किया जायेगा। धन्यवाद ज्ञापन एवं भाकृअनुप के महानिदेशक महोदय की अधिक से अधिक सरकारी कार्य हिंदी में करने की अपील का पाठन श्री आई0बी0 कुमार, मुख्य प्रशासनिक अधिकारी द्वारा किया गया। कार्यक्रम का संचालन श्री पिल्लू मीना द्वारा किया गया।

केन्द्रीय भेड़ एवं ऊन अनुसंधान संस्थान, अविकानगर में हिन्दी सप्ताह समापन समारोह का आयोजन 26 सितम्बर 2022 को आयोजित किया गया। कार्यक्रम की अध्यक्षता संस्थान के निदेशक डॉ. अरूण कुमार तोमर ने की। कार्यक्रम में विशिष्ट अतिथि के रूप में डॉ. वेद प्रकाश, वरिष्ठ वैज्ञानिक राष्ट्रीय उष्ट्र अनुसंधान केन्द्र, बीकानेर उपस्थित रहे। इस अवसर पर संस्थान के निदेशक डॉ. अरूण कुमार तोमर ने सभी भाषाओं का सम्मान करते हुये कहा कि हिन्दी एक सर्वमान्य एवं जन–जन की भाषा है। यह पूरे देश को जोड़े रखने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है। उन्होंने संस्थान के सभी वैज्ञानिकों/अधिकारियों/कर्मचारियों को कहां कि अपना समस्त दैनिक कार्य अधिकाधिक हिंदी में करें ताकि

राजभाषा विभाग की वार्षिक कार्यक्रम में दिये गये बिंदुओं का सही ढंग से संस्थान में कार्यान्वयन किया जा सके। इस अवसर पर विशिष्ट अतिथि ने कहा कि वैज्ञानिक लेखन को हिंदी भाषा के माध्यम से ही जनोपयोगी बनाया जा सकता है। प्रभारी राजभाषा, श्री जे0पी0 मीना ने हिन्दी सप्ताह के दौरान आयोजित कार्यक्रम के बारे में विस्तार से बताया जिसमें अंताक्षरी, हिंदी निबंध, आशुभाषण, हिंदी शोधपत्र एवं पोस्टर, वाद–विवाद, कम्प्यूटर पर यूनिकोड़ में टंकण एवं स्वरचित कविता सहित कुल 7 प्रतियोगिताओं का आयोजन किया गया। इस अवसर पर सप्ताह के दौरान आयोजित विभिन्न प्रतियोगिताओं के विजेताओं को प्रमाण–पत्र प्रदान किये गये। डॉ. राघवेन्द्र सिंह प्रभागाध्यक्ष, पशु शरीर क्रिया एवं जैव रसयान प्रभाग अपने विचार व्यक्त किये। धन्यवाद ज्ञापन श्री इंद्र भूषण कुमार, मुख्य प्रशासनिक अधिकारी द्वारा दिया गया। कार्यक्रम का संचालन श्री पिल्लू मीना द्वारा किया गया।

प्रतियोगिताओं में विजयी प्रतिभागियों को प्रथम 2000, द्वितीय 1500 एवं तृतीय 1100 रू की राशि एवं प्रमाण–पत्र दिया गया जिनके नाम निम्न प्रकार है।

दिनांक : 16.09.2022 को आयोजित अंताक्षरी हिंदी प्रतियोगिता ।

प्रथम पुरस्कार	द्वितीय पुरस्कार	तृतीय पुरस्कार
श्री चन्द्र प्रकाश टेलर	श्री नेहरू लाल मीना	श्री प्रदीप कुल्हरी

(2) दिनांक : 17.09.2022 को आयोजित हिंदी निबंध प्रतियोगिता ।

प्रथम पुरस्कार	द्वितीय पुरस्कार	तृतीय पुरस्कार
श्री महेन्द्र कुमार शर्मा	डॉ. अरविन्द सोनी	श्री पप्पू मीना
		श्री ललित कुमार सोनी (SRF)

(3) दिनांक : 19.09.2022 को आयोजित आशुभाषण प्रतियोगिता ।

प्रथम पुरस्कार	द्वितीय पुरस्कार	तृतीय पुरस्कार
डॉ. लीला राम गुर्जर	डॉ. अमर सिंह मीना	श्री चन्द्र प्रकाश टेलर

(4) दिनांक : 20.09.2022 को आयोजित हिंदी शोधपत्र एवं पोस्टर प्रदर्शन प्रतियोगिता ।

प्रथम पुरस्कार	द्वितीय पुरस्कार	तृतीय पुरस्कार
राजीव कुमार, अमर सिंह मीना, सी.पी. स्वर्णकार, एस.एस. मिश्रा एवं अरूण कुमार	रंगलाल मीना, बनवारी लाल, सरोबना सरकार एवं सुरेश चंद शर्मा	रंगलाल मीना एवं दिनेश कुमार यादव
		पवन कुमार माहौर

(5) दिनांक : 21.09.2022 को आयोजित वाद–विवाद प्रतियोगिता (पक्ष में)।

प्रथम पुरस्कार	द्वितीय पुरस्कार	तृतीय पुरस्कार
डॉ. लीला राम गुर्जर	श्री भीम सिंह	श्री सूर्य प्रकाश शर्मा

दिनांक : 21.09.2022 को आयोजित वाद–विवाद प्रतियोगिता (विपक्ष में)।

प्रथम पुरस्कार	द्वितीय पुरस्कार
श्री असरार हुसैन (YP)	श्री पिल्लू मीना

(6) दिनांक : 22.09.2022 को आयोजित कम्प्यूटर पर यूनिकोड़ में टंकण प्रतियोगिता।

प्रथम पुरस्कार	द्वितीय पुरस्कार	तृतीय पुरस्कार
श्री संजय शर्मा	श्री रमण लाल कलसुआ	श्रीमती रितेश कुमारी

(7) दिनांक : 26.09.2022 को आयोजित हिंदी स्वरचित कविता प्रतियोगिता ।

प्रथम पुरस्कार	द्वितीय पुरस्कार	तृतीय पुरस्कार
श्री पवन कुमार माहौर	श्री पिल्लू मीना	श्री रामप्रसाद जाट

मरू क्षेत्रीय परिसर, बीकानेर

हिन्दी सप्ताह का उदघाटन समारोह दिनांक 14.09.2022 को विधिवत रुप से किया गया जिसमें मुख्य अतिथि डॉ जितेन्द्र सिंह मेहता, अधिष्ठाता सी.वी.ए.एस., बीकानेर, विशिष्ठ अतिथि, डॉ धर्मेन्द्र यादव, अधिष्ठाता, बीकानेर तकनीकी विश्वविद्यालय, डॉ अजय जोशी, सेवानिवृत प्रोफेसर ने शिरकत की। सभी ने हिन्दी राजभाषा के प्रचार–प्रसार में अपने विचार रखें। दिनांक 21.09.2022 को भा.कृ.अ.प.–केन्द्रीय भेड़ एवं ऊन अनुसंधान संस्थान मरू क्षेत्रीय परिसर, बीछवाल औद्योगिक क्षेत्र, बीकानेर–राजस्थान हिन्दी सप्ताह का समापन समारोह मनाया गया। जिसमे मुख्य अतिथि

डॉ नीरज के पवन ,संभागीय आयुक्त, बीकानेर ने मुख्य अतिथि के रुप में शिरकत की। डॉ सुमंत व्यास, प्रधान वैज्ञानिक राष्ट्रीय अनुसंधान केन्द्र, बीकानेर, विशिष्ठ अतिथि के रुप मे उपस्थित रहे। मरू क्षेत्रीय परिसर की प्रभागाध्यक्षा, डॉ निर्मला सैनी ने स्वागत भाषण के साथ–साथ हिंदी सप्ताह में आयोजित हुए विभिन्न कार्यक्रमों की जानकारी के साथ संस्थान की अनुसंधान गतिविधियों के बारे में भी अवगत कराया। डॉ. व्यास ने दैनिक कार्यो के साथ–साथ कार्यालयों में भी हिन्दी की उपयोगिता के महत्व पर प्रकाश डाला। मुख्य अतिथि, डॉ नीरज के पवन ने हिन्दी के समृद्ध साहित्य पर प्रकाश डालते हुए हिन्दी का अन्य भाषाओं में समावेश होने पर जोर दिया। इसके साथ ही मुख्य अतिथि ने संस्थान के कर्मचारीगणों को हिन्दी सप्ताह के दौरान हुई विभिन्न प्रतियोगिताओं के विजेताओं को पुरुस्कार भी वितरित किए। कार्यक्रम का संचालन डॉ अशोक कुमार, वैज्ञानिक एवं हिन्दी अधिकारी ने किया। अन्त में धन्यवाद ज्ञापन डॉ आशीष चौपडा, वरिष्ठ वैज्ञानिक ने दिया। कार्यक्रम के अन्त में पौधा रोपण कर पर्यावरण संरक्षण का संदेश दिया गया।

उत्तरी शीतोष्ण क्षेत्रीय केंद्र गड़सा

भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद नई दिल्ली के अंतर्गत केन्द्रीय भेड़ एवं ऊन अनुसंधान संस्थान के उत्तरी शीतोष्ण क्षेत्रीय केन्द्र गड़सा द्वारा 14.09.2022 से 28.09.2022 तक हिन्दी पखवाड़े का समापन समारोह माँ सरस्वती के समक्ष दीप प्रज्वलन कर किया गया। इस अवसर पर केंद्र के अध्यक्ष एवं प्राचार्य वैज्ञानिक डॉ० ओम हरी चतुर्वेदी ने कहा कि हमारी पहचान हमारी संस्कृति, संस्कार एवं भाषा से की जाती है। उन्होने इन्हें सुदृढ़ बनाए रखने के लिए आहवाहन किया। हिन्दी पखवाड़े के दौरान विभिन्न प्रतियोगिताएं जैसे प्रशासनिक एवं तकनीकी शब्दावली, श्रुतलेख, हिन्दी निबंध लेखन, अंताक्षरी प्रतियोगिता, प्रश्न मंच प्रतियोगिता इत्यादि आयोजित की गईं। श्रुतिलेख प्रतियोगिता में श्री मनोज कुमार शर्मा ने प्रथम, श्री रजत चौधरी ने द्वितीय एवं श्री बेली राम ने तृतीय स्थान प्राप्त किया। हिन्दी निबंध

लेखन प्रतियोगिता में डॉ. (श्रीमती) रजनी चौधरी ने प्रथम, श्री हरी कृष्ण ने द्वितीय एवं श्री रजत चौधरी ने तृतीय स्थान प्राप्त किया। प्रशासनिक एवं तकनीकी शब्दावली में डॉ. (श्रीमती) रजनी चौधरी ने प्रथम, श्री मनोज कुमार शर्मा ने द्वितीय एवं श्री बेली राम ने तृतीय स्थान किया । अंताक्षरी प्रतियोगिता में दल–1 (श्री रजत चौधरी तथा श्री मूल चंद) ने प्रथम स्थान, दल–2 (श्री मनोज कुमार शर्मा तथा राजेंद्र कुमार) ने द्वितीय एवं दल–3 (डॉ. (श्रीमती) रजनी चौधरी तथा श्री सुभाष चंद) ने तृतीय प्राप्त किया। केंद्र के अध्यक्ष महोदय ने विजेताओं को पुरस्कृत किया। इस कार्यक्रम में केंद्र के सभी वैज्ञानिकों, अधिकारियों एवं कर्मचारियों ने भाग लिया। डॉ. (श्रीमती) रजनी चौधरी ने सभी आगंतुकों का धन्यवाद ज्ञापित किया।

दक्षिण क्षेत्रीय अनुसंधान केन्द्र, मन्नवनूर

केन्द्रीय भेड़ एवं ऊन अनुसंधान संस्थान, अविकानगर के दक्षिण क्षेत्रीय अनुसंधान केन्द्र, मन्नवनूर पर हिंदी सप्ताह दिनांक 14–23 सितम्बर 2022 तक आयोजित किया गया। प्रतियोगिताएं सरकारी उच्च माध्यमिक विद्यालय एवं पंजाब नेशनल बैंक के सहयोग में आयोजित की गयीं। हिंदी सप्ताह के रूप में दिनांक 20–09–2022 को सरकारी उच्च माध्यमिक विद्यालय में हिंदी मास का आयोजन किया गया था जिसमें लगभग 100 विद्यार्थी एवं विद्यालय अध्यापक/स्टॉफ ने भाग लिया। प्रतियोगिताएं विद्यालय की प्रधानाध्यापिका श्रीमती पांडीयांमल एवं एस आर आर सी के स्टॉफ की उपस्थिति में आयोजित की गयीं थी। डॉ. पी के थीरूमुरूगन प्रभारी एस आर आर सी मन्नवनूर ने स्कूल के छात्रों को हिंदी भाषा की स्थानीय राष्ट्रीय एवं वैश्विकीय स्तर को जानने की उपयोगिता के बारे में विस्तृत रूप से जानकारी प्रदान की। डॉ. जी नागराजन, डॉ. जगवीरा पांडीयन एवं डॉ. पचयप्पन सहित अन्य कर्मचारियों ने अखिल भारतीय स्तर पर हिंदी का महत्व छात्रों को समझाया। विभिन्न प्रतियोगिताएं जैसे, क्विज, भाषण एवं प्रश्नोत्तरी आदि आयोजित की गई थी एवं उत्कृष्ट छात्रों को हिंदी भाषा जागरूकता के दौरान प्रशंसा पुरस्कार दिये गये। इसी क्रम में अगला कार्यक्रम हिंदी जागरूकता दिनांक 21–09–2022 को एस आर आर सी मन्नवनूर के प्रक्षेत्र परिसर में आयोजित किया गया था। जिसमें एस आर आर सी के नियमित एवं संविदाकर्मियों ने भाग लिया। यह कार्यक्रम पंजाब नेशनल बैंक के प्रबंधक श्री सतीश की उपस्थिति में मुख्य अतिथि के रूप में आयोजित किया गया था। इस अवसर पर मुख्य अतिथि ने हिंदी भाषा के महत्व के बारे में जानकारी दी और आयोजित क्विज प्रतियोगिता में मुख्य अतिथि ने विजेताओं को पुरस्कार प्रदान किये।

'' हिंदी में मसौदा लेखन''
विषय पर राजभाषा कार्यशाला का आयोजन

केंद्रीय भेड़ एवं ऊन अनुसंधान संस्थान, अविकानगर में दिनांक 19.12.2022 को '' हिंदी में मसौदा लेखन'' विषय पर राजभाषा कार्यशाला का आयोजन किया गया। इस कार्यशाला में संस्थान के मुख्य प्रशासनिक अधिकारी, श्री आई बी कुमार द्वारा संस्थान के अधिकारियों/कर्मचारियों के लिए '' हिंदी मसौदा एवं टिप्पण लेखन'' विषय पर विस्तृत व्याख्यान दिया गया। उन्होंने मसौदा एवं टिप्पण लेखन सरकारी काम–काज में किस प्रकार किया जाता है को एक विजुअल प्रजेंटेशन के द्वारा बताया। कार्यशाला में मसौदा तैयार करते समय किन बातों पर ध्यान देना चाहिए के बारे में बताया गया। कार्यालयीन पत्राचार में स्मरण पत्र, पावती, अंतरिम उत्तर, पृष्ठांकन, कार्यालय ज्ञापन, अर्द्ध–सरकारी पत्र, कार्यालय आदेश, अधिसूचना, संकल्प परिपत्र, प्रेस–विज्ञप्ति एवं प्रेस–टिप्पणी में अंतर विज्ञापन और निविदा आदि पर अपने विचार प्रस्तुत किये। इस कार्यशाला में संस्थान के लगभग 60 से अधिक अधिकारियों/कर्मचारियों ने अपनी सहभागिता निभाई। साथ ही सस्थान के बाहरी तीनों उप–केन्द्र गड़सा, बीकानेर एवं मन्नवनूर के अधिकारियों/कर्मचारियों ने अपनी प्रस्तुति वीडियों कान्फ्रेंस के जरिये दी। इस अवसर पर कार्यशाला की अध्यक्षता करते हुये निदेशक महोदय ने मुख्य प्रशासनिक अधिकारी के प्रजेंटेशन की प्रशंषा करते हुये कहा कि इस प्रकार की हिंदी कार्यशालाएं विभिन्न कार्यालयीन विषयों पर निरंतर हर तिमाही में करते रहना चाहिए जिससे राजभाषा के वार्षिक कार्यक्रम अनुसार निर्धारित लक्ष्यानुसार कार्यशालाएं आयोजित की जा सके। इस अवसर पर सभी उपस्थित अधिकारियों/कर्मचारियों का श्री जे0 पी0 मीना, प्रभारी राजभाषा द्वारा धन्यवाद किया गया।

माननीय संसदीय राजभाषा समिति द्वारा केन्द्रीय भेड़ एवं ऊन अनुसंधान संस्थान, अविकानगर के राजभाषा कार्यों का निरीक्षण

दिनांक 23.09.2022 को विज्ञान भवन, नई दिल्ली में संसदीय राजभाषा समिति की दूसरी उपसमिति के उपाध्यक्ष एवं संसद सदस्य (लोक सभा) श्री भर्तृहरी महताब, संगीता यादव, संसद सदस्य (राज्य सभा), रंजनबेन भट्ट, संसद सदस्य (लोक सभा) एवं मनोज तिवारी, संसद सदस्य (लोक सभा) की अध्यक्षता में भाकृअनुप–केंद्रीय भेड़ एवं ऊन अनुसंधान संस्थान, अविकानगर के कार्यालय में संघ के राजकीय प्रयोजनों के लिये हिन्दी के प्रयोग में की गई प्रगति

का निरीक्षण किया। संस्थान के निदेशक, डॉ. अरूण कुमार तोमर, मुख्य प्रशासनिक अधिकारी, श्री इंद्र भूषण कुमार, प्रशासनिक अधिकारी, श्री भीम सिंह, प्रभारी राजभाषा, श्री जे0पी0 मीना एवं परिषद से डॉ. रजनीश राना, प्रधान वैज्ञानिक, श्री रामदयाल शर्मा, उप निदेशक (राजभाषा) एवं श्री ओम प्रकाश जोशी, सहायक मुख्य तकनीकी अधिकारी (राजभाषा) ने संस्थान एवं परिषद में हो रहे कार्यों के विषय में माननीय संसदीय राजभाषा समिति को अवगत कराया। संस्थान के निदेशक डॉ. अरूण कुमार तोमर ने संस्थान में निर्मित भेड़ उत्पादों को स्वागत स्वरूप समिति को भेंट किया। समिति ने संस्थान में हिंदी में हो रहे कार्यों के साथ–साथ संस्थान में निर्मित उत्पादों की भी सराहना की। इसके अतिरिक्त समिति ने संस्थान के निदेशक महोदय से अपेक्षा की है कि संसदीय राजभाषा समिति के प्रतिवेदनों पर जारी महामहिम राष्ट्रपति जी के आदेशों का अनुपालन करेंगे और राजभाषा विभाग द्वारा जारी वार्षिक कार्यक्रम में दिये गये लक्ष्यों को शीघ्र प्राप्त करेंगे तथा कार्यालय की आगामी राजभाषा कार्यान्वयन समिति की बैठक में इसका मूल्यांकन कर समिति सचिवालय को अविलंब सूचित करेंगे एवं दिये गये आश्वासनों को पूरा कर इसकी अनुपालना रिपोर्ट छ महिने के भीतर परिषद के माध्यम से संसदीय राजभाषा समिति सचिवालय को भेजना सुनिश्चित करेंगे।

टिप्पणियाँ

हर कदम, हर डगर
किसानों का हमसफर
भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद
Agrisearch with a human touch

आज़ादी का अमृत महोत्सव

स्वच्छ भारत
एक कदम स्वच्छता की ओर

भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद

केन्द्रीय भेड़ एवं ऊन अनुसंधान संस्थान, अविकानगर

अविकानगर - 304501 (राजस्थान)

दूरभाष: +911437-220162 फैक्स : + 911437-220163

ई-मेल : cswriavikanagar@yahoo.com वेबसाईट : http://www.cswri.res.in

भाकृअनुप
ICAR

के.भे.ऊ.अ.सं. अविकानगर
CSWRI AVIKANAGAR